सप्तमोऽङ्कः जनवरी-जून 2018 ISSN : 2454-1230

शिक्षाप्रियदर्शिनी

(अन्ताराष्ट्रियमूल्याङ्किता बहुभाषीषाण्मासिकशोधपत्त्रिका)

प्रधानसम्पादकः

प्रो. चाँदकिरणसलूजा

निदेशकः, संस्कृतसंवर्धनप्रतिष्ठानम्, नवदेहली

प्रबन्धसम्पादकः

श्रीलक्ष्मीनारायणशर्मा

संस्कृतसंस्कृतिविकाससंस्थानम्

बाड़ी, धौलपुरम्, राजस्थान-328021

अणु-सङ्केतः (Email) : shikshapriyadarshini777@gmail.com

अन्तर्जालसङ्केतः (Website) : www.ssvsansthan.in

सप्तमोऽङ्कः जनवरी-जून 2018 ISSN : 2454-1230

शिक्षाप्रियदर्शिनी

अन्ताराष्ट्रियमूल्याङ्किता बहुभाषीषाण्मासिकशोधपत्त्रिका

SHIKSHA- PRIYADARSHINI

(An International Evaluated Multi-Lingual Half-Yearly Research Journal)

प्रधानसम्पादकः

प्रो. चाँदकिरणसलूजा

निदेशकः, संस्कृतसंवर्धनप्रतिष्ठानम्, नवदेहली

सम्पादकाः

डॉ. सुनीलकुमारशर्मा डॉ. आरतीशर्मा

डॉ. परमेशकुमारशर्मा डॉ.दिनेशकुमारयादवः

सहसम्पादकाः

डॉ. सचिनकुमारः खुशबूकुमारी प्रज्ञा

प्रबन्धसम्पादकः

श्रीलक्ष्मीनारायणशर्मा

संस्कृतसंस्कृतिविकाससंस्थानम्

बाड़ी, धौलपुरम्, राजस्थान – 328021

विषयानुक्रमणिका

संस्कृतभाषान्वितानि शोधपत्राणि (1-82)

क्र.सं.	लेखकस्य नाम	विवरणम्	पृ.सं.
1.	प्रो. ई. एम्. राजन्	काव्यप्रकाशदिशा वाच्यवाचकव्यतिरिक्तस्य व्यञ्जकस्य स्थापनम्	1-7
2.	प्रो. के. भारतभूषन्	अध्यापकशिक्षायां व्यूहरचनाः	8-12
3.	प्रो. महानन्दझाः	अधिमिथिलं न्यायविद्या, विद्यावतारो धर्मदत्तः	13-17
4.	डॉ. आरतीशर्मा	उत्तरनैषधीयचरितमहाकाव्यस्य वैशिष्ट्यम्	18-21
5.	डॉ. सुनीलकुमारशर्मा	सीताहरणनाटकदिशा नायकस्य रामस्य चरित्रचित्रणम्	22-26
6.	डॉ. नवीनकुमारमिश्र	लृकारोपदेशः कर्त्तव्यः उत नेति विचारः	27-32
7.	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	पुराणेष्वलङ्कारसमीक्षा	33-37
8.	डॉ. ओमनारायणमिश्रः	शिक्षायां न्यादर्शचयनस्यावश्यकता महत्त्वञ्च	38-43
9.	डॉ. मनीषजुगरानः	मनुस्मृतौ गुरुशिष्ययोः अवधारणा	44-49
10.	डॉ. सचिनकुमारः	समावेशीशिक्षायाः समस्याः सम्भावनाश्च	50-55
11.	डॉ. अनिलानन्दः	शांकरवेदान्ते अज्ञानलक्षणविमर्शः	56-61
12.	चेमटे सुरेशः	ध्वनिविज्ञानदृष्ट्या मराठीभाषाध्वनिसंख्याविमर्शः	62-66
13.	विद्या	शाकटायनपाणिनीयव्याकरणानुसारेण तद्धितप्रत्ययविमर्शः	67-71
14.	विनयकान्तः	न्याय-वैशेषिकदर्शनयोः मनसः अवधारणा	72-75
15.	प्रज्ञा	पूर्वत्रासिद्धम् इत्यधिकारसूत्रस्य लघुशब्देन्दुशेखरसिद्धान्त-रत्नाकरदिशा तुलनात्मकाध्ययनम्	76-82

हिन्दीभाषान्वितानि शोधपत्राणि (83-113)

1.	प्रो. चान्दकिरणसलूजा	भाषानीति : शिक्षा के सार्थक्य का आधार	83-86
2.	डॉ. लीनातिवारी	लैंगिक समानता व महिला सशक्तीकरण में सूचना संचार तकनीकी	87-92
3.	डॉ. सुभाषचन्द्रमिश्रः	ग्रह-गोचर फल विचार	93-98
4.	डॉ. श्रीमती गीतादुबे	श्रुति परम्परा में जलविज्ञान विचार	99-103
5.	डॉ. दिनेशयादवः	योग से आतंकवाद पर नियन्त्रण	104-107
6.	डॉ. महेश प्रसाद जैन	संस्कृत शिक्षण पर प्रमाप का विकास तथा परम्परागत विधि से तुलना	108-113

श्रुति परम्परा में जलविज्ञान विचार

डॉ. (श्रीमती) गीता दुबे *

वेद संसार का प्राचीनतम वाङ्मय है। विद्वानों का मत है कि, वेद अपौरुषेय हैं। साक्षात्कृतधर्मी ऋषियों ने सृष्टि सम्बन्धी जिस ज्ञान-विज्ञान की अनुभूति अपने अन्तस् में की थी उसी की अभिव्यक्ति वेद है। 'सर्व वेदात् प्रसिध्यति' मनु के अनुसार वेद से ही सब ज्ञान सब विज्ञान प्रमाणित है।

भारतीय संस्कृति में वेद सनातन वर्णाश्रम धर्म के मूल और सबसे प्राचीन ग्रन्थ है जो ईश्वर की वाणी है। ये विश्व के उन प्राचीनतम् ग्रन्थों में है जिनके पवित्र मन्त्र आज भी बड़ी आस्था एवं श्रद्धा से पढ़े सुने जाते हैं। वेद ईश्वर द्वारा ऋषियों को सुनाये गए ज्ञान पर आधरित है जिसके कारण वेद को श्रुति भी कहा गया है। वेद का अर्थ-ज्ञान होता है। कुल चार वेद हैं - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। वेद प्राचीन ज्ञान विज्ञान का अक्षय भण्डार है। इसमें मानव जीवन की हर समस्या का समाधान प्रस्तुत है। वेद में ब्रह्म, देवता, ब्रह्माण्ड, ज्योतिष, गणित, रसायन, औषधि, प्रकृति, खगोल, भूगोल, इतिहास, रीति-रिवाज आदि विषयों से सम्बन्धित ज्ञान समाहित है। वैदिक वाङ्मय में ऐसे पर्याप्त संकेत हैं, जिससे प्रतीत होता है कि, उस समय विज्ञान सम्बन्धी यथेष्ट ज्ञान उपलब्ध था। वेद में सृष्टि उत्पत्ति और विनाश, आकाश, ग्रहमण्डल, वायु, अग्नि (ताप), विज्ञान, जल, पृथ्वी, भौतिक विज्ञान, अस्त्रशस्त्र एवं सैन्य विज्ञान, मंत्रविज्ञान, गणित विज्ञान, रहन-सहन में परिलक्षित विज्ञान के दर्शन होते हैं।

मानव जीवन एवं कला संस्कृति का मूल स्रोत जल ही है। पृथ्वी पर विविध रुपों में जल है ही आकाश में मेघ इन्द्रधनुष सतरंगी छटा फैलाए हैं। तत्व वेत्ताओं ने पंचतत्वों से निर्मित मानव शरीर में जल को भी एक तत्व माना है। मानव शरीर का 2/3 भाग एवं उसके भार का 4/5 भाग पानी होता है। पृथ्वी के 3/4 भाग में पानी है। भारतीय संस्कृति में जल को हर प्रकार के पवित्रता एवं मंगल का मूल कहा गया है। ऋषियों ने जीवन एवं संसार में जल की बहुलता तथा रमणीयता का आस्वादन किया, तत्पश्चात् भाव-विभोर होकर जल में देवत्व का दर्शन किया।

जल सम्बन्धी देवताओं के सन्दर्भ में पर्जन्य, ऋग्वेद में बहुत सम्मान एवं गर्व के साथ व्यक्त हुआ है। अत्रि ऋषि का 'पर्जन्यसूक्त' (ऋ. 5.83) मेघ सम्बन्धी वैदिक कविताओं में सर्वश्रेष्ठ है। सृष्टि निर्माण होने पर सबसे पहले आकाश बना था। आकाश से वायु एवं वायु से जल बना था। बाद में

जल ने पृथ्वी को बनाया। आज विज्ञान कहता है - गैस हाइड्रोजन के 2 मालिक्यूल तथा आक्सीजन गैस का एक मालिक्यूल जब मिलता है तब वह जल में बदल जाता है। स्व. प. गुरुदत्त एम. ए. ने एक मन्त्र का अर्थ प्राप्त करके यह ज्ञान वेद में विद्यमान बताया है –

'मित्रं हुवे पूतदक्षं वरूणं च रिशादसम्। धियं घृताचीम साधन्ता'। (ऋ. 1.2.7)

वैदिक वाङ्मय में मित्र और वरूण शब्द आक्सीजन एवं हाइड्रोजन के लिए प्रयुक्त हैं। ये गैसे अन्तरिक्ष और द्यु में अधिक मात्रा में विद्यमान हैं। यज्ञ द्वारा जहाँ मेघ न हो वहाँ भी वर्षा कराना इन दोनों गैसों के समीकरण से सम्भव है - अवर्षीवर्षममु षू गृभाय। वृष्टिकाम वसिष्ठ सप्तमण्डल के पर्जन्य सूक्तों में अनेक वैज्ञानिक तथ्य भी बताये हैं। पानी का गुण नीचे बहना होता है। इस सन्दर्भ में अथर्ववेद में उल्लिखित है – 'यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमाद चरन्ति'। पृथ्वी पर जल गतिशील सम धरातल बनाते हुए दिन-रात बहते रहते हैं। वैशेषिक दर्शन में कहा गया है - 'मोदनात् पीडनात् संयुक्त संयोगच्च' ढकेलने और दबाने से पानी ऊपर चढ़ता है। यही पहले का सिद्धान्त आज काम में लाया जा रहा है इसी के आधार पर अब शहरों एवं गावों में जल कल निर्मित किया गया है।

जल से लाभ -

जल से स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी लाभ मिलता है। संध्या और यज्ञ दोनों में आचमन एवं अंग प्रक्षालन से लाभ होता है। आचमन से कफ निवृत्ति कही गयी है एवं प्रक्षालन से अंग की सुस्ती दूर होती है। ताम्बे के बर्तन में रखा जल आंतो के रोग को दूर करता है। यह वैज्ञानिक भी मानते हैं। अथर्ववेद में सूर्य के धूप में जल सेवन को कल्याणकारी बताया है -

देवस्य सवितुः सवे कर्म कृण्वन्तु मानुषाः।
शं नो भवन्त्वप ओषधीः शिवाः ।। (अथर्ववेद 6/23/3)

इसी प्रकार सोते समय हाथ पैर धोकर सोने से स्वप्नदोष नहीं होता एवं नींद अच्छी आती है। प्रातः काल खाली पेट पानी पीने से पेट विकार दूर होता है। मुंह में पानी लेकर आँखो में छींटा मारने से ज्योति बढ़ती है। ये सभी बातें परीक्षित हैं। चाणक्यनीति में कहा गया है- 'अजीर्णे भेषजं वारि जीर्णे वारि बलप्रदम्'। वेदों की एक ऋचा में जल द्वारा आखों की चिकित्सा के विषय में बताया है - **'आपो हिष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे (ऋ. 10/9/1)।**

जलयान वर्णन -

वेद में जलयान का वर्णन भी मिलता है। ऋग्वेदों में सैकडों चप्पुओं वाली नौका चलाने का निर्देश दिया गया है। निम्नलिखित मन्त्र में वायुयान एवं पनडुब्बियों का वर्णन आया है -

"मास्ते पूषन्नावोः अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तरिक्षे चरन्ति।
ताभिर्यासि दूत्यां सूर्यस्य कामेन कृतश्रव् इच्छमानः" ।। (ऋ. 6/58/3)

अर्थात् हे पोषण करनेवाले। जो तेरी नौकाएँ अन्दर समुद्र में और अन्तरिक्ष में चलती हैं। साथ ही ऋग्वेद में समुद्र की लहरों पर चलनेवाली कार का भी निर्देश है -

परिप्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्माबधिश्रितः। कारं बिभ्रत पुरस्पृहम् (9/14/1)।

जलस्रोत सम्बन्धी ज्ञान -

वेद में जलस्रोत से सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होता है। वेदों में पृथ्वी के नीचे दीमक के टीलों से जल स्रोत खोज निकालने का ज्ञान प्राप्त होता है। अथर्ववेद के दो मन्त्रों में यह संकेत है कि दीमक जमीन में पानी के कुण्डों में से जल पृथ्वी के ऊपर अपने बनाए टीलों तक ले आती है -

"उपजीका उद्धरन्ति समुद्रादधि भेषजम्।
तदास्त्रावस्य भेषजं तदु रोगमशीशमत्"।। (2/3/4)
"यद् वो देवा उपजीका असिंचन् धन्वन्युदकम्।
तेन देवप्रसूतेनेदं दूषयता विषम" ।। (6/100/2)

जल सम्बन्धी ऐसा वर्णन तैत्तरीय आरण्यक (5/14) एवं वराहमिहिर कृत बृहत्संहिता में भी दीमक द्वारा जल स्रोतों के पता लगाने की बात लिखी गई है। वैज्ञानिकों ने भी इस बात की पुष्टि की है। पृथ्वी के गर्भ में स्थित जल स्रोत ढूढ़ने की अन्य विधियाँ भी भारत वर्ष में विख्यात है। जिसमें लकड़ी के टुकड़े लेकर चलने की बात कही गई है। गंगा जल पर काफी परीक्षण हुआ है एवं कीटाणु मुक्त होने की बात कही गई है।

वर्षा सम्बन्धी ज्ञान

वर्षा के सम्बन्ध में माना जाता है कि, यज्ञ से वर्षा होती है। वेद के राष्ट्रगान में कहा गया है - **'निकामे-निकामे नः पर्जन्यो अभिवर्षतु'**। यजुर्वेद में एक स्थान (1/16) में यज्ञ, वायु व सूर्य द्वारा

वृष्टि की वृद्धि की संभावना बतायी गई है। वैसे तो माना जाता है कि सूर्य के ताप से पृथ्वी का जल वाष्प बनकर उपर आ जाता है और वही घनीभूत वाष्प बादल बनकर वर्षा करता है। यज्ञ पद्धति में मानवीय प्रयत्न से जल प्राप्त किया जाता है। जिसमें यज्ञ प्रदत्त ताप वर्षा के माध्यम का काम करती है। जल स्रोत के विषय में यजुर्वेद में वर्णित है - **"पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् "।। (18/36)**

अर्थात् पय पृथिवी पर वनस्पतियों में अन्तरिक्ष में द्युलोक है। इन तीनों स्रोतों से यज्ञ द्वारा जल प्राप्त किया जा सकता है। जल को धारण की हुई वायु गन्धर्व कहलाती है। वायु से गिराए जाने की क्रिया से मेघ पृथिवी पर जल बरसाते हैं -

"मरुद्भिः प्रच्युता मेघा वर्षन्तु पृथिवीमनु"। (अथर्ववेद 4/15/17)

यज्ञ द्वारा अन्तरिक्ष से जल प्राप्ति के विषय में संकेत किया गया है। यज्ञ में साकल्य के जलने से वाष्पयुक्त धूम यज्ञवेदी के मध्यभाग से लम्बरूप में स्थित होता है। बार-बार दी गई आहुति से खनन क्रिया बढ़ती जाती है और यज्ञ का धुंआ आकाश में बोरिंग करता है। तप्त वायु उष्ण अवस्था में होकर ऊर्ध्व गतियुक्त होती है। जिससे एक वायुकूप बन जाता है। अन्तरिक्ष में यह गर्म वायु समीपस्थ जलों का शोषण करती जाती है। यज्ञ द्वारा प्रेरित वायु सूक्ष्म जलरस (सोम) का संग्रह करती जाता है -

"आ याहि सोम पीतये स्पार्हो देव नियुत्वता"। (यजु. 27/30)

यज्ञ द्वारा द्युलोक से जल प्राप्त किया जा सकता है। द्युलोक अन्तरिक्ष से ऊपर है। वहाँ जल नहीं है वहाँ मेघमार्ग भी नहीं है। किन्तु वहाँ पर हाइड्रोजन और आक्सीजन उपस्थित है जिससे जल का निर्माण होता है। यज्ञ द्वारा ऐसे बूंजसलेज द्युलोक में भेजे जाते हैं, जो जल बनाते है। असका संकेत यजुर्वेद (1/25) तथा सामवेद (मं. 1186) में हुआ है। यास्क ने सम्मोदन्ते अस्मिन् आपः जिसमें जल प्रसन्नता पूर्ण विचरण करे उसे उपरि समुद्र कहा है। पृथ्वी स्थित समुद्र को अधः समुद्र कहा है। वहाँ का जल सूक्ष्म रूप में (हाइड्रोजन और आक्सीजन) है। उसकी संज्ञा सोम है। यज्ञ द्वारा 'दिवो वृष्टिमेरय' (यजु. 14/8) इस सोम का पर्जन्य बनाया जा सकता है। द्यु के लिए नभोमण्डल शब्द भी प्रयुक्त हुआ है। मित्र वरुण जल के तत्व हैं। यज्ञ की आहुति द्युलोक में आकर इन्हें स्थापित करती है। साथ ही ऐसे शाकल्य भी ज्ञात हैं जो बादलों को दूर फेंककर अतिवृष्टि रोक दें। यज्ञ द्वारा बरसने वाले

जल का स्वयमेव शुद्धिकरण हो जाता है। दूषित जल शोधित करता है। यज्ञ धूम्र वाष्प के रोग वाले कीटाणुओं को नष्ट करता है। 'वसो पवित्रमसि शतधारं' मंत्राश में यही भाव स्थित है।

यजुर्वेद (2/25) में यज्ञ को विष्णु कहा है और यह द्युलोक में जाता है, अन्तरिक्ष एवं पृथ्वी पर जाता है, किन्तु यह सब विवरण कागज पर ही होता है। आज विज्ञान-परीक्षण का युग है और प्रसन्नता की बात है कि, आर्य समाज के विद्वान श्री वीरसेन वेदश्रमी महारानी पथ इन्दौर ने तीन परीक्षणों में यज्ञ से वर्षा करायी थी। किन्तु यह परीक्षण खर्चीला है स्वयं के बल पर नहीं किया जा सकता। एक परीक्षण पश्चिमी वैज्ञानिक पद्धति से जुलाई 1883 में किया गया था। पर सफल नहीं हुआ।

वैदिक यज्ञों द्वारा वृष्टि परीक्षण विषय पर सन् 1976 को भारत सरकार की इण्डियन कौंसिल आफ एग्रीकल्चरल रिसर्च की एक बैठक हुई जिसमें वर्षा पर कई बिन्दुओं पर विचार हुआ। किन्तु सन् 1977 की इमरजेन्सी व चुनाव आदि के कारण कुछ नहीं हो सका। इस प्रकार ऋग्वेदीय पर्जन्य सूक्तों में मेघ संरचना तथा जैविक प्रक्रिया में उनके सहयोग का वर्णन किया गया है। पर्जन्य देव इस अमृत मनुष्यमात्रा का शतवर्ष पर्यन्त संरक्षण और कल्याण करें यहीं वैदिक ऋषिकी प्रार्थना है –

"ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

सन्दर्भग्रन्थ -

1. ऋग्वेदसंहिता।
2. सामवेदसंहिता।
3. अथर्ववेदसंहिता।
4. यजुर्वेदसंहिता।
5. वैदिक वाङ्मय में विज्ञान - डा. रामेश्वर दयाल गुप्त।
6. वैदिक समाज, संस्कृति और विज्ञान - डा. प्रवेश सक्सेना।
7. वेद, यज्ञ और पर्यावरण - डा. सूर्यनारायण गौतम।
8. वेदों में विज्ञान - पद्मश्री डा. कपिलदेव द्विवेदी।
9. वेद मीमांसाः - स्वामी विद्यानन्द सरस्वती।

*सहायकाचार्या (सं), आधुनिकविभाग (हिन्दी), रा. सं. सं. क. जे. सोमैया संस्कृत विद्यापीठ, मुम्बई।

शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिकायाः सामान्यनियमाः

- शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिकायाः मुख्यसंरक्षक-संरक्षक-प्रधानसम्पादक-प्रबन्धसम्पादक-सम्पादक-समीक्षक-परामर्शकादिसमस्तपदानि अवैतनिकानि सन्ति।
- शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिका देश-विदेशस्थानां विद्यार्थिनां शोधार्थिनां शिक्षाविदां विभिन्नविषयविशेषज्ञानाञ्च शोधप्रक्रियाधारितानि गुणवत्तापरकज्ञानपूर्णानि शोधपत्राणि आमन्त्रयति।
- शोधपत्राणां प्रकाशनं सम्पादकस्य सम्पादकमण्डलस्य वा संस्तुत्याधारेण भवति, यत्र शोधसामग्र्याः समस्तमुत्तरदायित्त्वं लेखकस्यैव भविष्यति। सम्पादकमण्डलं लेखकस्य मतस्य समर्थनं न करोति। अत्र अवधेयमस्ति यत् कस्यापि धर्म-जाति-सम्प्रदायविशेषस्य विरोधे लिखितलेखाः स्वीकृताः न भविष्यन्ति।
- सम्पादकमण्डलं शोधपत्राणि किञ्चिद् परिवर्तनपूर्वकं प्रकाशयितुमधिकारि भविष्यति।
- सम्पादकेन सम्पादकमण्डलसदस्यैः समीक्षकैः वा अस्वीकृतलेखाः न प्रकाशयिष्यन्ते, विषयेऽस्मिन् तेषामेव निर्णयः अन्तिमः भविष्यति। अस्वीकृतलेखाः लेखकं प्रति न प्रेषयिष्यन्ते।
- शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिकायां प्रकाशितानां शोधपत्राणां देश-विदेशानां शोधसंस्थाभिः विश्वविद्यालयैश्च अस्वीकृतौ प्रकाशक-सम्पादक-सम्पादकमण्डल-मुद्रकादीनां किमपि उत्तरदायित्त्वं नास्ति।
- अग्रिमाङ्कप्रकाशनात्परं पूर्वतनाङ्कस्य सामग्री दुरुपयोगनिवारणाय नष्टा करिष्यते।
- शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिकया सम्बन्धितस्य कस्यापि विवादस्य कृते न्यायिकक्षेत्रं धौलपुरजनपद-बाड़ीतहसीलन्यायालयस्य निर्णयः मान्यश्च भविष्यति।
- शिक्षाप्रियदर्शिनी-शोधपत्रिकायां शोधपत्रप्रकाशनार्थं लेखकाः शोधप्रक्रियाधारितलेखान् 5-7 पृष्ठेषु (2000-3000 शब्देषु) संस्कृत-हिन्दीभाषयोः Unicode – Kokila अथवा Kruti Dev - 10 (Size 16) तथा आङ्ग्लभाषायाः Timse New Roman (Size 14) लिपिषु टङ्कणं विधाय सी.डी. (मुद्रितपत्रसहितं) अथवा ई-मेल माध्यमेन स्वकीय नाम-पत्रसङ्केत-चलदूरभाष-ईमेलसहितं प्रेषयेयुः।
- शोधपत्रे प्रायः १५० शब्दानां शोधसंक्षिप्तिका(Abstract) मुख्यशब्दाः(Keywords) सन्दर्भाः (Refferences) अन्ते सन्दर्भग्रन्थाश्च भवेयुः।
- सन्दर्भाः लेखकनाम-ग्रन्थनाम-व्याख्याकारनाम/टीकाकारनाम-प्रकाशकनाम-स्थल-वर्षसहितं पृष्ठसंख्यायुताः स्युः।

अणुसङ्केतः - shikshapriyadarshini777@gmail.com दू. सं. 8078622551, 8385945895

विद्यारश्मिः

ISSN-22776445

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

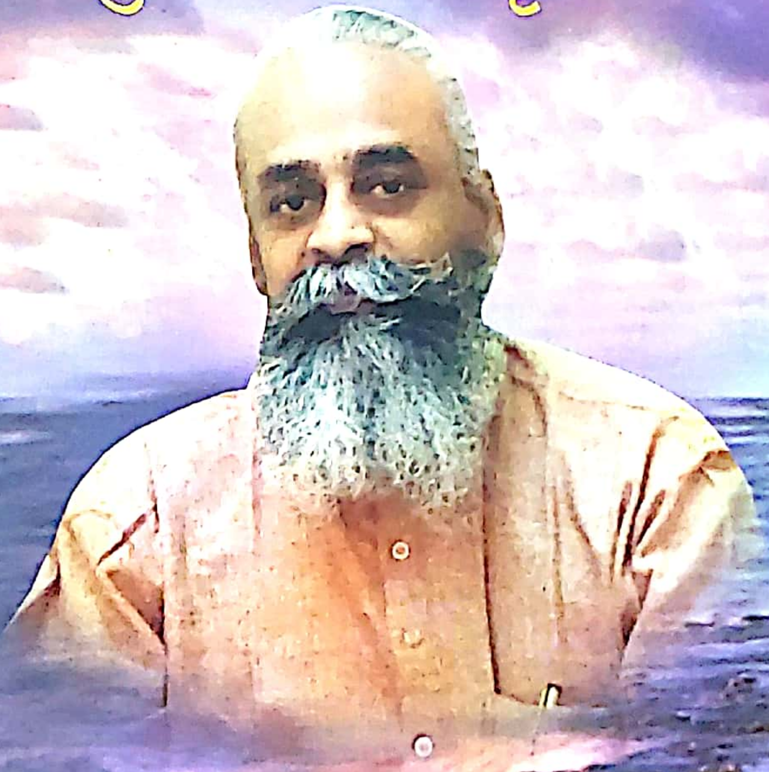

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with CamScanner

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः॥

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः   प्रो. ई. एम्. राजन्   प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः   डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी   डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with CamScanner

वेदान्तविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	Vedic Mahavakva	Prof. P. C. Muraleemadhavan	206
2	श्रीसुरेश्वराचार्याणामाभासवादः	डॉ. भगवानसामन्तरायः	212
3	आधुनिककाले भगवद्गीतायाः	डा. ए. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	216
4	संस्कृतवाङ्मये भक्तितत्त्वानि	डॉ. विनोद कुमार शर्मा	221

शिक्षाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	श्रीमहेन्द्रनाथदत्तानां शैक्षिकं चिन्तनम्	डा. एम्-जयकृष्णन्	227
2	भारोपीयभाषापरिवारः संस्कृतञ्च	डा. आरती शर्मा	232
3	संस्कृतशिक्षणे नवीनता	डॉ. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	238
4	श्रीमद्भागवते विश्वबन्धुत्वपोषकाणि	डा. परमेशकुमारशर्मा	241
5	संस्कृतिसंरक्षणे भाषाप्रयोगशालायाः	डॉ. प्रेमसिंहसिकरवारः	247
6	शिक्षायां मानसिकस्वास्थ्यम्	डा. कौशलेश शर्मा	257
7	उच्च शिक्षा में गुणवत्ताः समस्याएं एवं	डा. शुद्धात्मप्रकाश जैन	261
8	वैदिकशिक्षायाः स्वरूपं तद्वैशिष्ट्यानि	डा. देवदत्त सरोदे	269
9	वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायां	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी	282
10	भारतीयसन्दर्भमनुसृत्य	डा. सुनील कुमार शर्मा	290
11	संस्कृतभाषाधिगमे पठनकौशलम्	सचिनकुमारः	296

आधुनिकविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	मॉरीशस के हिन्दी उपन्यास सम्राटः	डॉ. गीता दूबे	304
2	A Comparative Study of the	Dr. Swargakumar Mishra	310
3	Impact of Globilization on	Dr. Kumar	319
4	Women Education in India	Dr. Pinki Malik	326
5	Culture in Chinua Achebe's	Dr. Shweta Sood	332
6	Gender And Environment	Dr. Suman Singh	338

Scanned with CamScanner

Culture in Chinua Achebe's *Things Fall Apart*

Dr. Shweta Sood
Contract Teacher
Department of English
K.J.Somaiya Sanskrit Vidyapeetham
Vidyavihar, Mumbai-77

One of the challenges of the fiction genre, and of the frequent criticism lodged against it, is the manner in which history, people and place are integrated into the narrative. Chinua Achebe in *Things Fall Apart* has depicted at great length the Igbo society in the 1880s before the arrival of White man in Nigeria. While Achebe's literary intentions in *Things Fall Apart* were probably noble, his achievement, in the eyes of many critics, falls short of the mark (Quayson 117). By presenting some beliefs, rituals, and characteristics of the community about which he writes, Achebe leaves out other important details about Igbo culture, providing the readers only a partial view and understanding of the tribe and its culture. Thus, the reader sees that although history and narrative can be complementary – since history itself is a narrative, and it is certainly not objective (Gikandi 3) – the relationship between the two also poses some specific problems for the writer as well as the reader of fiction.

Achebe wanted to write a novel to depict the African culture in an accurate manner. He did not like the "distorted portrayals of Africa in European novels," especially in Joyce Cory's Mister Johnson (*Things Fall Apart,* Literature *360).* As a child Achebe spoke the Ibo language, but he was raised in a Christian home (*Things Fall Apart,* Literature *360*). Because he did not participate in the native Ibo traditions, he "picked up here and there (on the Ibo ways). There was no research in the library" (*Things Fall Apart,* Literature *364*). Achebe used the knowledge he gained to "weave together history and fiction" (*Things Fall Apart,*Novels 263) into a novel that he believes accurately depict Ibo life before and after the arrival of the Christian Missionaries (Killam 19).

In the novel *Things Fall Apart*the society depicted is highly traditional and orthodox. In the traditional Igbo tribe, the government is democratic.

Scanned with CamScanner

Everybody has a chance to establish himself. One's father does not determine one's social position(*Things Fall Apart,*Novels 279). The society being a democratic is depicted well by the example of Okonkwo and Unoka. The son of a drunkard and idler Unoka who is known for being a failure and having many debts (Achebe 5), Okonkwoearned great name and fame in the nine villages surrounding Umuofia by dint of his own hard work and achievements.

The Igbos attached much importance to personal achievements and hereditary succession to titles. Some of them managed to acquire prestigious titles in order to be acknowledged as great men and chiefs. Titled chiefs formed their own councils and represented their communities. Titles cost money and only men with exceptional abilities and good fortune managed to buy all coveted titles. The higher titles demanded the payment of expensive initiation fees, accompanied by elaborate feasting and dancing. A man who failed to progress beyond the junior most title was a man without status in the eyes of the people. Whatever his age, he was looked upon as a boy and asked to run errands.

Matters affecting the clan were discussed in the meeting of elders with the assistance of the adult membersof the clan as the Igbos lived in autonomous villages and towns. The key unit of agricultural production was the household. The size of the household was crucial in providing farm labour. This led to the practice of polygamy. A farmer took many wives in order to have a number of children to help him in farm work. The first wife was the head woman of the household while the junior wives enjoyed their own rights and privileges. The head of the household lived in an Obi and his wives lived in their own separate huts with their children. They cooked for themselves and grew their own crops, which they sold in the market and kept the profit to themselves. If a wife was unhappy with her husband, she was free to leave him.

The novel, *Things Fall Apart* is, at its heart, a novel about a rapidly changing culture. Winds of change began to blow with the advent of White man and the Missionaries converting people to Christianity in large numbers. The invasion of the colonizing force is changing or threatening to change almost every aspect of their society: religion, family structure, role of genders, relations, and trade, to name just a few. The women who were typically circumscribed to the home and who possessed little decision-making power prior to colonialism,

Scanned with CamScanner

suddenly find themselves as active managers of important social exchanges in the roles they play in the field of trade as well as in the production of the cropsthat takes place in the market. Chinua Achebe depicts a rapid change in Igbo culture as a result of the arrival of the White man. Because of the quick and easy introduction of new ideas from the outsiders, the nature of gender roles begins to shift, bringing larger cultural implications. To illustrate an example, one of the rapid cultural changes that take place in Igbo society is apparent in terms of the harvesting of crops. While they still do not harvest yams, "a man's crop" (Achebe 22),and symbol of "manliness…and greatness(Achebe 33), the "coco-yams, beans and cassava" (Achebe 22) become increasingly important to the Igbo and their trade, despite men's clinging to the yam as an important symbol of the Igbo culture. With their expertise in trading, women come in direct contact with foreigners than did the men. As a result of this they asserted their ideas and opinions to the powerful male elders and had thus stronger influence in society.

In the novel we see that for the men such a transition epitomized a particular threat. The chiefprotagonist Okonkwo, for instance, reflected on the colonial enterprise and remarked that the White man "has put a knife on the things that held us together and we have fallen apart" (Achebe 124-25). Besides,women's growing power, conferred upon them through their status acquired in trading, defied the historical notions of gender relations. This is evident in the words of Achebe: "No matter how prosperous a man was, if he was unable to rule his women and his children (and especially his women),he was not really a man"(Achebe 45). Thus women's role in the trade which is a vital aspect of Igbo society, not only changed gender dynamics and family relations but also the very concepts and beliefs on which Igbo culture was founded.

Another way throughwhich Chinua Achebe depicts the culture of Igbo tribe is through language. Robert Bennett, a doctoral fellow at the University of California, states the following in his essay:

By introducing numerous African terms throughout the novel, he [Achebe] develops a hybrid language that mixes Igbo and English words. While some of the words may be confusing at first, by the end of the novel the reader learns to

Scanned with CamScanner

recognise many basic Igbo words like Chi (fate or personal god), obi (hut), and osu(outcast) (*Things Fall Apart*, Novels 278). Achebe incorporates the everyday words of the Igbo tribe into the novel. At the beginning of the novel, Achebe talks about the elders and refers to them as ndichie (Achebe 12). After Okonkwo beats his wife during the Week of Peace, the villagers will think of "nothing else but the nso-ani the glossary defines as "a religious offence of a kind abhorred by everyone" which Okonkwo has committed (Achebe 31). Achebe provides a glossary at the end of *Things Fall Apart* for the reader to look up any unfamiliar Igbo words that are used in the novel.

Before the Christians arrive in Nigeria, the Igbo traditional religion is a part of the culture that is highly valued. The Igbos believed that one must have faith in one's ancestors to be blessed with good health, goodluck and many children. Every member of the clan was aware of the ill consequences if he violated the rules of conduct as established in the religious scriptures. Besides, the Igbo people believed in the worship of the smaller gods who, according to them, controlled everything. In fact, there was a hierarchy of gods that ranged from Chukwu to one's Chi, or personal god (*Things Fall Apart*, Literature 360). They believed that a person's Chi followed him throughout his life and could either be benevolent or malevolent. But the Igbos believed that no matter how good a person's Chi, he could achieve success only if he worked hard and led an upright life. They emphasized the importance of hard work in the saying, "If a person says 'yes', that person's Chi says 'yes' also" (Achebe 27). Every man had an obi (hut) that he devoted to his Chi. The obi would store his Chi's shrines(*Things Fall Apart*, Novels 272).

Oracles were the religious shrines that discharged both judicial and messenger functions from dead relatives and passed them on to the living beings. If an individual felt wrongfully accused of a crime, he might take the matter to an Oracles who might exonerate him or confirm the guilt. Chielo was the chief priestess of the Oracle of the Hills and the Caves. To disobey the words of the chief priestess was to disobey the Oracle.

Chukwu was the one supreme power governing the world. There were special shrines built for his worship. One of the chief deity that the Igbo people worship is the earth goddess, Ani. She is the "source of all fertility" (Achebe

Scanned with CamScanner

36).Okonkwo commits three crimes against the earth goddess. Beating his wife during the Week of Peace is the first crime he commits (Killam 23). The Igbo people observe a Week of Peace before each planting season "to honour our great goddess of the earth without whose blessing our crops will not grow" (Achebe 30). The second crime against the earth that Okonkwo commits is killing of Ikemefuna, his "adopted" son that was given to Umuofia as a peace offering from another village (Killam 23). Okonkwo does notlisten to the Oracle of the Hills and Caves when she says that Okonkwo is to have nothing to do with the murder (Achebe 57-61). The last crime that Okonkwo commits against the earth goddess is the accidental killing of Ezendu's sixteen year old son. At Ezendu's funeral, "Okonkwo's gun had exploded and a piece of iron had pierced the boy's heart" (Achebe 124). He was exiled for seven years for killing a clansman of his and he had to start life afresh in Mbanta, where he was helped by uncle Uchendu in buying farms and setting up his household. After initial setbacks, Okonkwo prospered there also.

The advent of White man and the Missionaries in the life of Igbo people proves to be a watershed moment in their history and culture. The Missionariesstraightforwardly told the innocent Igbo people that they worshipped false gods which were made of wood and stone. The Missionaries won the support of the outcasts of Umuofia first because these are the people who do not benefit from the traditional Igbo religion. They won an easy supportbytellingthe tribe members that the godsthey currently worship are not real. If the gods do not exist then how would they punish the Ibo if they convert to Christianity (*Things Fall Apart*, Novels 272)? People develop more and more respect for Christianity because of Mr. Brown, who was soft on their traditional faith. He was friendly with several clan leaders and talked to them on various issues. Trouble starts when Mr. Brown gets sick and he is replaced by Reverend James Smith. Reverend Smith is intolerable of the traditional religious beliefs of the Ibo and causes much controversy between the newly converted Christians and the followers of the traditional Igbo religion (*Things Fall Apart,*Literature 362-63).

The growing tension between the two religions leads to Okonkwo's suicide. One of the Christians kills a python, who is considered a sacred spirit by

Scanned with CamScanner

the Igbo people (Killam 24). Another Christian at some other time also reveals the true identity of one of the egwugwu. The feelings of Igbo people get hurt and this leads to the villagers burning a Christian church. A few of the elders including Okonkwo are imprisoned for the crime and have to pay a fine. (*Things Fall Apart*, Literature 364). They are humiliated and their heads are shaved. Okonkwo was choked with hatred. In a fit of anger and humiliation, he killed the messenger of White man who is set by the District Commissioner (Achebe 204). Okonkwo could not live down the disgrace and he committed suicide by hanging himself from a tree. Since suicide was considered a crime agaist the Earth, no one touched his dead body and he was not given a proper burial. The villagers paid the District Commissioner's men to bring his body down from the tree and bury it. As his friend Obierika said: "That man was one of the greatest men in Umuofia. You drove him to kill himself; now he will be buried like a dog…." By killing himself Okonkwo commits another abomination against the earth goddess (Achebe 207).

Thus we can say Chinua Achebe makes a good effort to describe the Igbo culture with the help of a number of different traits which form an eminent part of society viz. language, social structure, religious beliefs and the system of the government. The novel offers a good reading in the depiction of detail like how "the character of the community – its values, freedoms, and social political organization – has been substantially and irrevocably altered" as a result of the Christians moving into the Ibo land in Nigeria (Killam 20).

Works Cited

Achebe, Chinua. *Things Fall Apart.*New York: Anker Books, 1959. Print.

Killam, Douglas. *Literature of Africa.* Westport,Connecticut: Greenwood Press, 2004.

*Things Fall Apart.*Literature and Its Times.Vol. II. Detroit: Gale,1997. Print.

*Things Fall Apart.*Novels for Students. Vol. II. Detroit: Gale,1997. Print.

***

Scanned with CamScanner

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमैयाभुवि भासते परिसरो मुम्बापुरे संस्थितः॥

योऽनूचानः स नो महान्।
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

ISSN-22776445

Scanned with CamScanner

विद्यारश्मिः

ISSN-22776445

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

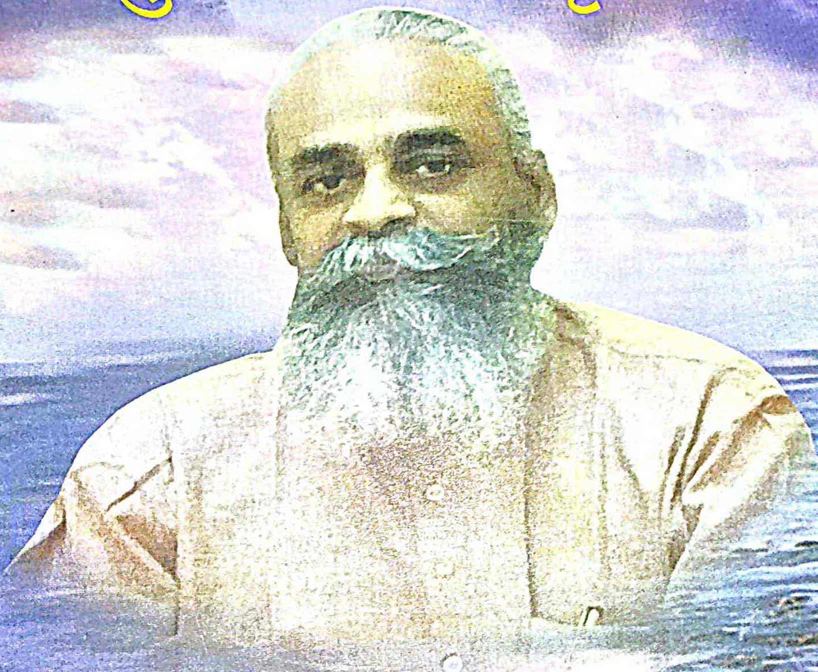

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः॥

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः — प्रो. ई. एम्. राजन् — प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः — डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी — डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

विद्यारश्मिः	**ISSN-22776445**
	UGC Reg. No. 40920

© प्रकाशकाधीनम्

प्रकाशकम्	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
प्राकाशनवर्षम्	**2017-18**
अङ्कः	षष्ठः

प्रधानसम्पादकः	प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः
सम्पादकमण्डलम्	प्रो. प्रकाशचन्द्रः
	प्रो. ई. एम्. राजन्
	प्रो. मदनमोहनझाः
	प्रो. बोधकुमारझाः
	डा. नारायणन् ई. आर्.
	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी
	डा. (श्रीमती) गीतादुबे

पत्रिकाप्रतिरूपाणि	**300**
मुद्रकः	**BG&K Associates, Lower Parel, Mumbai-13**

अवधातव्यम् पत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितलेखानां मौलिकत्वस्य तत्रत्यप्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं पत्रलेखकानामेव, न तु प्रकाशकस्य, सम्पादकस्य वेति स्पष्टं विज्ञप्यते।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

7	शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए	डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव	347
8	साहित्य प्रकारांचे स्वरुप	डॉ. मीनाक्षी बरहाटे	352
9	Java Applets	Ms. Vaishali Nivadunge	355

साहित्य प्रकारांचे स्वरुप

डॉ. मीनाक्षी बरहाटे.
मराठी विभाग.

साहित्य विश्वामध्ये काव्य हा शब्द अनेक अंगाने वापरला जातो. तरीही ब-याच अंगाने या शब्दांचा अर्थप्रयोग होतो. जेव्हा आपण वाङ्मय शब्द उच्चारतो, तेव्हा त्यांचे माध्यम भाषा असून विषयानुसार त्यांचे वर्गीकरण करावे लागते. त्यालाच आपण **ललित साहित्य** संबोधतो. ललित साहित्याला सौंदर्याची जोड द्यावी लागते. ह्यामध्ये शिल्प, नृत्य, संगीत, चित्र इत्यादी कलांचा समावेश ललित साहित्याच्या संज्ञेमध्ये करता येतो. या कलेतूल सौंदर्य प्रतीत होत असते. कालांतराने याच अनुभवाचे रुपांतर साहित्य अनुभवामध्ये व्यक्त होते.

संस्कृत आणि इंग्रजी साहित्यशास्त्रामध्ये साहित्याच्या व्याख्यांचा विचार अभिव्यक्त झाला तो अशा प्रकारे, **'रमणीयार्थप्रतिपादक शब्द'** (जगन्नाथपंडित),**'शब्दार्थो संहितौ काव्यम्'** (भामह), 'The language of the Imagination & Passion' (हजलिट), The best word in best order (कोलरिज) अशा व्याख्यांच्या आधारे साहित्याच्या स्वरुपाची दिशा आपल्या लक्षात येते. म्हणूनच साहित्याच्या स्वरुपामध्ये शब्दांचे वेगळेपण, वास्तवजीवन व साहित्यातील अनुभवविश्व, सूचकता, साहित्यातील आत्मविष्कार, कल्पनाशक्तिच्या आधारे आपण साहित्याच्या तळाचा शोध घेऊ शकतो.

ज्या परिस्थितीमध्ये साहित्यकृती आकारत असते .त्या बाह्य वातावरणाचा त्या लेखकांच्या मानसिकतेवर मोठा प्रभाव (प्रादेशिकता) असतो. तेथील चालीरीती, रुढी संकोचाची माणसे त्या कलाकृतीत चित्रित होत असतात. या कल्पनाशक्तीच्या सहाय्याने प्रत्येक कलावंत आपला जीवनानुभव मांडत असतो. प्रत्यक्षात प्रत्येक लेखकाच्या अनुभवविश्वाचा विषय वैविध्यपूर्ण असतो. त्यामध्ये अनेक धाग्याचे नाविन्य असते. व्यक्तीशः हा अनुभव व्यक्तिनिष्ठ असतो. मात्र शास्त्रीय साहित्यामध्ये व्यक्तिनिष्ठ अनुभव नसतो, तर समष्टीचा विचार ग्राह्य धरला जातो. शास्त्रीय साहित्यामध्ये तर्कनिष्ठ संगीताला प्राधान्य दिले जाते. त्यामुळे बुद्धिला पटेल तेच सिद्ध करण्याचा अट्टाहास या ठिकाणी महत्त्वाचा ठरतो.

साहित्याचा हेतू सौंदर्याचा आविष्कार असतो. जीवनातील सत्याचा आधार घेऊन त्याला काल्पनिक पातळीवर रंगविले जातात. म्हणून ह्यातून कलावंताच्या मनाचा आत्मप्रत्यय प्रकट होत असतो. जेव्हा या भावना वैचारिक पातळीवर रेखाटल्या जातात. तेव्हा नटसम्राट, क्रौंचवध, पानिपत, मृत्युंजय, ज्ञानेश्वरी सारख्यासाहित्यकृती जन्माला येतात. कल्पनाशक्तीच्या सहाय्याने जे अनुभव मांडतो, त्याला आपण कल्पनाविलास असे म्हणतो.

प्रारंभीच्या काळात याचे विविध प्रकार रुढ झाले होते. उदा. –

1. नाटक (सुखात्मिका, शोकात्मिका, फासे, नाटक इत्यादी)
2. कथाकाव्य (आर्यमहाकाव्य, विदग्ध महाकाव्य, खंडकाव्य, आरण्यानकाव्य)
3. भावकाव्य (भावकविता, सुनित, विलापिका, हायकू)
4. कथा-कादंबरी (कथा, लघुकथा, दीर्घकथा, कादंबरी)
5. चरित्र (चरित्र, आत्मचरित्र, आठवणी, प्रवासवर्णन, व्यक्तिचित्रण)
6. ललितलेख, निबंध, ललितनिबंध, आठवणी, प्रवासवर्णन.

अशा स्वरुपातून साहित्यप्रकारांचा उदय झाला. ही पार्श्वभूमी अभ्यासताना त्यांच्या मूळ गाभ्यापर्यंत गेला तर असे जाणवते, नॉरथ्रूप फ्रायने वाङ्याचे सुखात्मिका, शोकात्मिका, अद्भूतरम्यात्मिका, उपहासात्मिका असे चार प्रकार मान्य केले.

कालांतरानी अभ्यासाच्या सोयीसाठी त्यांचे वाङ्मयप्रकारामध्ये वर्गीकरण करण्याचा प्रस्ताव मांडण्यात आला. ही भूमिका मिलिंद मालशे यांनी सविस्तरपणे आणि ती वा. ल. कुलकर्णी गौरवग्रंथातून आपल्या सर्वासमोर मांडली. या ठिकाणी मालशे यांनी दोन भूमिकांना प्राधान्य मान्य केल्या आहेत.

1. नाममात्रवादी, 2. एकसत्त्ववादी.

ह्या भूमिकेतील नाममात्रवादी भूमिका साहित्यप्रकार नाकारते. त्यांच्या मते साहित्याचे वर्गीकरण केल्यास साहित्यप्रकारांचे अध्यापन होऊ शकत नाही, तर एक सत्ववादी साहित्याची भूमिका मान्य करून साहित्याचे प्रकार हवेत अशी भूमिका सांगते.

पाश्चात्य साहित्यमीमांसक अरिस्टॉटलच्या काळापासून याविषयी संबंधी निरिक्षणे नोंदवतात. याठिकाणी कांट आणि कोचे यांच्या भूमिका स्वीकारल्या जातात. कारण प्रत्येक

कलाकृती अनन्यसाधारण असते. त्यांच्यातील आशयाचा घाट आपणास तळापर्यंत गेल्यास समजत नाही. **'सौंदर्यमीमांसक' (1974)** रा. भा. पाटणकर, 'कला व रुप' या प्रकरणात फॉर्म' या विषयासंबधी आपली भूमिका स्पष्ट करताना म्हणतात, **"अभिव्यक्तीचे तंत्र व शैली जाणून घ्यावयाचे असल्यास ऐंद्रिय माध्यमाचा समावेश करावा लागतो."** (साहित्य विचार, संपा. डॉ. पुंडे आणि तावरे, स्नेहवर्धन प्रकाशन, प्रथमावृत्ती 1995, पृ.142)

थोडक्यात करारामागे साहित्यप्रकाराची **'साहित्यिक क्षमता'** म्हणजे सांगण्याचा आणि दाखविण्याचा, भावण्याचा करार सिद्ध होतो. यांच्या आधारे आपण साहित्यप्रकारांचा अभ्यास करु शकतो.

संदर्भग्रंथ –

1. गोविलकरलीला, भारतीय साहित्यविचार, स्नेहवर्धन प्रकाशन, प्रथमावृत्ती 1995, पुणे-30.
2. संपा गणोरकर व इतर, संज्ञा संकल्पना कोश, भटकळ प्रकाशन, प्रथमावृत्ती 2001, मुंबई-34.
3. आगळे सिद्धार्थ, मराठीतील रुपनिष्ठ समीक्षा, स्नेहवर्धन प्रकाशन, प्रथमावृत्ती 1999, पुणे-30

***

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमैयाभुवि भासते परिसरो मुम्बापुरे संस्थितः॥

योऽनूचानः स नो महान्।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

ISSN-22776445

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

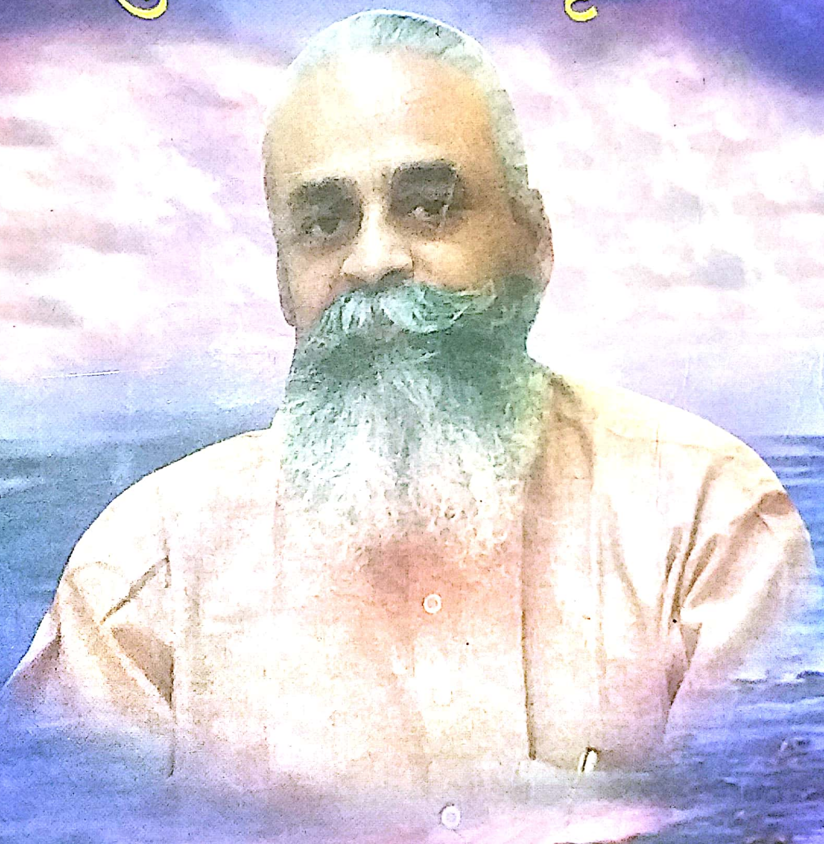

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः।।

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः | प्रो. ई. एम्. राजन् | प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः | डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी | डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः ISSN-22776445

UGC Reg. No. 40920

© प्रकाशकाधीनम्

प्रकाशकम् राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

प्राकाशनवर्षम् 2017-18

अङ्कः षष्ठः

प्रधानसम्पादकः प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम् प्रो. प्रकाशचन्द्रः

प्रो. ई. एम्. राजन्

प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः

डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी

डा. (श्रीमती) गीतादुबे

पत्रिकाप्रतिरूपाणि 300

मुद्रकः BG&K Associates, Lower Parel, Mumbai-13

अवधातव्यम् पत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितलेखानां मौलिकत्वस्य तत्रत्यप्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं पत्रलेखकानामेव, न तु प्रकाशकस्य, सम्पादकस्य वेति स्पष्टं विज्ञप्यते।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

रचनानुक्रमणिका

स्मरणिकाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	ॐ श्रीमते रामानुजदेवनाथाय नमः	डा. को. वे. सोमयाजुलुः आचार्यः	1
2	पुण्यस्मरणम्	आचार्यः का. ई. देवनाथन्	4
3	स्मृत्युज्जीविका	प्रो. पि. सि. मुरलीमाधवन्	6
4	वियोगिनीकल्लोलिनी	आचार्यः जि.यस्.आर्. कृष्णमूर्तिः	7
5	सखा गुरुश्च मे	आचार्यः राजन्. ई. एम्.	9
6	पुण्य-स्मरण	प्रो. सुदेश कुमार शर्मा	11
7	प्राज्ञपुरुषोत्तमः रामानुजः	आचार्यः अतुलकुमारनन्दः	14
8	चिरं स्मराम्याचार्यरामानुजदेव...	प्रो. सुकान्तकुमारसेनापतिः	20
9	सदाचारिणे आचार्यरामानुजदेवनाथाय	आचार्यललितकुमारसाहुः	22
10	आचार्यदेवनाथस्मरणम्	डा. हरिओम्शास्त्री	25
11	आचार्यदेवो भव	डा. शिवरामभट्टः	26
12	Devanathan – My Best Friend	Dr. S V R Murthy	31
13	Dear Departed	Dr. Sharat C. Sharma	33
14	देशिकप्रणामः	डा. एम्-जयकृष्णन्	41
15	आचार्यो देवनाथः	डॉ. दे. दयानाथः	42
16	लीनोऽसि कुत्र प्रभो ....!	डा. प्रियव्रतमिश्रः	47
17	भजेऽहं भजेऽहं सदा तेऽङ्घ्रिपद्मम्	डा. विनायकरजतः	51
18	ज्ञानमहिममण्डिताः शिक्षाशास्त्रिणः	डा. परमेशकुमारशर्मा	60
19	आचार्यः सः नो महान्	डा. नितिनकुमारजैनः	65
20	आचार्य रामानुज देवनाथनः	डा. शिवदत्त आर्य	68
21	व्यक्तित्व के गुणों के धनी	डा. प्रेमसिंहसिकरवार	69
22	पुण्यश्लोकः आचार्यः रामानुजदेवनाथः	डा. देवदत्तसरोदे	76
23	आदर्श अध्यापक के गुणों से परिपूर्ण	डॉ. श्रीगोविन्द पाण्डेय	80
24	चिरस्स्मरणीयाः वन्दनीयाश्च गुरवः	डा. राधागोविन्दत्रिपाठी	83

Scanned with OKEN Scanner

व्याकरणविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	वैयाकरणमतानुसारं पदशास्त्रीय..	डा. सोमयाजुलुः आचार्यः	88
2	काल एव हि विश्वात्मा	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	104
3	पाणिनीयपद्धत्या ए बी सी डी –	प्रो. बोधकुमारझाः	117
4	समासस्य तत्त्वबोधिनीलघुशब्देन्दु-	डा. सुभाष मीणा	121
5	व्याकरणनये सम्बन्धनिरूपणम्	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	125
6	कर्त्तृकर्मणोः कृति	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	135
7	भाषाविज्ञानदृष्ट्याशब्दार्थसम्बन्धविमर्शः	चेमटे सुरेशः	144
8	सिद्धान्तकौमुदीवैदिकप्रकरणस्थ-	ऋतम्भरापाण्डेयः	154

न्यायविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	विलक्षणं सिद्धान्तलक्षणम्	डा. ना .रा. श्रीधरन्	166

साहित्यविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राजकुमारमिश्रप्रणीतभारतभूषणकाव्यस्य	डॉ. कृपाशङ्करशर्मा	170
2	ध्वन्यालोकलोचनाभ्यां प्रकाशितं	डा. नारायणन्. ई. आर्.	176
3	आलङ्कारिकाभिमता व्यङ्ग्यबोधिनी	डा. एम्. सुदर्शनचिपळूणकरः	182

ज्योतिषविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राष्ट्र के निर्माण में ज्योतिषशास्त्र	प्रो. भारतभूषण मिश्र	188
2	मिथिला के शाक्त परम्परा में	डा. आशीष कुमार चौधरी	194
3	ज्योतिष-वास्तुशास्त्रयोः दिग्ज्ञान	डा. अनिरुद्ध नारायण शुक्लः	199

Scanned with OKEN Scanner

वेदान्तविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	Vedic Mahavakva	Prof. P. C. Muraleemadhavan	206
2	श्रीसुरेश्वराचार्याणामाभासवादः	डॉ. भगवानसामन्तरायः	212
3	आधुनिककाले भगवद्गीतायाः	डा. ए. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	**216**
4	संस्कृतवाङ्मये भक्तितत्त्वानि	डॉ. विनोद कुमार शर्मा	**221**

शिक्षाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	श्रीमहेन्द्रनाथदत्तानां शैक्षिकं चिन्तनम्	डा. एम्-जयकृष्णन्	227
2	भारोपीयभाषापरिवारः संस्कृतञ्च	डा. आरती शर्मा	232
3	संस्कृतशिक्षणे नवीनता	डॉ. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	238
4	श्रीमद्भागवते विश्वबन्धुत्वपोषकाणि	डा. परमेशकुमारशर्मा	241
5	संस्कृतिसंरक्षणे भाषाप्रयोगशालायाः	डॉ. प्रेमसिंहसिकरवारः	247
6	शिक्षायां मानसिकस्वास्थ्यम्	डा. कौशलेश शर्मा	257
7	उच्च शिक्षा में गुणवत्ताः समस्याएं एवं	डा. शुद्धात्मप्रकाश जैन	261
8	वैदिकशिक्षायाः स्वरूपं तद्वैशिष्ट्यानि	डा. देवदत्त सरोदे	269
9	वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायां	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी	282
10	भारतीयसन्दर्भमनुसृत्य	डा. सुनील कुमार शर्मा	290
11	संस्कृतभाषाधिगमे पठनकौशलम्	सचिनकुमारः	296

आधुनिकविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	मॉरीशस के हिन्दी उपन्यास सम्राटः	डॉ. गीता दूबे	304
2	A Comparative Study of the	Dr. Swargakumar Mishra	310
3	Impact of Globilization on	Dr. Kumar	319
4	Women Education in India	Dr. Pinki Malik	326
5	Culture in Chinua Achebe's	Dr. Shweta Sood	332
6	Gender And Environment	Dr. Suman Singh	338

Scanned with OKEN Scanner

7	शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए	डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव	347
8	साहित्य प्रकारांचे स्वरुप	डॉ. मीनाक्षी बरहाटे	352
9	Java Applets	Ms. Vaishali Nivadunge	355

Scanned with OKEN Scanner

JAVA APPLETS

Vaishali Nivadunge

Define: Java is a high level programming language originally developed by the Sun Microsystems and released in 1995. In 1991, a group of parameters led by James Gosling and Patrick Naughton developed a language named "Oak" at the Sun Microsystems. This language was designed to be simple and platform independent. In 1995, this language was renamed as 'JAVA'. Since 1996, both microsoft and Netscape have supported Java in their browsers. Java programs are compiled into machine instructions that can be understood and executed by an idealized CPU. Such a CPU is called JAVA VIRTUAL MACHINE (JVM). A java program is first complied into the machine code that is understood by JVM. Java is an easy language which is currently very popular due to its three distinct features : object oriented nature, platform independence and security.

Features of Java: There are some important features of java like Simple, Object-oriented platform Independent, Secured, Robust, Architecture neutral, Portable, Dynamic, Interpreted High performance, Multithreaded and Distributed. For a comprehensive study of java, there is a need applets play in java. Applets are small java applications that can be accessed on an internet server, transported over internet and can be automatically installed and run as a part of a web document. "A large of internet is organized a world wide web (WWW), which is an information retrieval system. The system users Hypertext Markup Language (HTML) for information represents and display." An Applet class does not have any main method. It is viewed using JVM. The JVM can use either a plug-in of the Web Browser or a separate runtime environment to run an applet application. JVM creates an instance of the applet class and invokes in it ( ) method to initialize an Applet. Any applet in Java is a class that extends the Java applet. Applet class.

The Life Cycle of An Applet : There are five methods that are called during the life cycle of an applet. Most applets override there methods. They are : init ( ), start ( ), stop ( ), paint ( ) and destroy ( ). When we quit the applet viewer or the web

Scanned with OKEN Scanner

browser itself, the destroy method ( ) of the applet that is currently executed view be called.

Paint () - The paint ( ) method is called by the applet viewer or the web browser. Whenever the applet needs to be refreshed. Default version of the paint ( ) method does absolutely nothing. Therefore we should always override this method in our applets. Apart form the paint ( ) method are also invoked sometime during the life cycle of an applet.

The APPLET CLASS :-

Applet class provides all necessary support for applet execution, such as initializing and destroying of applet. It also provide methods that load and display images and methods that load and play audio clips.

"The java applet. Applet class extends java.lang.object.java.awt.panel classes. The hierar chy of inheritance is shown below.

Java.lang.object-----> java.awt.component-----> java.awt.conlainer-----> java.awt.panel----> java.applet.Applet. The java.awt.componenet class is an important class that has many useful methods. Some of the important methods in this class are listed below. Since the applet class extends this class, these methods are made available by the applet class and many applets make use of these methods. "While init ( ), start ( ), stop ( ), and destroy ( ) methods are defined by the java.applet. Applet class. The paint method is inherited by the Applet class from the component class, which is the superclass of the applet class. As we may recall, every application has a main ( ) method.

1. Init ( ) : init is the first method to be called . This is where variable are initilized. This method is called only once during the run time of applet.

Init ( ) method is invoked by the browser when the applet begins exceution.

2. Start ( ) : This code is executed after the init ( ) method complets its execution of an applet.

This method is also invoked by the web browser or the applet viewer to resume the execution of an applet.

3. Stop ( ) method : The stop ( ) method is called by the web browser or the applet viewer to suspend the execution of an applet. When a user switches over from a web page that contains the applet to another web page, the execution of

Scanned with OKEN Scanner

that web page will be suspended. The stop ( ) method will be called by the applet viewer or the web browser whenever the execution of an applet is to be suspended.

4. destroy ( ) : The destroy ( ) method is called by the applet viewer or the web browser just before the execution of an applet is terminated. Destroy ( ) method is called when your applet needs to be removed completely from memory.

Development and Execution of a simple Applet :

a) writing the applet's code (.java file)

```
import java.awt*;
import java.applet.*;
public class welcome applet extends applet
public void paint (Graphics g )
g.drawstring ("Hello! Welcome to applets!",65,30);
```

b) compiling the applet's code (.class file will be ready after the compilation)

c) writing the html code (.html file)

d) invoking the applet viewer utility from a command shell window.

(Applet viewer welcome applet.html)

b) compiling Applet's code in a command shell java c welcome Applet.java

c) writing the HTML code.

The code for the welcome Applet.html file shall be keyed in, as shown below:

```
<html>
<head>
</ head>
<body>
<applet code= "welcome Applet class" width=400 height=200>
</ applet>
</ body>
</ html>
```

Many part of the above mentioned welcome Applet.html are optional. Only the following entry is compulsory.

<applet code= "welcomeApplet.class" width= 400 height= 200>

An HTML file can very well have multiple applet's

d) Invoking the applet viewer from a command shell window.

Scanned with OKEN Scanner

Applet viewer welcomeApplet.html

At this stage, a temporary web page will be created and the output of the welcome Applet will be displayed within it.

Attributes in APPLET tag :

CODE = Appletname.class → To specify the name of the class file that has been obtained by compiling the applet program. This Attribute is compulsory.

Width = pixels

HEIGHT = pixels → To specify the width and height of the applet output frame. This frame is part of the web page.

CODEBASE = codebase-url → If the applet resides in the same directory in which the html file resides. This entry may be omitted.

ALT= alternate-text → This entry is optional. Certain web browsers are non java enabled browsers. They cannot recognize and execute the applet code.

NAME = applet-instance-name → This entry is optional. This entry specifies a name of the applet.

ALIGN = alignment → This entry is optional. This entry specifies the alignment, according to which the applet's output will appear. Possible values are TOP, BOTTOM, LEFT, RIGHT, MIDDLE.

VSPACE = pixels → This entry is optional. This attributes is to be used only when the ALIGN attributes takes Top or BOTTOM as it's value.

HSPACE = pixels → This entry is optional.

Example of an Applet.

```
        import java.applet.*;
        import java.applet.*;
public class Myapplet extends Applet
        int height, width;
        public void init ( )
        height – get size ( ).height;
        width – get size ( ).width;
        set name (“My Applet”);
```


Scanned with OKEN Scanner

public void paint (Graphics g)
g.drawRoundRect (10,30,120,2,3);

Java Applet is very secured. It can be executed by browsers running under many platforms including linux, Windows, Mac Os etc. which has JVM running in it.

Bibliography

1. Muthu, C. programming with JAVA.chennai:vijay Nicole Imprints pvt Ltd., 2011.print.

2. www.google.com

3. Schildt, Herbert, Java 2 : The complete Reference : Fifth Edition

***

Scanned with OKEN Scanner

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमैयाभुवि भासते परिसरो मुम्बापुरे संस्थितः।।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः

ISSN-22776445

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

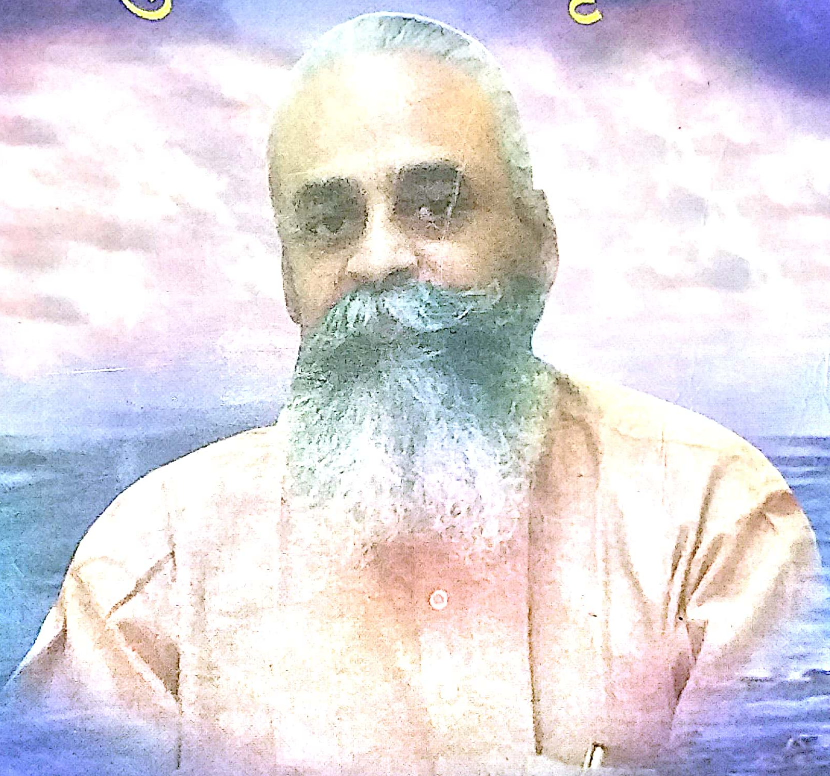

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः॥

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः   प्रो. ई. एम्. राजन्   प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः   डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी   डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः ISSN-22776445
UGC Reg. No. 40920

© प्रकाशकाधीनम्

प्रकाशकम् राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

प्राकाशनवर्षम् 2017-18

अङ्कः षष्ठः

प्रधानसम्पादकः प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम् प्रो. प्रकाशचन्द्रः
प्रो. ई. एम्. राजन्
प्रो. मदनमोहनझाः
प्रो. बोधकुमारझाः
डा. नारायणन् ई. आर्.
डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी
डा. (श्रीमती) गीतादुबे

पत्रिकाप्रतिरूपाणि **300**

मुद्रकः **BG&K Associates, Lower Parel, Mumbai-13**

अवधातव्यम् पत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितलेखानां मौलिकत्वस्य तत्रत्यप्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं पत्रलेखकानामेव, न तु प्रकाशकस्य, सम्पादकस्य वेति स्पष्टं विज्ञप्यते।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

रचनानुक्रमणिका

स्मरणिकाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	ॐ श्रीमते रामानुजदेवनाथाय नमः	डा. को. वे. सोमयाजुलुः आचार्यः	1
2	पुण्यस्मरणम्	आचार्यः का. ई. देवनाथन्	4
3	स्मृत्युज्जीविका	प्रो. पि. सि. मुरलीमाधवन्	6
4	वियोगिनीकल्लोलिनी	आचार्यः जि.यस्.आर्. कृष्णमूर्तिः	7
5	सखा गुरुश्च मे	आचार्यः राजन्. ई. एम्.	9
6	पुण्य-स्मरण	प्रो. सुदेश कुमार शर्मा	11
7	प्राज्ञपुरुषोत्तमः रामानुजः	आचार्यः अतुलकुमारनन्दः	14
8	चिरं स्मराम्याचार्यरामानुजदेव...	प्रो. सुकान्तकुमारसेनापतिः	20
9	सदाचारिणे आचार्यरामानुजदेवनाथाय	आचार्यललितकुमारसाहुः	22
10	आचार्यदेवनाथस्मरणम्	डा. हरिओम्शास्त्री	25
11	आचार्यदेवो भव	डा. शिवरामभट्टः	26
12	Devanathan – My Best Friend	Dr. S V R Murthy	31
13	Dear Departed	Dr. Sharat C. Sharma	33
14	देशिकप्रणामः	डा. एम्-जयकृष्णन्	41
15	आचार्यो देवनाथः	डॉ. दे. दयानाथः	42
16	लीनोऽसि कुत्र प्रभो ....!	डा. प्रियव्रतमिश्रः	47
17	भजेऽहं भजेऽहं सदा तेऽङ्घ्रिपद्मम्	डा. विनायकरजतः	51
18	ज्ञानमहिममण्डिताः शिक्षाशास्त्रिणः	डा. परमेशकुमारशर्मा	60
19	आचार्यः सः नो महान्	डा. नितिनकुमारजैनः	65
20	आचार्य रामानुज देवनाथन:	डा. शिवदत्त आर्य	68
21	व्यक्तित्व के गुणों के धनी	डा. प्रेमसिंहसिकरवार	69
22	पुण्यश्लोकः आचार्यः रामानुजदेवनाथः	डा. देवदत्तसरोदे	76
23	आदर्श अध्यापक के गुणों से परिपूर्ण	डॉ. श्रीगोविन्द पाण्डेय	80
24	चिरस्स्मरणीयाः वन्दनीयाश्च गुरवः	डा. राधागोविन्दत्रिपाठी	83

Scanned with OKEN Scanner

व्याकरणविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	वैयाकरणमतानुसारं पदशास्त्रीय..	डा. सोमयाजुलुः आचार्यः	88
2	काल एव हि विश्वात्मा	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	104
3	पाणिनीयपद्धत्या ए बी सी डी –	प्रो. बोधकुमारझाः	117
4	समासस्य तत्त्वबोधिनीलघुशब्देन्दु-	डा. सुभाष मीणा	121
5	व्याकरणनये सम्बन्धनिरूपणम्	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	125
6	कर्त्तृकर्मणोः कृति	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	135
7	भाषाविज्ञानदृष्ट्याशब्दार्थसम्बन्धविमर्शः	चेमटे सुरेशः	144
8	सिद्धान्तकौमुदीवैदिकप्रकरणस्थ-	ऋतम्भरापाण्डेयः	154

न्यायविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	विलक्षणं सिद्धान्तलक्षणम्	डा. ना .रा. श्रीधरन्	166

साहित्यविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राजकुमारमिश्रप्रणीतभारतभूषणकाव्यस्य	डॉ. कृपाशङ्करशर्मा	170
2	ध्वन्यालोकलोचनाभ्यां प्रकाशितं	डा. नारायणन्. ई. आर्.	176
3	आलङ्कारिकाभिमता व्यङ्ग्यबोधिनी	डा. एम्. सुदर्शनचिपळूणकरः	182

ज्योतिषविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राष्ट्र के निर्माण में ज्योतिषशास्त्र	प्रो. भारतभूषण मिश्र	188
2	मिथिला के शाक्त परम्परा में	डा. आशीष कुमार चौधरी	194
3	ज्योतिष-वास्तुशास्त्रयोः दिग्ज्ञान	डा. अनिरुद्ध नारायण शुक्लः	199

Scanned with OKEN Scanner

वेदान्तविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	Vedic Mahavakva	Prof. P. C. Muraleemadhavan	206
2	श्रीसुरेश्वराचार्यणामाभासवादः	डॉ. भगवानसामन्तरायः	212
3	आधुनिककाले भगवद्गीतायाः	डा. ए. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	**216**
4	संस्कृतवाङ्मये भक्तितत्त्वानि	डॉ. विनोद कुमार शर्मा	**221**

शिक्षाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	श्रीमहेन्द्रनाथदत्तानां शैक्षिकं चिन्तनम्	डा. एम्-जयकृष्णन्	227
2	भारोपीयभाषापरिवारः संस्कृतञ्च	डा. आरती शर्मा	232
3	संस्कृतशिक्षणे नवीनता	डॉ. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	238
4	श्रीमद्भागवते विश्वबन्धुत्वपोषकाणि	डा. परमेशकुमारशर्मा	241
5	संस्कृतिसंरक्षणे भाषाप्रयोगशालायाः	डॉ. प्रेमसिंहसिकरवारः	247
6	शिक्षायां मानसिकस्वास्थ्यम्	डा. कौशलेश शर्मा	257
7	उच्च शिक्षा में गुणवत्ताः समस्याएं एवं	डा. शुद्धात्मप्रकाश जैन	261
8	वैदिकशिक्षायाः स्वरूपं तद्वैशिष्ट्यानि	डा. देवदत्त सरोदे	269
9	वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायां	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी	282
10	भारतीयसन्दर्भमनुसृत्य	डा. सुनील कुमार शर्मा	290
11	संस्कृतभाषाधिगमे पठनकौशलम्	सचिनकुमारः	296

आधुनिकविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	मॉरीशस के हिन्दी उपन्यास सम्राटः	डॉ. गीता दूबे	304
2	A Comparative Study of the	Dr. Swargakumar Mishra	310
3	Impact of Globilization on	Dr. Kumar	319
4	Women Education in India	Dr. Pinki Malik	326
5	Culture in Chinua Achebe's	Dr. Shweta Sood	332
6	Gender And Environment	Dr. Suman Singh	338

Scanned with OKEN Scanner

7	शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए	डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव	347
8	साहित्य प्रकारांचे स्वरुप	डॉ. मीनाक्षी बरहाटे	352
9	Java Applets	Ms. Vaishali Nivadunge	355

Scanned with OKEN Scanner

शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए प्रशिक्षण पद्धति

डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव

आधुनिक युग में आम आदमी दिन-प्रतिदिन शारिरिक मेहनत कम करते जा रहा है, इसका परिणाम उसके शरीर के उपर होता जा रहा है। आज आधुनिक युग में प्रदूषण का प्रमाण बहुत दिन-प्रतिदिन बढते जा रहा है, आदमी फास्ट फूड खा के आपनी शारिरिक तंदुरुस्ती को कम कर रहा है। आज भारत एवं विश्व में मोटापा यह एक बडी समस्या बन गई है। मोटापा की वजह से तंदुरुस्ती कम हो जाती है तथा अनेक बिमारीयों को आमंत्रित किया जाता है।

आज यह शारिरिक तंदुरुस्ती एवं विकास के लिए विविध प्रशिक्षण पद्धति उपलब्ध है, जिसके अम्मल से अपनी शारिरिक तंदुरुस्ती का विकास किया जाता है। भारत में रामदेव बाबा ने योग अभ्यास के माध्यम से शारिरिक तंदुरुस्ती एवं विकास के लिए जागृत किया है तथा विविध संस्थाओं के माध्यम से विविध शारिरिक तंदुरुस्ती प्रशिक्षण पद्धतीसे तंदुरुस्ती विकास का कार्य किया जाता है।

अपने शरीर के उपर आधारित यह प्रशिक्षण पद्धतीयाँ है, जैसा अपना शरीर है वैसी प्रशिक्षण पद्धती अपनायी जाती है। यह शारिरिक तंदुरुस्ती विकास की जो प्रशिक्षण पद्धति है, वह सातत्य प्रशिक्षण, फार्टलेक प्रशिक्षण, मध्यांतर प्रशिक्षण, सर्किट प्रशिक्षण, नेट प्रशिक्षण, प्लायोमेट्रिक प्रशिक्षण, क्रॉस प्रॅशिक्षण, कोअर प्रशिक्षण आदि पद्धतियों का अंतर्भाव होता है।

1) **सातत्य / एकसलग प्रशिक्षण – Continuous Training:**

यह प्रशिक्षण में सातत्य से प्रशिक्षण दिया जाता है, इस में रेस्ट नही दिया जाता,सातत्य से प्रशिक्षण दिया जाता है।

यह प्रशिक्षण में दो तरीके से प्रशिक्षित किया जाता है, 1) ज्यादा एवं धीरे-धीरे अंतर का प्रशिक्षण और 2) ज्यादा एवं उच्च्च तीव्रता से सातत्य / एकसलग प्रशिक्षण।

ज्यादा एवं धीरे-धीरे अंतर का प्रशिक्षण में दौड, तैरणा, साइकल चलाना, रोईंग, एरोबिक्स या कोई भी पूरे शरीर के लिए कर सकते है। ज्यादा से ज्यादा हृदय दर के 60 से 80% इसके बीच

Scanned with OKEN Scanner

ही सातत्य प्रशिक्षण, कम से कम 20 मिनट व्यायाम होना चाहिए। यह प्रशिक्षण में ज्यादा से ज्यादा क्षमता के अनुसार 30 से 60 मिनट व्यायाम कर सकते है।

ज्यादा एवं उच्च तीव्रता से एकसलग प्रशिक्षण में ज्यादा से ज्यादा हृदय दर के 85 से 95% इसके बीच सातत्य प्रशिक्षण होना, कम से कम 20 मिनिट व्यायाम की गती हो। यह उच्च तीव्रता का प्रशिक्षण है।

2) फार्टलेक प्रशिक्षण - Fartlek Training:

फार्टलेक यह स्वीडिश शब्द का अर्थ है गति से खेल (Speed play) स्पर्धा काल से यह प्रशिक्षण कालबहुत बडा होता है। इसमेंचलना, दौडना, साइकल चलाना के अनुसार गति एवं वेग में बदल कर सकते है। अपनी क्षमता के अनुसार गति से दौड लगाकर आनंद प्राप्त करना इस पर जोर दिया जाता है। यह प्रशिक्षण से ऍरोबिक और अनऍरोबिक तंदुरुस्ति का विकास होता है। यह प्रशिक्षण में बीच में थोडा थोडा आराम दिया जाता है और फिर से प्रशिक्षण होता है।

3) मध्यांतर प्रशिक्षण – Interval Training:

कठिण परिश्रम / व्यायाम एवं आराम / विश्रांति (Rest) का प्रशिक्षण का मतलब मध्यांतरप्रशिक्षण कहलाता है। हर एक व्यायाम काल के बाद पुनःप्राप्ती हेतू मध्यांतरआराम की वजह से मिलता है। इस प्रशिक्षण पद्धतियों में दीर्घ अंतर तक प्रशिक्षण दे सकते है। इस प्रशिक्षण से एरोबिक एवं एरोबिक तंदुरुस्ती विकास में सहायता मिलती है। यह प्रशिक्षण से गति एवं स्नायू का दमदार विकास हो जाता है।

4) सर्किट प्रशिक्षण – Circuit Training:

यह प्रशिक्षण में चूने गिने व्यायाम क्रम क्रम से करना पडता है उसे सर्किट प्रशिक्षणकहते है। यह प्रशिक्षण पद्धति में 6 से 10 व्यायामों का क्रम रहता है। यह प्रशिक्षण में एक व्यायाम सेट पुरा होने के बाद दुसरा व्यायम ऐसे पुरा सर्किट करना पडता है। यह प्रशिक्षण से गति, समन्वय, चापल्य, संतुलन एवं स्नायू दमदारपणा का विकास होता है।

5) भार प्रशिक्षण – Weight Training:

यह प्रशिक्षण में मुक्त भार और यंत्र के द्वारा भार इस स्वरुप भार प्रशिक्षण का उपयोगहोता है। यह प्रशिक्षण में धीरे-
धीरे से भार बढाया जाता है। यह प्रशिक्षण से वैयक्तिक ताकद प्रशिक्षण कार्यक्रम की रचना कर सकते है। हर एक की अपनी क्षमता के अनुसार भार दिया जाता है। यह प्रशिक्षण में भार उठाते समय साँस अंदर लेना चाहिए एवं भार नीचे रखते समय साँस छोडनी चाहिए। यह प्रशिक्षण से स्नायूकी ताकद, दमदार क्षमता एवं पावर विकास होता है। स्नायू बल / ताकद के लिए 10 से 15 आवर्तन के तीन संच हो। (1RM के 60 से 80%) स्नायू दमदार के लिए 20 से 30 आवर्तन के तीन संच हो। (1RM के 40 से 60%)

6) **प्लायोमेट्रिक्स प्रशिक्षण – Physical Training:**

प्लायोमेट्रिक्स प्रशिक्षण को जम्प प्रशिक्षणभी कहा जाता है। इस प्रशिक्षण में स्नायू तानन एवं आकुंचन पर भी भर
दिया जाता है। प्लायोमेट्रिक प्रशिक्षण के माध्यम से स्नायू की स्फोटक शक्ती बढाई जाती है। यह प्रशिक्षण हफ्ते में एक से तीन दिन तक किया जाता है। इस से कुदना एवं गति एवं ताकद का विकास हो जाता है। प्लायोमेट्रिक्स व्यायाम करते समय स्नायू एवं जॉईंटपर बहुत ताण आता है। यह प्रशिक्षण से पहले वार्मअप (सामान्य व्यायाम) करना जरुरी है। प्लायोमेट्रिक्सव्यायाम घास के उपर या मॅट के उपर करना चाहिए। प्लायोमेट्रिक्स के व्यायाम इसेन्ट्रिक कॉन्सेन्ट्रिक गतिमान स्नायू आकुंचन एवं संयोग के उपर आधारित है।

7) **क्रॉस प्रशिक्षण – Cross Training:**

सभी शरीर की तंदुरुस्ती विकास करने के लिए शरीर में विविधता लाने एवं शारीरिक हानी कम करने के लिए अलग-
अलग उपक्रम (व्यायाम) एवं खेल इस के साथ तयार किया गया लंबाई काल व्यायाम कार्यक्रम को क्रॉस प्रशिक्षण कहते है।

स्पर्धात्मक खेल, क्लायविंग, चलना, साइकलिंग, तंदुरुस्त / सुदृढता के लिए उपक्रम, उदा. वेट भार एवं ट्रेनिंग / प्रशिक्षण इनका क्रॉस ट्रेनिंग कार्यक्रम के अन्तर्गत समावेश हो सकता है।

Scanned with OKEN Scanner

दीर्घकालतक अपनी इच्छा संभालने के लिए और अलग-अलग मार्ग से विविध स्नायू संघ को प्रशिक्षित करने के लिए कार्यक्रम के अंतर्गत व्यायामों मे विविधता यह क्रॉस प्रशिक्षण का आकर्षण है।

शारीरिक तंदुरुस्ती / सुदृढता हेतू उपर्युक्त सात प्रशिक्षण पद्धतियों के माध्यम से शारीरिक सुदृढता का विकास किया जा सकता है। यह उपर्युक्तप्रशिक्षण पद्धतियाँ खेल प्रशिक्षण के लिए ज्यादा अपनाई जाती है।

इसके अलावा अपने विविध शारीरिक कारक गुणों के लिए विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम अपनाया जाता है। जिसमें स्नायू ताकद विकास के लिए विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम / स्नायूयों का दमदारपन बढाने हेतू विशिष्ट प्रशिक्षण विधि / लचिलापन के लिए एव लचिलापन विशिष्ट स्थिति तक लाने हेतू एवं उसमें सातत्य रखने हेतू विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम / गति को बढाने हेतू विशिष्ट कार्यक्रम प्रशिक्षण विधि।

शारीरिक सुदृढता के लिए व्यायामों को अनन्य ऐसा महत्व है, व्यायामें में सातत्य रहेगा तो हि शारीरिक सुदृढता तग धरेगी। व्यायाम न करने से धीरे-धीरे शारीरिक सुदृढता कम होती जाती है।

आधुनिक युग में फिटनेस फंडा आजकल जरुरत के अलावा ट्रेंड भी बनता जा रहा है। इसके लिए डाएट से लेकर योगा, ऍरोबिक्स, डांस/नृत्य थैरेपीऔर अन्य कई माध्यम प्रचलन में है। ऐसा ही एक बेहद प्रचलित माध्यम है जिम, लेकिन जिम ज्वाइन करते समय यह ध्यान रखना जरुरी है कि आप सहि तरीके व नियमों का ध्यान रखनेवाले जिम को हि ज्वाइन कर रहें हैं या नहीं। फिल्मस्टार हो या बिजनेसमैन, मॉडल हो या कोई और सेलिब्रेटिज सभी अपने के फिट रखने के लिए जिम जाते हैं। क्योंकि फिट रहना उनकी इच्छा का ही सवाल नहीं होता अपितु उनके प्रोफेशनल इंटरेस्ट से भी जुडा है।

शारीरिक फिटनेस व्यायाम सही आहार और पर्याप्त आराम के द्वारा हासिल हो जाती है। यह जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। शारीरिक फिटनेस के घटकः- शारीरिक फिटनेस के सामान्य उद्देश्य में निम्नलिखित घटक है।

1. हृदय की सहनशक्ति
2. लचीलापन

Scanned with OKEN Scanner

3. स्नायू की ताकद
4. स्नायू का दमदारपन
5. शरीर की संरचना

विशिष्ट फिटनेस –

विशिष्ट या कार्योन्मुखी फिटनेस व्यक्ति कि विशिष्ट गतिविधि में उचित क्षमता से कार्य करने की क्षमता है, उदाहरण के लिए खेल या सेना सेवा। विशेष प्रशिक्षण एथलिटों को अपने खेलों में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए तैयार करता है।

संदर्भ –

1. Kamlesh M. L. (2009), Physical Education, Khel Sahitya Kendra, New Delhi.
2. Singh Ajmer (2003), Essentials of Physical Education, Kalyani Publishers, New Delhi.
3. Singh Hargayal (1995), Science od Sports Training, D. V. S. Publication, New Delhi.
4. कांगणे सोपान (2014), शारीरिक शिक्षण सेट-नेट, निराली प्रकाशन, द्वितीय आवृत्ती, पुणे।
5. Presidents Council of physical Fitness and Sports Definitions for Health, fitness and Physical activity. http://www.fitness.gov/digest_mar2000.htm

***

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयशोधपत्रिका

2017

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

मानितविश्वविद्यालयः

राष्ट्रियमूल्याङ्कनप्रत्यायनपरिषद्वा "ए" श्रेण्यां प्रत्यायितम्

क.जे.सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्,

विद्याविहारः, मुम्बई-७७

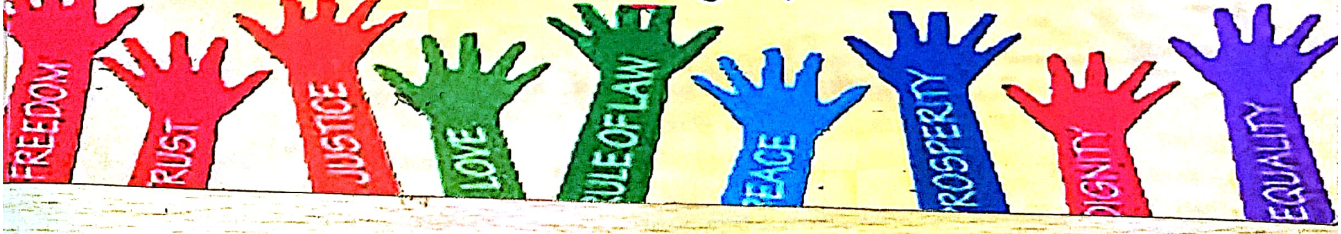

Scanned with OKEN Scanner

Peer Reviewed Refereed Journal

ISSN : 2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च शोधपत्रिका)

Annual Research Journal of Department of Education

2016 - '17

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमय्याभुवि भासते परिसरो विद्याविहारे स्थितः।।

संरक्षकः
आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री

प्रधानसम्पादकः
आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा

सम्पादकाः
आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि

सह-सम्पादकाः
डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः
डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
(मानितविश्वविद्यालयः)
भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः (पूर्वम्) मुम्बई - 400077

Scanned with OKEN Scanner

पत्रिकानाम	:	शिक्षारश्मिः (शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका)
प्रकाशकः	:	शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्(मा. वि.) क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई - 77
© प्रतिलिप्यधिकारः	:	प्रकाशकाधीनः
ISSN	:	2395-7921
संरक्षकाः	:	आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री, कुलपतयः
प्रधानसम्पादकाः	:	आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः
सम्पादकाः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि
सह-सम्पादकाः	:	डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा
सम्पादकमण्डलसदस्याः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा श्री शंकर आन्धले साई प्रसाद आपटे (छात्रसदस्यः) शुभलक्ष्मी सामल (छात्रसदस्या)
मूल्याङ्कनमण्डलम्	:	प्रो. ए पी सच्चिदान्दः प्रो. प्रकाश चन्द्र प्रो. लोकमान्यमिश्र प्रो. गोपीनाथशर्मा प्रो. प्रह्लादजोशी प्रो. वै यस् रमेश प्रो. रजनी रञ्जन प्रो. के. भारतभूषण
प्रकाशनवर्षम्	:	2017
अनुकृतयः	:	200
मुखचित्रविन्यासः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः
अक्षरसंयोजनम्	:	डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि
मुद्रकः	:	वन्दना आर्ट्स , मुम्बई

Scanned with OKEN Scanner

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं. शीर्षकम्	लेखकः	पुटसंख्या
1. साहचर्यम्	प्रो.मदनमोहनझाः	1 - 6
2. मूल्यशिक्षा – छात्रेषु मूल्यापादनोपाया:	डा. देवदत्त सरोदे	7 - 13
3. भारतीयशिक्षाप्रणाल्यां समाजे च भेदभावा अत्याचाराश्च, वर्तमाने तयोः नियन्त्रण-निवारणव्यवस्थाश्च	डा वि यस् वि भास्कर रेड्डि	14 - 21
4. मानवाऽधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च	डा. कुमारः	22 - 25
5. मूल्य शिक्षा का सम्प्रत्यय	डा. सुनील कुमार शर्मा	26 - 30
6. पाठ्यचर्यायाः सम्प्रत्ययः , निर्धारकतत्त्वानि च	डा. विनोदकुमार शर्मा	31 - 36
7. संस्कृतवाङ्मये मूल्यशिक्षायाः अवधारणा	डा. मन्था श्रीनिवासु	37 - 42
8. श्रुति-लिंग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समाख्यानां पूर्वपूर्वबलीयस्त्वम्	आचार्य: राजन् . इ .एम्	43 - 46
9. शास्त्रेषु मङ्गलाचरणम्, अनुबन्धचतुष्टयं च	डा. नारायणन् ई. आर्.	47 - 49
10. वर्तमानपरिप्रक्ष्ये मानवाधिकारशिक्षायाः उपादेयता	डा. प्रेमसिंहसिकरवारः	50 - 54
11. A Comparative study of Physical Fitness between Tribal & Urban Sr College Boys Student of M U	Shri Andhale Shankar B	55 - 60
12. Evolution of Human Rights: A Theoretical Perspective	Dr Suman Singh	61 - 69
13. Right School: Reaching to the Children with Rights	Dr. Shweta Sood	70 - 73
14. हिन्दी सिनेमा के पर्दे पर मूल्य शिक्षा	डॉ. गीता दुबे	74 - 76
15. मूल्यों के विकास में परिवार की भूमिका	डॉ. आरती शर्मा	77 - 80
16. The Guru Tattva	Arun Kumar Upadhyay	81 - 88
17. महाभारते मूल्यानि	देवकी धोंगडे	89 - 91
18. नीतिसाहित्ये मूल्याशिक्षा	सत्यनारायणः	92 - 96
19. Human Rights in the Ancient Indian Religion	Jayanta Nuniya	97 - 100
20. मानवाऽधिकाराः बालाऽधिकाराश्च	सुजन बिश्वासः	101 - 102
21. वेदेषु उपनिषत्सु च मूल्यशिक्षा	योगेन्द्रकुमारः	103 - 104
22. मानवाऽधिकारः महिलाऽधिकारश्च	जितेन्द्र गुप्ता	105 - 108
23. पाठ्यचर्याविकासात्मकाधाराः वैशिष्ट्यञ्च	जगन्नाथवर्गः	109 - 115
24. शास्त्रशिक्षणे नवाचाराः	मम्मटवर्गः	116 - 118
25. मानवाऽधिकाराणां संरक्षणे राष्ट्रियमानवाऽधिकाराऽऽयोगस्य भूमिका	आनन्दवर्धनवर्गः	119 - 122
26. विषयाधारितम् अधिगममूल्याङ्कनम्	वामनवर्गः	123 - 127
27. सामाजिक-राजनैतिक-सांस्कृतिक-भौगोलिक-आर्थिकविविधताः शैक्षिकदृष्टिश्च	कुन्तकवर्गः	128 - 130
28. साकल्यशिक्षायाः क्रियान्वयने अनुभूयमानाः समस्याः समाधानानि च	भामहवर्गः	131 - 134

Scanned with OKEN Scanner

Evolution of Human Rights: A Theoretical Perspective

Dr Suman Singh *

(Human rights are a product of a philosophical debate that has raged for over two thousand years within the European societies and their colonial descendants. This argument has focused on a search for moral standards of political organization and behaviour that is independent of the contemporary society. In other words, many people have been unsatisfied with the notion that what is right or good is simply what a particular society or ruling elite feels is right or good at any given time. This unease has led to a quest for enduring moral imperatives that bind societies and their rulers over time and from place to place.)

Keywords: Human Rights, political philosophy, Natural Rights, Social Contract, United Nations

Introduction

The concept of human rights is the result of the long evolution of philosophical, political, legal and social reflection, inseparably connected to the social-democratic traditions. The concepts and ideas of profound thinkers of time, such as Aristotle, Cicero, Grotius, Montesquieu and eminent jurists found their reflections in many documents with institutional character which emphasized a well deliberate conception of human rights and liberties and much later the Universal Declaration of Human Rights adopted on December 10th 1948 by the General Assembly of the United Nations Organization ascertained for the first time in the history of mankind the fundamental human rights and liberties in a political- legal document with universal character.

Human Rights are commonly understood as "inalienable fundamental rights" to which a person is inherently entitled simply because she or he is a human being. Human Rights are thus conceived as universal and egalitarian. At the international level human rights have become a movement.

Historical Evolution of the Human Rights concept:

Human Rights is a 20th century term for what had been traditionally known as "Natural Rights" or in a more appealing phase, the "Rights of Man". The notion of "Rights of Man" and other such concepts of human rights are as old as humanity. These rights of men had a place almost in all the ancient societies of the world, though they were not referred to by that time.

The term 'Human Rights' is comparatively of recent origin. But the idea of human rights is as old as the history of human civilization. Human Rights are deeply rooted in the historical past. The history of mankind has been firmly associated with the struggle of individuals against injustice, exploitation and disdain.

The roots of human rights can be traced to the Babylonian laws. The Babylonian King

* *Contract Teacher in Political Science, Rashtriya Sanskrit Sansthan (DU), Mumbai Campus.*

Scanned with OKEN Scanner

Hammurabi issued a set of laws to his people called 'Hammurabi's Codes', which contained fair wages, protection of property and charges against them to be proved at trial. Greek philosopher Plato, Aristotle and Roman philosopher Cicero advocated the natural law, natural rights and human rights. According to Cultural dictionary human rights can be defined as 'freedom from arbitrary interference or restriction by Governments'. The term encompasses largely the same rights called civil rights or civil liberties but often suggests rights that have not been recognised.

The origin of human rights also can be credited to era of Renaissance Humanism in the early modern period. Prior to this habeas corpus had been explained in the Magna Carta of 1215 A.D. The European wars of religion and the civil wars of 17th century England gave rise to the philosophy of liberalism and belief in human rights became a central concern of European intellectual culture during 18th century 'Age of Englightenment'. The idea of human rights lay at the core of the American and French revolutions A.D.1776 & A.D.1789 respectively which paved the way for the advent of universal suffrage. The World Wars of the 20th century led to the Universal Declaration of Human Rights.

A declaration for religious tolerance on an egalitarian basis can be found in the 'Edicts of Ashoka', which emphasise the importance of tolerance in public policy by the government. The slaughter and capture of prisoners of war was also condemned by Ashoka. According to historian John Esposito, Prophet Muhammad condemned female infanticide, exploitation of poor, usury, murder, false contracts and theft. He also incorporated Arabic and Mosaic laws and customs of the time into his divine revelations. The Constitution of Medina (Charter of Medina) established the security of the community, freedom of religion, security of women.

The modern sense of human rights can be traced to Renaissance Europe and Protestant Reformation, as also the disappearance of the feudal authoritarianism and religious conservatism that dominated the Middle Ages. According to Jack Donnelly, in the ancient world, "traditional societies typically have had elaborate systems of duties.... conceptions of justice, political legitimacy and human flourishing that sought to realize human dignity, flourishing or well-being entirely independent of human rights." Then Magna Carta (1215) was related to General Charter of Rights. The statue of Kalisz (1264) gave privileges to the Jewish minority in the Kingdom of Poland. In 1525, in Germany, the Peasants put their 'Twelve Articles' i.e demands towards the 'Swabian League' in the German peasant's war. In Britain in 1683, the English 'Bill of Rights' or Act Declaring the Rights and Liberties of the Subject and settling the 'Succession of the Crown' and the Scottish Claim of Right each made illegal a range of oppressive governmental actions.

Scanned with OKEN Scanner

Next traces of human rights are found in the revolutions of 1776 (American Revolution) and 1789, French Revolution leading to the adoption of the United States Declaration of Independence and the French Declaration of Rights of Man and of the Citizen respectively both of which established certain legal rights. Additionally, the Virginia Declaration of Rights of 1776 encoded into law a number of fundamental civil rights and civil freedoms.

These were then followed by developments in philosophy of human rights by philosophers such as Thomas Paine, John Stuart Mill and G.W.F Hegel during 18th and 19th centuries. The term human rights probably came into use sometime between Paine's 'The Rights of Man' and William Lloyd Garrison's 1831 writings in 'The Liberator' in which he stated that he was trying to enlist his readers in 'the great cause of human rights'. In the 19th century human rights became a central concern over the issue of 'slavery'. In Britain William Wilberforce worked towards it and the result was that Britain passed Slave Trade Act, 1807 and 'Slavery Abolition Act 1833. In America Northern States already abolished slavery and Southern states did it later.

In the 20th century we find many such human rights movements in one form or another such as labour unions and their rights for labour in North America. The Women's rights movements also were started in many countries. In India Mahatma Gandhi's movement to free the natives and Dr.B.R.Ambedkar's movement of liberation of Depressed Classes within Hindu Community are also noteworthy so far as the Human Rights are concerned. The establishment of the 'International Committee' of the Red Cross the 1864 'Lieber Code' and the first of the 'Geneva Conventions' in 1864 laid the foundations of 'International Humanitarian Law.

The huge losses of human life and gross abuses of human rights that took place during World Wars developed the modern human rights instruments. The League of Nations was established in 1919 and its goals included disarmament, preventive war through collective security, settling disputes between countries through negotiation and diplomacy and improving global welfare. Enshrined in its Charter was a mandate to promote many of the rights later included in the Universal Declaration of Human Rights. At the 1945 Yalta Conference, the Allied powers agreed to create a new body i.e United Nations that now make up international humanitarian law and international human rights law.

The most widely accepted human rights document in international relations is the Universal Declaration of Human Rights, which states that "recognition of the inherent dignity and of the equal and inalienable rights of all members of the human family is the foundation of freedom, justice and peace in the world" and "All humans are born fee and equal in dignity and rights". The declaration suggests that recognition of human dignity and rights go hand in hand, and that this recognition is the foundation of freedom, justice and peace in the world

Scanned with OKEN Scanner

According to this idea, all humans have a moral quality that requires a respect for their human rights. In effect this means that since all humans have dignity by virtue of being human, human rights are those rights that humans have by virtue of being human.

Philosophy of Human Rights

The philosophy of the human rights attempts to examine the underlying basis of the concept of human rights and critically looks at its content and justification. Several theoretical approaches have been advanced to explain how and why the concept of human rights developed.

One of the oldest Western philosophies on human rights is that they are a product of a natural law, stemming from different philosophical or religious grounds. Other theories hold that human rights codify moral behaviour which is a human social product developed by a process of biological and social evolution (associated with Hume). Human rights are also described as a sociological pattern of rule setting (as in the sociological theory of law and the work of Weber). These approaches include the notion that individuals in a society accept rules from legitimate authority in exchange for security and economic advantage (as in Rawls) – a social contract. The two theories that dominate contemporary human rights discussion are the interest theory and the will theory. Interest theory argues that the principal function of human rights is to protect and promote certain essential human interests, while will theory attempts to establish the validity of human rights based on the unique human capacity for freedom.

Theoretical Approaches

Natural rights

Natural law theories base human rights on a "natural" moral, religious or even biological order that is independent of transitory human laws or traditions. Socrates and his philosophic heirs, Plato and Aristotle, posited the existence of natural justice or natural right. Of these, Aristotle is often said to be the father of natural law, although evidence for this is due largely to the interpretations of his work by Thomas Aquinas. The development of this tradition of natural justice into one of natural law is usually attributed to the Stoics.

Natural law theories have featured greatly in the philosophies of Thomas Aquinas, Francisco Suárez, Richard Hooker, Thomas Hobbes, Hugo Grotius, Samuel von Pufendorf, and John Locke.

In the 17th century Thomas Hobbes founded a contractualist theory of legal positivism beginning from the principle that man in the state of nature, which is to say without a "commonwealth" (a state) is in a state of constant war one with the other and thus in fear of his life and possessions (there being no property nor right without a sovereign to define it). Hobbes

asserted natural law as how a rational human, seeking to survive and prosper, would act; the first principle of natural law being to seek peace, which is self-preservation. Natural law (which Hobbes accepted was a misnomer, there being no law without a commonwealth) was discovered by considering humankind's natural interests; whereas previous philosophers had said that natural rights were discovered by considering the natural law. In Hobbes' opinion, the only way natural law could prevail was for human beings to agree to create a commonwealth by submitting to the command of a sovereign, whether an individual or an assembly of individuals. In this lay the foundations of the theory of a social contract between the governed and the governor.

Hugo Grotius based his philosophy of international law on natural law. He wrote that "even the will of an omnipotent being cannot change or abrogate" natural law, which "would maintain its objective validity even if we should assume the impossible, that there is no God or that he does not care for human affairs."

This is the famous argument *etiamsi daremus* (*non esse Deum*), that made natural law no longer dependent on theology. John Locke incorporated natural law into many of his theories and philosophy, especially in *Two Treatises of Government*. Locke turned Hobbes' prescription around, saying that if the ruler went against natural law and failed to protect "life, liberty, and property," people could justifiably overthrow the existing state and create a new one.

Social contract

The English philosopher Thomas Hobbes suggested the existence of a hypothetical *social contract* where a group of free individuals agree for the sake of preservation to form institutions to govern them. They give up their natural complete liberty in exchange for protection from the Sovereign. This led to John Locke's theory that a failure of the government to secure rights is a failure which justifies the removal of the government, and was mirrored in later postulation by Jean-Jacques Rousseau in his "Du Contrat Social" (The Social Contract).

Reciprocity

The Golden Rule or the *ethic of reciprocity* states that one must do unto others as one would be treated themselves; the principle being that reciprocal recognition and respect of rights ensures that one's own rights will be protected. This principle can be found in all the world's major religions in only slightly differing forms, and was enshrined in the "Declaration Toward a Global Ethic" by the Parliament of the World's Religions in 1993.

Other theories of human rights

The philosopher John Finnis argues that human rights are justifiable on the grounds of their instrumental value in creating the necessary conditions for human well-being. Interest theories

Scanned with OKEN Scanner

highlight the duty to respect the rights of other individuals on grounds of self-interest. The biological theory considers the comparative reproductive advantage of human social behavior based on empathy and altruism in the context of natural selection.

Human security is an emerging school of thought which challenges the traditional, state -based conception of security and argues that a people-focused approach to security is more appropriate in the modern interdependent world and would be more effective in advancing the security of individuals and societies across the globe.

Critiques of human rights

The idea of human rights is not without its critics. Jeremy Bentham, Edmund Burke, Friedrich Nietzsche and Karl Marx are examples of historical philosophers who criticised the notion of natural rights. Alasdair MacIntyre is a leading contemporary critic of human rights. The criticisms are discussed below.

Edmund Burke on Natural Rights

Edmund Burke an 18th-century philosopher, political theorist and statesman is largely associated with the school of conservatism. His views on natural rights are best articulated in *Reflections on the Revolution in France*, which directly attacked the *Declaration of the Rights of Man and the Citizen* (1789) and its authors.

A great deal of Burke's uneasiness of the *Declaration* lies in the drafter's abandonment of the existing establishment. For Burke, constitutional legitimacy was derived not from the Rousseauian doctrine of general will, but from a form of inherited wisdom. He thought that it was arrogant and limiting for the drafters of the *Declaration* to cast aside traditional notions that had stood the test of time.

Burke did not deny the existence of natural rights; rather he thought that the a priori reasoning adopted by the drafters produced notions that were too abstract to have application within the framework of society. In stating that "the pretended right of these theorists are all extremes; and in a proportion as they are metaphysically true, they are morally and politically false, Burke identified that abstract rights are meaningless without a societal framework.

In contrast to Locke, Burke did not believe the purpose of government was to protect pre-existing natural rights; he believed "the primitive rights of man undergo such a variety of refractions and reflections that it becomes absurd to talk of them as if they continued in the simplicity of their original direction". For Burke it was the government, as a result of long social evolution, that transformed the meaningless natural rights into the practical advantage afforded to citizens. It was not the rights themselves, as much as the level of abstraction and the placing them

Scanned with OKEN Scanner

above government which Burke found dangerous. The natural rights "Against which there can be no prescription; against these no agreements is binding" gave the revolutionaries the tools to destroy the very society that Burke believed afforded them with rights. In this way Burke thought the rights contained in the *Declaration* would lead to "the antagonist world of madness, discord, vice, confusion, and unavailing sorrow."

Jeremy Bentham on natural rights

The 18th-century Utilitarian philosopher Jeremy Bentham criticised the *Declaration of the Rights of Man and the Citizen* in his text *Anarchical Fallacies*. He famously asserted that the concept of natural rights was "nonsense upon stilts". Bentham criticised the *Declaration* both for the language that it adopted and the theories it posited, stating; "Look to the letter, you find nonsense; look beyond the letter, you find nothing". One of the critiques Bentham levelled against the *Declaration* was its assertions of rights in the form of absolute and universal norms. Of the theoretical faults, Bentham thought that natural rights were a construction adopted to pursue the selfish aims of the drafters, of which no logical basis could be found. He acknowledged that it may be desirable to have rights, but "a reason for wishing that a certain right were established, is not that right; want is not supply; hunger is not bread."

To establish rights existed by virtue of laws enacted by a sovereign was logically sound, but to assert rights established by nature was not. "A natural right is a son that never had a father." He also believed that their individualistic approach was harmful to society.

Marxist Critique of Human Rights

In On the Jewish Question, Karl Marx criticized *Declaration of the Rights of Man and of the Citizen* as bourgeois ideology. For Marx, liberal rights and ideas of justice are premised on the idea that each of us needs protection from other human beings. Therefore, liberal rights are rights of separation, designed to protect us from such perceived threats. Freedom on such a view, is freedom from interference. What this view denies is the possibility, according to Marx, the fact that real freedom is to be found positively in our relations with other people. It is to be found in human community, not in isolation. So insisting on a regime of rights encourages us to view each other in ways which undermine the possibility of the real freedom we may find in human emancipation.

Marxist critical theorist Slavoj Žižek argued that: "liberal attitudes towards the other are characterized both by respect for otherness, openness to it, and an obsessive fear of harassment. In short, the other is welcomed insofar as its presence is not intrusive, insofar as it is not really the other. Tolerance thus coincides with its opposite. My duty to be tolerant towards the other

Scanned with OKEN Scanner

effectively means that I should not get too close to him or her, not intrude into his space in short, that I should respect his intolerance towards my over-proximity. This is increasingly emerging as the central human right of advanced capitalist society: the right not to be 'harassed', that is, to be kept at a safe distance from others." and "universal human rights are effectively the right of white, male property-owners to exchange freely on the market, exploit workers and women, and exert political domination."

Alasdair MacIntyre on Human Rights

Alasdair MacIntyre a Scottish philosopher criticises the concept of human rights in *After Virtue* and he famously asserts that "there are no such rights, and belief in them is one with belief in witches and in unicorns." MacIntyre argues that every attempt at justifying the existence of human rights has failed. The assertions by 18th century philosophers that natural rights are self -evident truths, he argues, are necessarily false as there are no such things as self-evident truths. He says that the plea 20th century philosophers made to intuition show a flaw in philosophical reasoning. MacIntyre then outlines that, although Dworkin is not wrong in asserting that the inability to demonstrate a statement does not necessitate its falsity, the same argument can be applied in relation to witches and unicorns.

MacIntyre made this critique of human rights in the context of a wider argument about the failure of the Enlightenment to produce a coherent moral system. MacIntyre argues, the enlightenment placed the individual as the sovereign authority to dictate what is right and wrong. However allegiances to historical notions of morality remained and philosophers sought to find a secular and rational justification for existing beliefs. The problem, MacIntyre maintains, is that theological morality was developed to overcome defects in human nature; to posit an example of the ideal. Without this notion of 'perfect humanity' the only remaining foundation to build a moral theory on was the foundation of imperfect human nature. For MacIntyre, the result was a collection of moral stances, each claiming to have a rational justification and each disputing the findings of the rival notions.

MacIntyre believes that a number of the moral debates that occur in society can be explained as a result of this failure of the "Enlightenment Project". Human rights are an example of a moral belief, founded in previous theological beliefs, which make the false claim of being grounded in rationality. To illustrate how the principles lead to conflict, he gives the example of abortion; in this case the right of the mother to exercise control over her body is contrasted with the deprivation of a potential child to the right to life. Although both the right to liberty and the right to life are, on their own, considered morally acceptable claims, conflict arises when we posit them against each other.

Scanned with OKEN Scanner

Conclusion

Kofi Annan, Secretary General of the United Nations in his message to the world on the 5oth Anniversary of the Universal Declaration told humanity what its message is for the generation ahead:

"It is the universality of human rights that gives them their strength. It endows them with the power to cross any border, climb any wall, defy any force. The struggle for universal human rights has always and everywhere been the struggle against all forms of tyranny and injustice against slavery, against colonialism, against apartheid. It is nothing less and nothing different today. Young friends all over the world, You are the ones who must realize these rights, now and for all time. Their fate and future is in your hands. Human rights are your rights. Seize them. Defend them. Promote them. Understand them and insist on them. Nourish and enrich them. They are the best in us. Give them life".

References

1. "Against human rights - Slavoj ŽiŽek". libcom.org.
2. Agamben G (2000) *Means without Ends: Notes on Politics*, trans. BinettiVCasarino C. Minneapolis, MN: University of Minnesota Press.
3. Bentham, Jeremy. "Anarchical Fallacies" (PDF)
4. Cohen J (2012) *Globalization and Sovereignty: Rethinking Legality, Legitimacy, and Constitutionalism.* Cambridge: Cambridge University Press.
5. Freeman, Michael (1980). *Edmund Burke and the Critique of Political Radicalism*. Oxford: Basil Blackwell Publisher
6. Giddens A (1981) *The Nation-state and Violence*. Cambridge: Cambridge University Press.
7. Hegel GWF (2004 [1820]) *Elements of the Philosophy of Right*, ed. Wood A, trans. Nisbet HB. New York, NY: Cambridge University Press
8. Knight, Kelvin (1998). *The MacIntyre Reader*. Cambridge: Polity Press.
9. Kofi Annan, message of 5oth Anniversary of the Universal Declaration of Human Rights in 1997, December 13, 1997, cited by V.R. Krishna lyer, "The Dialectics and Dynamics of Human Rights in India, Yesterday, Today and Tomorrow," Tagore Law Lectures, (Calcutta: Eastern Law House, 1999) 26.
10. MacIntyre, Alasdair (1981). *After Virtue*. London: Gerald Duckworth & Co.
11. Parekh B (2002) Reconstituting the modern state. In: Anderson J (ed.) *Transnational Democracy: Political Spaces and Border Crossings*. London: Routledge.
12. Parekh, Bhikhu (1973). *Bentham's Political Thought*. London: Croom Helm.

Scanned with OKEN Scanner

ISSN – 2349-3100
नवमोऽङ्कः

Peer Reviewed
Refereed Journal

[illegible]

वेदज्योतिष्मती

Vedajyotishmati

प्रधानसम्पादकः

प्रो. हंसधरझा

सम्पादकः

डॉ. आशीषकुमारचौधरी

प्रकाशकः

संस्कृत-अनुसंधान-संस्थानम्, के. एम. टैंक लहेरियासरायः, दरभंगा

ISSN – 2349-3100

विषयसूची

विषय	लेखक	पृष्ठसंख्या
सम्पादकीयम्	प्रो. हंसधर झाः	3
सिंह-मकरस्थगुरुदोषमीमांसा	प्रो. हंसधरझाः	5
पुराणसाहित्यस्योपयोगिता	डा. दिलीप कुमार झा	9
वैदिकशिक्षायाः समालोचनात्मकविश्लेषणं वर्तमानशिक्षायां तस्याः प्रासङ्गिकता च	Dr. V S V Bhaskar Reddy	12
सूर्य सिद्धान्त का विशिष्ट सन्दर्भ और नवविध कालमान	डॉ. राजीव रंजन	17
व्याकरणज्योतिषयोरालोके आजीविकाविचारः	योगेशकुमार	22
काव्यलक्षणविमर्शः	डा.स्वर्गकुमारमिश्रः	24
वैदिकसाहित्ये वास्तुसंगीतकलयोर्विमर्शः	डॉ. शैलेन्द्रप्रसाद उनियालः	28
सामुद्रिकशास्त्र का ऐतिहासिक परिचय	डा.आशीष कुमार चौधरी	33
A Comparative study of Physical Fitness between Tribal and Urban Senior College Girls Student of Mumbai University	Dr. M. S. Gomchale Andhale Shankar Baburao	36

ISSN – 2349-3100

वैदिकशिक्षायाः समालोचनात्मकविश्लेषणं वर्तमानशिक्षायां तस्याः प्रासङ्गिकता च

Critical Analysis of Vedic Education & Its Relevance to Present Education

✍ *Dr. V S V Bhaskar Reddy*

भारते शिक्षायाः बीजारोपणं प्रायः ख्रीष्टाब्देः पूर्व 2500 BC वर्षैव जातमासीत्। परन्तु तस्याः सुसम्बद्ध-दर्शनं विचाराः व्यवस्था नियमा आरम्भप्रक्रिया समापनप्रक्रियादयः वैदिककालैव समारब्धा आसन्। सामान्यतया वैदिककाले प्रदत्ता शिक्षा, वैदिककालीन-विचाराणां सम्प्रत्ययादीनामनुसारं प्रदत्ता च शिक्षा वैदिकशिक्षेति व्यवह्रियते। वैदिककालीन शिक्षाव्यवस्थायां अग्रिमवर्णीयानां विशिष्य पुरोहितानां ब्राह्मणानां वा सर्वाऽऽधिपत्यम् एकमात्राऽऽधिपत्यं वाऽऽसीत्। ते च वैदिककाले सञ्जनितानां महत्वपूर्णपरिवर्तनानामाधारेण वैदिकशिक्षा चरणद्वये भागद्वये वा विभक्ता वर्तत इतिहासकारैः। यथा - 1. ऋग्वेदकालीनशिक्षा 2. उत्तरवैदिककालीनशिक्षा चेति। अत्र पूर्वस्याः कालाऽऽवधिः 1500 BC/BCE तः 1000 BC/BCE पर्यन्तं भवति, अपरस्याः कालाऽऽवधिः 1000 BC/BCE तः 600 BC/BCE पर्यन्तं भवति।

वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायाञ्च अवश्यमनुप्रयोगणीयाः बहवः विषयाः विचाराः सम्प्रत्ययाः वैदिककालीनशिक्षाव्यवस्थायां दृश्यन्ते। एवमेव परिहरणीयाः केचन विषयाः विचाराः सम्प्रत्ययाः अवगुणाश्च दृश्यन्ते। 'सन्तः परीक्ष्यान्यतरं भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिरि'ति कालिदासस्य वचनानुसारं युक्तियुक्ततया विवेचनात्परं गुणानां स्वीकारः, दोषाणाम् अवगुणानां वा तिरस्कारो परित्यागो वा विवेकशीलिनां लक्षणं भवति। वैदिककालीनशिक्षाव्यवस्थायां परिदृष्टानां गुणानाम् अवगुणानाञ्च विवेचनं युक्तियुक्ततया अधोप्रस्तूयते।

I. वैदिकशिक्षायाः गुणाः - वर्तमानकालीनशिक्षाव्यवस्थायाञ्च सर्वदा अनुप्रयोगणीयाः शिरोदार्ढ्याः केचन सम्प्रत्ययाः विचाराः वैदिकशिक्षायां दृश्यन्ते। वर्तमानतकालीनशिक्षा-व्यवस्थायां तेषां सम्प्रत्ययादीनां क्रियान्वयनेन सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय च कारणं भजते, उत्तमोत्तमभारतीयसमाजस्य निर्माणम् अंशिकतया कर्तुं शक्यत इत्यत्र नास्ति लेशमात्रमपि सन्देहः। ते च गुणाः यथा—

1. निःशुल्कशिक्षा (Free Education) - ऋग्वेदकाले उत्तरवैदिककाले च गुरुकुलादिषु छात्रेभ्यो निःशुल्कतया शिक्षा प्रदीयते स्म। विद्यार्जनाय छात्रेभ्यो लेशमात्रं नाममात्रं वा शुल्कं नैव स्वीक्रियते स्म, प्रत्युत भोजन-आवासादि सौविध्यानि निःशुल्कतया प्रकल्प्यन्ते स्म। तदानींतनकाले विद्यार्जनमेव भवति स्म, न तु विद्याक्रयः। वर्तमानकालीनशिक्षाव्यवस्थायां बहुत्र विद्याक्रयो जायमानो वर्तते, न तु विद्यार्जनं भवति। अनेन सम्पन्नानामेव विद्यार्जनाय शैक्षिकावसराः समुपलभ्यन्ते, ते एव जीवने अग्रिमपथं प्राप्तुं योग्याः जायन्ते।

2. आवासीय /आश्रमविद्यालयाः (Residential Schools) - ऋग्वेदकाले उत्तरवैदिककाले च गुरुकुलादिषु विद्यार्जनाय प्रविष्टाः छात्राः न केवलं ज्ञानार्जनमेव कुर्वन्ति स्म, अपि च गुरुकुलादिषु गुरुणा सह, गुरोः परिवारेण सह सहपाठिभिस्सह सहजीवनं करणीयं भवति। अर्थात् गुरुशिष्याणां प्रत्यक्षसम्बन्धाः न केवलं अध्यापनं कालं यावदेव सीमितं न भवन्ति, अपि च अहर्निशं(24*7) भवन्ति। अनेन प्रत्येकं दिने यातायाताय जायमानस्य समयव्यर्थतात्मुक्तिः जायते, सक्रियात्मकाधिगमस्योपरि सकारात्मकप्रभावश्च दृश्यते।

3. उत्तमोत्तमजीवनाभ्यासानां विकासः (Development of Good habits)- गुरुकुलादिषु निर्दिष्टानाम् आनुशासनिकनियमानां पालनं कुर्वन्नेव विद्यार्जनं करणीयं भवति स्म । यथा - ब्रह्ममूर्ते जागरणं उत्थानं वा, ज्येष्टानां प्रति विधेयता, ज्येष्टानां वाक् पालनं, गुरुमातरं प्रति गुरुपरिवारं प्रति च विधेयता, स्वास्थ्यस्य शुद्धतायाः स्वच्छतायाश्च पालनं, प्रकृतिं प्रति पूज्यभावः, नैव कस्यचिदपि निन्दा अपमानं वा, न वा द्वेषशीलता न च क्रोधशीलता, परस्पर-सहयोगः, सामूहिकजीवनमित्यादयः । फलतः छात्राणां व्यवहारे उत्तमोत्तजीवनाभ्यासानां विकासो जायते ।

4. सामाजिकगुणानां विकासः (Social development) - अध्ययनकाले सर्वे छात्राः गुरुकुलेषु सहपाठिभिस्सह सामूहिकजीवनं करणीयं भवति । अनेन अन्येषां छात्राणां व्यवहारे दृश्यमानानां उत्तमोत्तमाभ्यासादीनाञ्च स्वीकरणाय चावसराः समुपलभ्यन्ते

ISSN 0976-8645

JAHNAVI SANSKRIT E-JOURNAL

[A First International Electronic Peer-reviewed Quarterly Refreed UGC Approved Sanskrit Tri-lingual Journal]

A portal of Sarasvatniketanam

त्रयस्त्रिंशे अङ्के भवतां समेषां मङ्गलाभिनन्दनम्।

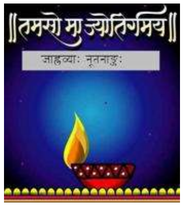

www.sarasvatniketanam.org , www.jahnavisanskritejournal.in

मुख्यसम्पादकः	विद्यावाचस्पति-डा.सदानन्दझाः ।
पुनर्वीक्षकाः	डा. अशोकचन्द्रगौडशास्त्री, डा. त्रिलोकझा, डा. अनिलप्रतापगिरिः ।
विशिष्टपुनर्वीक्षकाः	Dr. PK Wendabona, Department of Basic Principles, Institute of Indigenous Medicine University of Colombo, Rajagiriya Sri Lanka
सम्पादकाः	डा. श्रीनाथधरद्विवेदी, डा. जगदीशनारायण तिवारी, डा. बिपिनकुमारझाः ।
प्रकाशकः	डा. बिपिनकुमारझाः ।
प्रकाशन-सम्पादनसहायकाः	डा. सुमनदीक्षित, डा. सरिताश्रीवास्तव ।
प्रतिनिधयः (लोकार्पणसन्दर्भे)	डा. जगदीशनारायण तिवारी
तकनीकिप्रवन्धनसहायकः	रित्ज़ वेव होस्टिंग, बंगलोर।

सारस्वत-निकेतनाख्या संस्कृतसेवासरणिः पूज्यगुरुपादैः कीर्तिशेषैः राष्ट्राधीशपुरस्कृतैः **देवानन्दझावर्य्यैः** प्रातस्मरणीयैः स्वनामधन्यैः राष्ट्राधीशपुरस्कृतैः **तुलानन्दाऽपरनामनारायणझावर्य्यैश्च** उद्घाटिता विद्यावाचस्पत्युपाधिभाक्-सदानन्दझाऽनुगता एषा सरणिः बिपिनझाद्वारा संस्कृतानुरागिसहयोगैः विविधेषु रूपेषु संस्कृतप्रचार-प्रसाराय सन्नद्धा वर्तते तेषु रूपेषु एवायं प्रवन्धः जाह्नवी संस्कृत ई जर्नलनाम्ना विश्वेऽस्मिन् प्रथितः।

JAHNAVI-A First International Electronic Peer-reviewed Quarterly Refreed UGC Approved Sanskrit Tri-lingual (Sanskrit, Hindi & English) Journal with Impact Factor.

विषयानुक्रमणिका

I	प्रस्फुटम्	
1	सम्पादकीयम्	विद्यावाचस्पतिः डा. सदानन्दझा
2	प्रकाशकीयम्	डा. बिपिनकुमारझा
II.A	साहित्यानुरागः	
1	भारतीय संस्कृति के पोषक तत्त्व : भाषा एवं धर्म	सतीश कुमार सिंह
2	अवरोह्यभिक्रमः शृङ्खलाभिक्रमः मैथेटिक्स् अभिक्रमः वा	सत्यदेवः
3	चन्द्रप्रभचरितस्य महाकाव्यत्वम्	चाँदनी
4	संस्कृताध्ययनाध्यापनस्य प्रासङ्गिकता	सुनीलकुमारठाकुरः
5	जातकपारिजातस्य समीक्षात्मकमध्ययनम्	कार्तिककुमारः
6	साम्प्रतिककाले ज्योतिषशास्त्रस्योपयोगिता	कृष्णकुमारमिश्रः
7	ग्रहमैत्रीविचारः	सत्यानन्दझा
8	औपनिषद अद्वैत विमर्श	वेदव्रत
9	धर्मविजयनाटके ध्वनिसौन्दर्यम्	नम्रताउपाध्यायः
10	शिक्षण प्रक्रिया में योग	प्रदीप कुमार झा
11	बिहार के महान् वैज्ञानिक आर्यभट्ट	रतीशकुमारझा
12	उपनिषत्सु नैतिकमूल्यानि	सच्चिदानन्द स्नेही
13	वैयाकरणनये व्यापारस्वरूपविमर्शः	रामबाबूपाण्डेयः
14	दर्शनशास्त्रशिक्षणे ह्युरिस्टिक्-विधिः	जितेन्द्रकुमाररायगुरुः

एते पञ्चान्यथासिद्धा दण्डत्वादिकमादिमम्।

घटादौ दण्डरूपादि द्वितीयमपि दर्शितम्।।

तृतीयं तु भवेद् व्योम कुलालजनकोऽपरः।

पञ्चमो रासभादिः स्यादेतेष्वावश्यकस्त्वसौ।।[86]

एतेषां पञ्चानां स्वरूपावलोकनेन इदमेवायाति यत् अन्यथासिद्धं तदेव भवति, येन विनाऽपि कार्यसिद्धिः स्यात्। उक्तान्यथासिद्धेषु एकोऽप्यन्यथासिद्ध- प्रकारो अधिश्रयणादीनां नास्ति। अधिश्रयणादिव्यापारं विना विक्लित्तिर्न सिध्यति, अतो न तेषां व्यापाराणां विक्लित्तिं प्रति अन्यथासिद्धत्वम्।

सिद्धान्ते तु तेषामन्यथासिद्धत्वाभावाद् विक्लित्तिं प्रति जनकत्वेन तज्जन्यत्वे सति तज्जन्यजनकत्वमस्त्येवेति न कश्चनदोषः। तस्मात् नागेशमते - व्यापारत्वं तज्जन्यत्वे सति तज्जन्यजनकत्वम्।

सिद्धान्ते तु कौण्डभट्टाभिमत व्यापारलक्षणं स्वीकरणीयं युक्तियुक्तत्वात् नागेशोक्त व्यापारलक्षणस्वीकारे तदुक्त सकर्मकत्वाकर्मकत्वस्वरूप विवेचनप्रसङ्गे 'क्वचित्तु फलांशाभावादकर्मकत्वम्' यथाऽस्त्यादौ केवलं सत्तादिरेवार्थः फलांशस्य सूक्ष्मदृष्ट्याऽप्यप्रतीतेः'।[87]

एवञ्च फलाभावात् व्यापारमात्रमेवार्थः अस्त्यादीनाम् अतः शब्दशास्त्रीय कर्मसंज्ञकार्थान्वय्यर्थकत्वं सकर्मकत्वम्' इति नागेशाशयः। तर्हि तद्वाच्ये व्यापारे तद्वाच्यफलजनकत्वं कथं स्यात्। फलांशाभावात् धातुवाच्यव्यापारे धातुवाच्य- फलजनकत्वाभावात्, धातुवाच्यत्वे सति धातुवाच्यफलजनकत्वं व्यापारे नास्ति अतः अव्याप्तिदोषः। अतोऽव्याप्तिदोषग्रस्तत्वात् नागेशाभिमतं व्यापारलक्षणं न युक्तमिति।

86 न्यायसि(न्तमुक्तावली, का. 19—22

87 प. ल. म. धत्वर्थविचारः, पृ. 46—48

[A First International Electronic Peer-reviewed Quarterly Refreed UGC Approved (41039) Sanskrit Tri-lingual Journal with Impact Factor] ISSN 0976-8645
Available at- www.jahnavisanskritejournal.in Issue-33rd , Year 08, Vol -II, April, 2018

दर्शनशास्त्रशिक्षणे ह्युरिस्टिक्-विधिः

जितेन्द्रकुमाररायगुरुः[88]

शोधसारः

आधुनिकयुगं विज्ञानस्य सूचनाप्रविधेश्च युगं वर्त्तते। विकासशीलयुगे अस्मिन् शिक्षणव्यवस्थायाः शैक्षिकसिद्धान्तस्य च प्राचीनशैली शिथिलायते। शिक्षणप्रक्रिया सैद्धान्तिकत्वेन व्यावहारिकत्वेन च कलाविज्ञानयोः समन्वितस्वरूपमिति मन्यते। अद्य बालकेन्द्रितशिक्षाप्रणाल्यां बालकस्य अभिरुचि-मनोवृत्ति-शारीरिक-मानसिकक्षमताधारेण शिक्षणकार्यं सम्पाद्यते। अनुदिनं विज्ञानस्य प्रविधेः च नवीनाविष्कारेण शिक्षाप्रक्रियां प्रभावशालीं कर्तुं तत्र अनुसन्धानं प्रचलति। तस्य परिणामः शिक्षाप्रक्रियायां विविधानां प्रविधीनां विधीनां यन्त्राणां प्रयोगो दृश्यते। येषां प्रयोगेण स्वल्पावधौ अधिकच्छात्रेभ्यः सरलतया सुगमतया च प्रभाविशिक्षणं कर्तुं शक्यते।

विषयप्रवेशः -

शिक्षणमेका सोद्देश्ययुक्ता सामाजिकी मनोवैज्ञानिकी अन्तःक्रियात्मिका च प्रक्रिया। या कक्षावातावरणे निर्दिष्टोद्देश्यानां प्राप्तये छात्रशिक्षकयोर्मध्ये प्रचलति। यस्याः मुख्यमुद्देश्यं छात्राणां व्यवहारपरिवर्त्तनम्। बालकेन्द्रितशिक्षणप्रक्रियायां शिक्षणं सुग्राह्यं रोचकं सरसञ्च कर्तुम् अध्यापकैः शिक्षणे व्यूहाः, प्रविधयः, विधयः च व्यवह्रियन्ते। केचन अध्यापकाः भ्रमवशात् एतान् सर्वान् एकस्मिन् अर्थे व्यवहरन्ति। किन्तु एतेषु महान् भेदः वर्त्तते। यद्यपि स्वरूपदृष्ट्या एकस्य प्रयोगं विधित्वेन, व्यूहत्वेन, प्रविधित्वेन वा कुर्वन्ति, तथापि उद्देश्याधारेण प्रयोगाधारेण च भेदं द्रष्टुं शक्यते। साम्प्रतम् एतेषां वास्तविकस्वरूपमिह प्रस्तूयते।

शिक्षणविधिः (Teaching Method) -

शिक्षणविधिः शिक्षणस्यैकं साधनं भवति, येन शिक्षकः स्वस्य पाठ्यविषयं प्रभावपूर्णतया रोचकतया पाठयति। कस्मिन् विषये कः विधिराश्रयणीयः इति पाठ्यांशस्य प्रकृतिमेव अवलम्बते। अतः विधेर्सम्बन्धः व्यक्तिविशेषेण भवति। शिक्षणविधौ पाठ्यवस्तु, प्रस्तुतीकरणञ्च प्रमुखं पक्षद्वयं भवति। शिक्षणविधेः निर्धारणं पाठ्यवस्तुनः प्रकृत्यनुसारमेव क्रियते। प्रस्तुतीकरणस्य प्रकाराः त्रयः सन्ति।

1. कथनविधयः यथा - व्याख्यानं, प्रश्नादयः।
2. दृश्यविधयः यथा - प्रदर्शनं, निरीक्षणादयः।
3. कार्यविधयः यथा - योजना, प्रयोगादयः।

शिक्षणव्यूहः (Teaching Strategy) -

व्यूहस्यार्थः युद्धकौशलं युद्धकला वा भवति। व्यूहः एका विशिष्टकार्यप्रणाली वर्त्तते यस्याः प्रयोगः युद्धस्य सन्दर्भे एव भवति । किन्तु आधुनिकसन्दर्भे शिक्षणादिक्षेत्रेषु प्रयोगः क्रियते। शिक्षणव्यूहे उद्देश्यानां महत्त्वं भवति। शिक्षणव्यूहस्य चयनमुद्देश्यानामाधारेणैव भवति। शिक्षणव्यूहः द्विधा विभज्यते।

1. प्रभुत्ववादिशिक्षणव्यूहः
   अत्र पारम्परिकशिक्षणपद्धतयः समायान्ति। व्याख्यानम्, प्रदर्शनम्, प्रबोधनवर्गः, अभिक्रमितानुदेशनम् च।
2. जनतान्त्रिकशिक्षणव्यूहः
   अत्र आधुनिकशिक्षणपद्धतयः अन्तर्भवन्ति। योजना, अन्वेषणम्, वादविवादः, भूमिकानिर्वाहः, मस्तिष्कविप्लवः इत्यादयः।

शिक्षणयुक्तयः (Teaching Tactics) -

88 एकलव्यपरिसरः, अगरतला

ISSN 0976-8645

शिक्षणव्यूहस्य क्रियान्वयने अध्यापकैः याः क्रियाः क्रियन्ते ताः शिक्षणयुक्तयः इति प्रोच्यन्ते। युक्तीनां प्रयोगेण पाठः सरलः, स्पष्टः बोधगम्यश्च भवति। कक्षासम्प्रेषणदृढीकरणे युक्तयः साहाय्यं कुर्वन्ति। युक्तयः शाब्दिकाः अशाब्दिकाश्च भवन्ति। एताषामुपयोगं कक्षापरिस्थित्यनुगुणं शिक्षकाः कुर्वन्ति। युक्तयः इत्थं भवन्ति -

1. वाञ्छितानुक्रियायै उद्दीपनस्य प्रसुतीकरणम्
2. समुचितानुक्रियायाः पुनर्बलनम्
3. अनुक्रियाणाम् अधिगमस्य क्रमे स्थापनम्
4. अधिगतानुक्रियाणाम् अभ्यासः
5. विभेदीकरणपरिस्थितेः उत्पादनम्
6. सामान्यीकरणम् इत्यादीनि।

शिक्षणप्रविधयः (Teaching Techniques) -

शिक्षणप्रविधियः तानि साधनानि वर्त्तन्ते येषां प्रयोगेण छात्राः पाठने रुचिं प्रदर्शयन्ति, पाठ्यसामग्री सुस्पष्टा भवति, विषयवस्तु सरलतया सुगमतया च अधिगच्छन्ति च।वस्तुतः शिक्षणप्रविधीनां प्रयोगः शिक्षणं रोचकं प्रभावपूर्णं च कर्तुं क्रियते। शिक्षणे नैके प्रविधयः सन्ति। व्याख्या-स्पष्टीकरण-विवरण-वर्णन-कथाकथन-उदाहरण-प्रश्नोत्तरप्रविधयः इति।
उदाहरणार्थं व्याख्यानं शिक्षणविधिः भवति। किन्तु यदा व्याख्यानं कस्यापि विशिष्टोद्देश्यस्य प्राप्तये प्रयुज्यते तदा तत् शिक्षणव्यूहे अन्तर्भवति। शिक्षणविधौ प्रविधीनां साहाय्यं स्वीक्रियते। शिक्षणव्यूहौ शिक्षणयुक्तीनां प्रयोगः भवति। शिक्षणप्रविधीनां चयनं पाठ्यवस्तूनां प्रकृत्याधारितं भवति। युक्तीनां चयनम् अधिगमस्वरूपाधारितं भवति।

दर्शनम् -

दृश्यते अनेन इति दर्शनम् इति व्युत्पत्या दृशिर् प्रेक्षणे इत्यस्मात् धातोः ल्युट् प्रत्यये अनादेशे च दर्शनमिति रूपं सिद्ध्यति। प्राचीनकाले दर्शनशास्त्रम् अन्वीक्षिकी नाम्ना अपि व्यवहृतं भवति स्म। आन्वीक्षिकीपदस्य अर्थः अपि दर्शनम् अस्ति। उक्तञ्च -

प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्।
आश्रयः सर्वधर्मणां शाश्वदान्विक्षिकी मता।।

अतो अनेन स्पष्टं भवति यत् दर्शनशब्दस्य अर्थोऽवलोकनमस्ति, येन दृश्यते भिन्नजिज्ञासानां समाधानं वा भवति तदेव दर्शनम्। उपनिषत्सु प्रथमवारमेव दर्शनशब्दस्य प्रयोगः पारिभाषिके अर्थे सत्यस्य दर्शनाय अभवत्। यथा -

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।

अर्थात् ज्ञानचक्षुषा इदं चराचरम् याथातथ्येन दृश्यते विविच्यते समीक्ष्यते च तद् दर्शनम्। अतः समग्रमपि आध्यात्मिकाधिभौतिकञ्च विवेचनं यत्र भवति तद् दर्शनपदवाच्यं भवति।
दर्शनस्योदयो वेदकालात् एवाजायत। दर्शनं द्विविधम् आस्तिकं नास्तिकञ्चेति। तत्र अस्ति ईश्वरे मतिर्यस्य सः आस्तिकः। नास्ति ईश्वरे मतिर्यस्य नास्तिकः। आस्तिकविचारकाणि वैदिकानि दर्शनानि, नास्तिकविचारकाणि अवैदिकानि दर्शनानि इति व्यवह्रियते।

दर्शनशास्त्रस्य प्रकाराः -

आस्तिकदर्शनानि षट्- न्यायदर्शनम्, वैशेषिकदर्शनम्, सांख्यदर्शनम्, योगदर्शनम्, पूर्वमीमांसादर्शनम्, उत्तरमीमांसादर्शनम् इति।
नास्तिकदर्शनानि त्रीणि- चार्वाकदर्शनम्, बौद्धदर्शनम्, जैनदर्शनम् इति।

दर्शनशिक्षणविधयः -

[A First International Electronic Peer-reviewed Quarterly Refreed UGC Approved (41039) Sanskrit Tri-lingual Journal with Impact Factor]
Available at- www.jahnavisanskritejournal.in Issue-33rd , Year 08, Vol -II, April, 2018
ISSN 0976-8645

शिक्षणप्रक्रियायां शिक्षणस्य गुणवत्तासंवर्धनाय अनुदिनं नवीनविधयः आविष्कृताः भवन्ति। नैके विधयः शिक्षणे प्रयुज्यन्ते। दर्शनशास्त्रस्य शिक्षणाय पारम्परिकाधुनिकत्वेन नैके विधयः सन्ति। इह दर्शनशास्त्रशिक्षणस्य केचन विशिष्टविधयः उपस्थाप्यन्ते।
विकासविधिः, इतिहासविधिः, समस्याविधिः, निदर्शनविधिः, ह्यूरिस्टिक्विधिः, प्रायोजनविधिः च।
सत्सु विविधेषु विधिषु ह्यूरिस्टिक्विधिः कश्चन अभिनवविधिः। गहनविषयस्य शिक्षणम् अनेन विधिना सरलतया कर्तुं शक्यते।

ह्यूरिस्टिक्विधिः -

Herbert Spencer महोदयस्य सिद्धान्तमाधारीकृत्य Prof. H.E.Armstrong महोदयेन अमुं विधिं विज्ञानशिक्षणाय प्रत्यपादि। विज्ञानविषयं प्रयोगशालाः उपकरणानि च विना कथं शिक्षयेत् इति विषयं मनसि निधाय अमुं विधिं समदर्शत्। सम्प्रति अस्य विधेरुपयोगः न केवलं विज्ञानशिक्षणे अपितु भाषा-गणित-दर्शनादिषु विषयेषु भवति।
Heuristic इत्यं शब्दः Heurisco इति ग्रीकशब्दात् गृहीतो वर्तते। यस्यार्थः- अहमन्विष्यावगच्छामि इति। मितं भाषेत बहु कुर्वीत इति सिद्धान्तमवलम्ब्य विधिरयं प्रवत्तते। अस्मिन् विधौ अध्यापकः छात्रान् अल्पमेव पाठयति। अधिकविषयान्वेषणाय प्रेरयति। अत्र छात्राः सक्रियाः भवन्ति। अध्यापकस्य स्थानं गौणं वर्त्तते। छात्राः स्वयमेव अन्वेषणं कृत्वा अधिगच्छन्ति। अध्यापकः व्यवस्थां व्यवस्थापयति। स तु केवलं मार्गदर्शकरूपेण कार्यं करोति। छात्रेभ्यः विषयान् न पाठ्यते किन्तु ते स्वीयसमस्यासमाधानमन्वेषणम् अन्येषां साहाय्येन विना स्वयमेव अन्वेषकाः भूत्वा कर्तुमर्हन्ति। छात्राः स्वानुभवैः ज्ञानं प्राप्नुवन्ति। एवञ्च अस्मिन् विधौ छात्राः समस्यां श्रुत्वा स्वयमेव समग्रं विषयं सङ्कलय्य परीक्ष्य नवीनज्ञानं प्राप्नुवन्ति। अत्र प्रक्रियायाः महत्त्वं वर्त्तते। अनया प्रक्रियया छात्राणां सर्जनात्मकशक्तेः विकासो भवति।

ह्यूरिस्टिक्विधेः सिद्धान्ताः -

साम्प्रतं छात्रकेन्द्रितशिक्षणाधिगमप्रक्रियायां नवीनविधयः मनोवैज्ञानिकसिद्धान्ताधारेण कल्पिताः भवन्ति। वस्तुतः नवविधीनामन्वेषणात्परं प्रयोगात्पूर्वं शिक्षाशास्त्रिणः सिद्धान्तान् उद्घोषयन्ति। आर्मस्टाग महोदयः आवश्यकतामभिलक्ष्य अस्य विधेः कांश्चन सिद्धान्तान् प्रतिपादितवान्। यद्यपि अस्य विधेः बहवः सिद्धान्ताः सन्ति किन्तु अत्र प्रमुखसिद्धान्ताः उपस्थाप्यन्ते। ते यथा -

1. क्रियाशीलसिद्धान्तः।
2. कार्यमुखाददिगमसिद्धान्तः।
3. रुचेः सिद्धान्तः।
4. प्रेरणासिद्धान्तः।
5. प्रयत्नसिद्धान्तः।
6. विकासात्मकसिद्धान्तः।

इत्थं विविधसिद्धान्तान् पुरस्कृत्य विधिरयं प्रवर्त्तते।

ह्यूरिस्टिक्विधेः सोपानानि-

विधौ अधोलिखितपञ्च सोपानानि प्रयुज्यन्ते।

1. समस्यायाः प्रस्तावः -

कक्षायां छात्राणां पुरतः अध्यापकः कामपि पाठ्यसम्बद्धां समस्यां प्रस्तौति। छात्राः तां समस्यां ध्यानपूर्वकं श्रृण्वोन्ति। अध्यापकः समस्यां तथा उपस्थापयति, येन छात्राः किमपि कर्तुं चिन्तयितुं च उत्काः भवन्ति। किञ्च तेषु तादृशी भावना भवति समस्येयम् उपयोगिनी पाठ्यसम्बद्धा च। दर्शनशास्त्रस्य पाठनसमये समस्या इत्थं उपस्थापयितुं शक्यते यथा - आस्तिकनास्तिकदर्शनयोर्मध्ये कः भेदः? कति गुणाः के च ते? प्रमाणानि कानि? शास्त्राधिकारी कः? इत्यादि । छात्राः समस्यां श्रुत्वा पाठ्यविषयान्वेषणे सम्प्रेरिताः भवन्ति।

2. तत्त्वानां निरीक्षणं, सारणीकरणम् -

 ISSN 0976-8645

सोपानेऽस्मिन् छात्राः स्वयं तत्त्वानामुपकरणाञ्चान्वेषणं विधाय एकीकरणं कुर्वन्ति। प्रस्तुतसमस्या समाधानाय छात्राः विभिन्नदर्शनग्रन्थान् काव्यानि, नाटकानि, पद्यानि व्यावहारिकप्रयोगान् परिशील्य आस्तिक-नास्तिक-प्रमाण-द्रव्य-गुणांश्च सङ्कलनं कृत्वा सारणीं निर्मान्ति।

3. परिकल्पना –

अत्र छात्राः स्वसमस्यायाः समाधानाय सङ्कलिततत्त्वानि सम्यक् विचार्य एकां परिकल्पनां निश्चिन्वन्ति। ग्रन्थानां काव्यानां चालोडने छात्राः षड् आस्तिकदर्शनानि त्रीणि नास्तिकदर्शनानि,नवद्रव्याणि, चतुर्विंशति गुणाः चेति परिकल्पनां प्रतिपादयन्ति।

4. परीक्षणम् –

छात्राः विविधैरुपायैः अध्यापकस्य साहाय्येन च स्वकीयां परिकल्पनां परीक्षन्ते। पदार्थाः, द्रव्याणि, गुणाः, आस्तिकनास्तिकदर्शनानि च परीक्ष्यन्ते।

5. नियमनिर्धारणम् –

अत्र परिकल्पनायाः परीक्षणात्परं छात्राः कमपि नियमं निर्धारयन्ति। छात्राः यदि परिकल्पना सार्थकी भवति तर्हि तां परिकल्पनां नियमत्वेन स्वीकुर्वन्ति। परीक्षणात्परं तत्र परिवर्त्तनस्यावश्यकता वर्त्तते तस्याः परिवर्त्तनं विधाय नवीननियमस्य निर्धारणं कर्त्तुं शक्नुवन्ति।

इत्थं च छात्राः नियम्य प्रकृतसमस्यायाः समाधानं विदधति। अत्र छात्राः सक्रियास्सन् सम्पूर्णं विषयं सुष्ठुः संकलय्य, परीक्ष्य नियम्य क्रमशः अवगच्छन्ति।

मूल्याङ्कनम् –

विज्ञानशिक्षणाय आविष्कृतः विधिरयं साम्प्रतं विविधविषयेषु प्रयोगो भवति। विधिरयं न कश्चन मौलिकविधिरिति आमनन्ति शिक्षाशास्त्रिणः। यदि समेषां विधीनां पर्यालोचनं क्रियते तर्हि समस्या-आगमनविध्योः समन्वयात्मकस्वरूपमिति वक्तुं शक्यते। विधिरयं समस्यां पुरस्कृत्य प्रवर्त्तते। एवञ्च आगमनविधौ यथा लक्ष्यमाश्रित्य लक्षणं प्रतिपाद्यते तथैव अस्मिन् विधौ समस्यां समाधातु लक्ष्यमवलोक्य लक्षणत्वेन परिकल्प्यते। अतः नायं कश्चन विशिष्टः विधिः आगमनविधेरपेक्षया। तत्र उभयोर्मध्ये सामान्यो भेदो दृश्यते। आगमनविधौ उदाहरणान्युक्त्वा लक्षणानि प्रस्तूयन्ते, अस्मिन् समस्यामुक्त्वा लक्ष्ये तत्त्वानां निरीक्षणमिति विशिष्टं सोपानं वर्त्तते। किञ्च यथा समस्याविधौ समस्यायाः समाधानाय छात्राः प्रयतन्ते तथैव अत्रापि छात्राः समाधानान्वेषणाय यतन्ते। यद्यपि स्वरूपदृष्ट्या विधिरयं पूर्वोक्तं विधिवत् प्रतिभाति किन्तु अयं कश्चन स्वतन्त्रः विधिः। अस्य विधेः कश्चन पृथगात्मा नूनमस्त्येव। नवविधीनाम् आविष्कारे अवश्यं कानिचन प्रचलितत्त्वानि भवन्ति किन्तु तत्र मौलिकतायाः विवचनापेक्षया प्रक्रियायाः महत्त्वं वरीवर्त्ति। अत्र विधौ प्रक्रिया एव महत्वपूर्णा वर्त्तते। सा च प्रक्रिया छात्रेषु सर्वाङ्गीणविकासं साधयति।

उपसंहारः –

हरवर्टीपञ्चपदी,समस्यागमनविधयोः च समन्वयेनाविष्कृतः अयं विधिः। शिक्षाक्षेत्रे अस्य विधेः महत्त्वं निश्चप्रचम्। यदि अस्य विधेः गुणदोषाः पर्यालोच्यन्ते तर्हि गुणानामेवाधिक्यमवलोक्यते। किन्तु परीक्षाकेन्द्रितायाम् अस्यां शिक्षापद्धतौ अस्य विधेः प्रयोगः यथावत् कर्त्तुं न शक्यते। अस्य विधेः प्रयोगाय योग्याध्यापकानामुपकरणनाञ्च महती आवश्यकता वर्त्तते। तथापि अस्य विधेः गुणान् संवीक्ष्य अध्यापकानामुपकरणनाञ्च स्थितिमवलोक्य संस्कृतदर्शनशास्त्रस्य अध्ययनं क्रियते तर्हि शिक्षणं सुग्राह्यं रुचिकरं सार्थकञ्च भवतीति निर्विवादमेव।

[A First International Electronic Peer-reviewed Quarterly Refreed UGC Approved (41039) Sanskrit Tri-lingual Journal with Impact Factor]
Available at- www.jahnavisanskritejournal.in Issue-33rd , Year 08, Vol -II, April, 2018 ISSN 0976-8645

Important dates for next Issue-

- ✓ DEADLINE FOR SUBMISSION- 01.07. 2018
- ✓ NOTIFICATION FOR ACCEPTANCE-15.07.2018
- ✓ INAUGRATION-01.08.208

Send your paper

bipinkumarjhaofficialid@gmail.com

jahnavisanskritjournal@gmail.com

ISSN-2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयशोधपत्रिका

2017

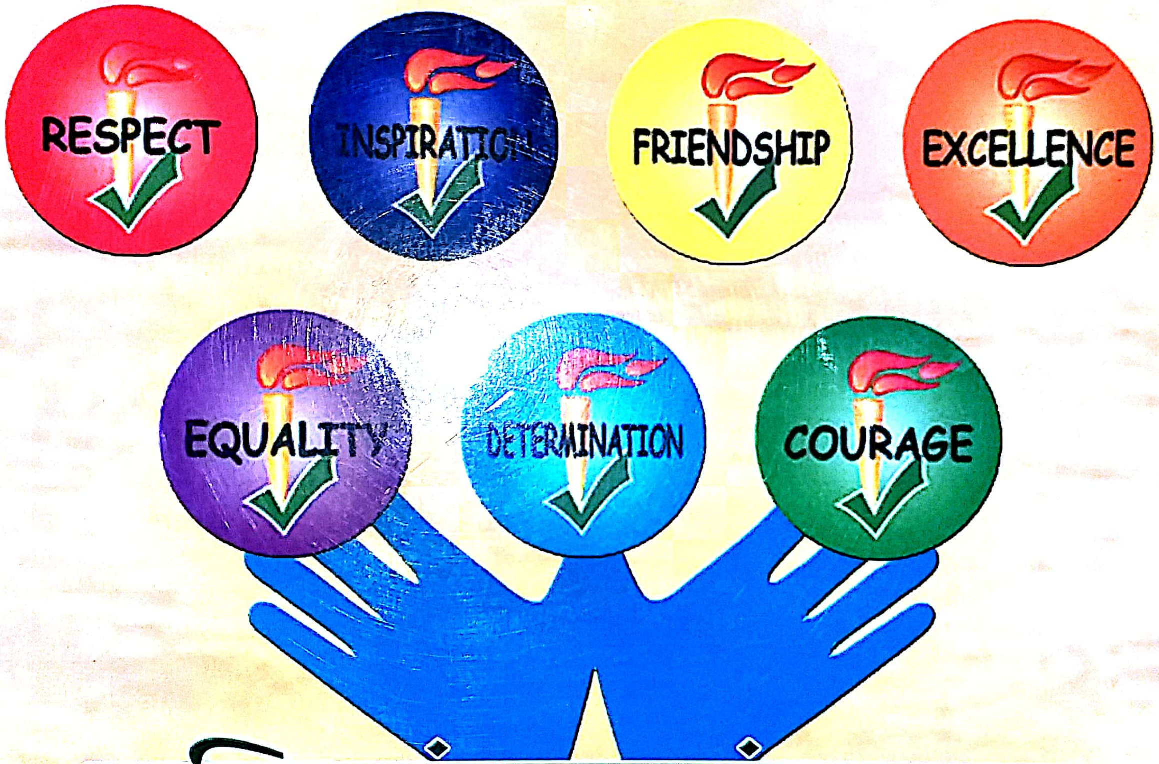

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

मानितविश्वविद्यालयः

राष्ट्रियमूल्याङ्कनप्रत्यायनपरिषद्दा "ए" श्रेण्यां प्रत्यायितम्

क.जे.सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्,

विद्याविहारः, मुम्बई-७७

Scanned with OKEN Scanner

Peer Reviewed Refereed Journal
ISSN : 2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्त्रिका

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च शोधपत्त्रिका)

Annual Research Journal of Department of Education

2016 - '17

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमय्याभुवि भासते परिसरो विद्याविहारे स्थितः।।

संरक्षकः
आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री

प्रधानसम्पादकः
आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा

सम्पादकाः
आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि

सह-सम्पादकाः
डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः
डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
(मानितविश्वविद्यालयः)
भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः (पूर्वम्) मुम्बई - 400077

Scanned with OKEN Scanner

पत्रिकानाम	:	शिक्षारश्मिः (शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका)
प्रकाशकः	:	शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्(मा. वि.) क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई - 77
© प्रतिलिप्यधिकारः	:	प्रकाशकाधीनः
ISSN	:	2395-7921
संरक्षकाः	:	आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री, कुलपतयः
प्रधानसम्पादकाः	:	आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः
सम्पादकाः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि
सह-सम्पादकाः	:	डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा
सम्पादकमण्डलसदस्याः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः डा. देवदत्तसरोदे डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि डा. मन्थाश्रीनिवासु डा. कुमारः डा. सुनीलकुमारशर्मा डा. विनोदकुमारशर्मा श्री शंकर आन्धले साई प्रसाद आपटे (छात्रसदस्यः) शुभलक्ष्मी सामल (छात्रसदस्या)
मूल्याङ्कनमण्डलम्	:	प्रो. ए पी सच्चिदान्दः प्रो. प्रकाश चन्द्र प्रो. लोकमान्यमिश्र प्रो. गोपीनाथशर्मा प्रो. प्रह्लादजोशी प्रो. वै यस् रमेश प्रो. रजनी रञ्जन प्रो. के. भारतभूषण
प्रकाशनवर्षम्	:	2017
अनुकृतयः	:	200
मुखचित्रविन्यासः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः
अक्षरसंयोजनम्	:	डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि
मुद्रकः	:	वन्दना आर्ट्स, मुम्बई

Scanned with OKEN Scanner

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं. शीर्षकम्	लेखकः	पुटसंख्या
1. साहचर्यम्	प्रो.मदनमोहनझाः	1 - 6
2. मूल्यशिक्षा – छात्रेषु मूल्यापादनोपायाः	डा. देवदत्त सरोदे	7 - 13
3. भारतीयशिक्षाप्रणाल्यां समाजे च भेदभावा अत्याचाराश्च, वर्तमाने तयोः नियन्त्रण-निवारणव्यवस्थाश्च	डा वि यस् वि भास्कर रेड्डि	14 - 21
4. मानवाऽधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च	डा. कुमारः	22 - 25
5. मूल्य शिक्षा का सम्प्रत्यय	डा. सुनील कुमार शर्मा	26 - 30
6. पाठ्यचर्यायाः सम्प्रत्ययः , निर्धारकतत्त्वानि च	डा. विनोदकुमार शर्मा	31 - 36
7. संस्कृतवाङ्मये मूल्यशिक्षायाः अवधारणा	डा. मन्था श्रीनिवासु	37 - 42
8. श्रुति-लिंग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समाख्यानां पूर्वपूर्वबलीयस्त्वम्	आचार्यः राजन् . इ .एम्	43 - 46
9. शास्त्रेषु मङ्गलाचरणम्, अनुबन्धचतुष्टयं च	डा. नारायणन् ई. आर्.	47 - 49
10. वर्तमानपरिप्रक्ष्ये मानवाधिकारशिक्षायाः उपादेयता	डा. प्रेमसिंहसिकरवारः	50 - 54
11. A Comparative study of Physical Fitness between Tribal & Urban Sr College Boys Student of M U	Shri Andhale Shankar B	55 - 60
12. Evolution of Human Rights: A Theoretical Perspective	Dr Suman Singh	61 - 69
13. Right School: Reaching to the Children with Rights	Dr. Shweta Sood	70 - 73
14. हिन्दी सिनेमा के पर्दे पर मूल्य शिक्षा	डॉ. गीता दुबे	74 - 76
15. मूल्यों के विकास में परिवार की भूमिका	डॉ. आरती शर्मा	77 - 80
16. The Guru Tattva	Arun Kumar Upadhyay	81 - 88
17. महाभारते मूल्यानि	देवकी धोंगडे	89 - 91
18. नीतिसाहित्ये मूल्याशिक्षा	सत्यनारायणः	92 - 96
19. Human Rights in the Ancient Indian Religion	Jayanta Nuniya	97 - 100
20. मानवाऽधिकाराः बालाऽधिकाराश्च	सुजन बिश्वासः	101 - 102
21. वेदेषु उपनिषत्सु च मूल्यशिक्षा	योगेन्द्रकुमारः	103 - 104
22. मानवाऽधिकारः महिलाऽधिकारश्च	जितेन्द्र गुप्ता	105 - 108
23. पाठ्यचर्याविकासात्मकाधाराः वैशिष्ट्यञ्च	जगन्नाथवर्गः	109 - 115
24. शास्त्रशिक्षणे नवाचाराः	मम्मटवर्गः	116 - 118
25. मानवाऽधिकाराणां संरक्षणे राष्ट्रियमानवाऽधिकाराऽऽयोगस्य भूमिका	आनन्दवर्धनवर्गः	119 - 122
26. विषयाधारितम् अधिगममूल्याङ्कनम्	वामनवर्गः	123 - 127
27. सामाजिक-राजनैतिक-सांस्कृतिक-भौगोलिक-आर्थिकविविधताः शैक्षिकदृष्टिश्च	कुन्तकवर्गः	128 - 130
28. साकल्यशिक्षायाः क्रियान्वयने अनुभूयमानाः समस्याः समाधानानि च	भामहवर्गः	131 - 134

Scanned with OKEN Scanner

मानवाऽधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च

✍ डा. कुमारः *

विविधधर्मजातिराज्यभाषावेषभूषासंस्कृतिसम्प्रदायादिभिर्भूषितेऽस्मिन् भारते मानवधिकाराणां विषये कथनीयं चेत्तदा स्मृतिपथमायान्ति मूल्यानि। मौल्याधारितं सुसंस्कृतियुक्तं च जीवनं भारते एव दृश्यते। जगतोऽन्यत्र एतादृशी संस्कृतिर्नैवावलोक्यते। इयञ्च सनातनसंस्कृतिरिति कीर्तिता। अत एवोक्तम्- भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा इति। भारतीयसंस्कृतिः जनजीवनपद्धतिं जीवनमूल्यानि च प्रतिपादयति। मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव इत्यादीनामुपनिषद्वाक्यानामाधारेण जीवनं कुर्वन्तः भारतीयाः वर्तन्ते। करुणा, प्रीतिः, सहानुभूतिः, अनुकम्पः, परोपकारः, सहकारः, प्रोत्साहः चेत्यादयः बहवो गुणा भारतीयमौल्येषु अन्तर्भवन्ति। गच्छता कालेन मानवेषु मनुष्यत्वमेव नश्यमानं दृश्यते। ब्रिटीषजनानां संस्कृतेः प्रभावः स्वतन्त्रगणतन्त्रभारतेऽधुनापि वर्तते। पाश्चात्यसंस्कृतेरनुसरणं कुर्वन्तः वैश्वीकरणस्य नाम यच्छन्ति स्वान्धानुकरणस्य। अर्थाद्विवेकशून्या इव परकीयानामनुसरणं कुर्वन्ति। आधुनिककालेऽस्मिन् प्रत्येकमपि जनः स्वार्थमेव चिन्तयन् अधिकारविषये एव भणति सर्वत्र। अस्तु तावत् संविधानोक्तरीत्या अधिकाराः स्वातन्त्र्यं च प्रत्येकं मानवस्य। परन्तु स्मरेन्नित्यं भारतीयमौल्यानि अधिकारचालनसन्दर्भे इति मे मतिः।

भारते सर्वत्र मौल्यानि नश्यमानानि सन्ति। मानवीयता वा मनुष्यत्वं मानवेष्वेव न्यूनं जायमानं वर्तते। स्यात्तस्य कारणं वैश्वीकरणम्पाश्चात्यसंस्कृतेश्च प्रभावः। अपि च स्पष्टम् आधिकारिकबुद्धिः नैतिकसांस्कृतिकादिमूल्यानि विस्मारयतीति। अतोऽधुना भारतीयमौल्येषु मानवाधिकाराणां प्रभावो वर्ततेतराम्। एवञ्च मानवाधिकाराणां दुरुपयोगश्च जायमानो वर्तते। अतोऽत्र भारतीयमौल्यानामुपरि मानवाधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च कथमस्तीति कैश्चिदुदाहरणैः प्रस्तूयते।

स्वतन्त्रभारते जन्मनो मानवः कांश्चनाधिकारान् प्राप्नोत्येव। यथा तस्य जीवनस्याधिकारः अर्थात् जीवनस्वातन्त्र्यं वर्तते। सः कथञ्चिदपि अटितुं श्वासोच्छ्वासं कर्तुं च शक्नोति। शिक्षां प्राप्तुमपि प्रत्येकं जनस्य अधिकारोऽस्ति। अत एव भारतीयमौलिकसिद्धान्तानुसारं सुभाषितं यथा – माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः इति। एवमेव वाक्स्वातन्त्र्यमपि सर्वेषां विद्यत एव। प्रत्येकं विषयस्योपरि प्रश्नकरणस्य वाऽभिप्रायप्रकटनस्याऽधिकारः वर्तते। सांविधानिकरीत्या सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनैतिकादयः बहवोऽधिकाराः मानवस्य सन्ति।

अधिकारभ्रान्तौ सांस्कृतिकनैतिकादिमौल्यानि स्वकर्तव्यानि च विस्मरन् कदाचित् मानवाधिकाराणां दुरुपयोगं च कुर्वन्नवलोक्यते मानवः। तादृशोदाहरणानि कानिचन सन्दर्भेऽस्मिन् प्रस्तूयन्ते। मानवाधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च भारतीयमौल्येषु कथमधुना वर्तते इति कैश्चिद्बिन्दुभिः वर्ण्यते।

१. वृद्धाऽऽश्रमाणामाविर्भावः तत्संख्यावृद्धिश्च –

भारते प्राचीनकाले वृद्धाश्रमाः नासन्नेवेति वक्तुं शक्यते। परन्तु केषुचित् ऋष्याश्रमेषु केचन वृद्धाः स्वेच्छया जीवनस्य वार्धक्यं धार्मिका भूत्वा यापयन्ति स्म इति वक्तुं प्रमाणानि इतिहासे लभ्यन्ते। भूमिं प्रत्यस्मानानीतवन्तौ पितरौ साक्षात् भगवन्ताविति पूज्यभावनया सत्सु बहुषु कष्टेष्वपि पुत्राः पित्रोः परिपालनं तयोः वार्धक्ये सर्वाधिकतया कुर्वन्ति स्म। भारतीयसम्प्रदायः संस्कृतिरपि मातृदेवो भव, पितृदेवो भव इति जीवनमूल्यं जागरयति। अतः कर्तव्यमिति मत्वा पुत्राः पित्रोः पालनं कुर्वन्ति स्म। अधुना सर्वत्र देशे वृद्धाश्रमाणां संख्या वर्धमाना वरीवर्ति। बहवो हि पुत्राः स्वपितॄन् वृद्धाश्रमं प्रति प्रेषयन्तो वर्तन्ते। सर्वोऽपि मानवः स्वातन्त्र्यमिच्छति स्वजीवने। यदि पितरौ भवतः तर्हि पत्न्या सह वैभोगजीवनं कर्तुं न शक्नुयात्। वृद्धपितरौ गृहे भवतः चेत् तौ त्यक्त्वा स्वेच्छया अटनं, खादनं, मोदञ्चानुभोक्तुं नैव

* संविदाऽध्यापकः, शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः) मुम्बई परिसरः।

Scanned with OKEN Scanner

शक्यते इति पितरौ वृद्धाश्रमं प्रति प्रेषयन्ति । अतः प्रत्येकं मानवस्य स्वातन्त्र्यस्य अधिकारो वर्तते इति आधिकारिकी बुद्धिः भारतीयमौल्यानि प्रहरति । अर्थात् मानवाधिकाराः मूल्यानि प्रभावयन्ति ।

२. स्त्र्यधिकारदुरुपयोगः –

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः इति सूक्तिः स्त्रियः महत्त्वं गौरवञ्च भारतीयसम्प्रदाये बहु वर्तते इति प्रतिपादयति । मातेति भगिनीति सर्वासां महिलानां सम्मानं च दृश्यते । स्त्रीणामपि केचन अधिकाराः प्राचीनकाले दत्ता आसन् । पत्युर्नो यज्ञसंयोगे इति पाणिनीयसूत्रमपि प्रमाणीकरोति यत् पतिः पत्नीं विना यज्ञादिकं वैदिकं कर्म न कर्तुं शक्नोतीति । तत्र स्त्रियः कश्चन विशिष्टः कर्माधिकारः आसीदेव । परन्तु मनुना जीविकार्जनमुद्दिश्य न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हतीत्युक्तमासीत् । एवञ्च स्त्रीणां कृते कानिचन निर्दिष्टानि कर्माण्यपि प्रदत्तान्यासन् । तदनु स्त्रियः स्वधर्मनिरताः अवलोक्यन्ते स्म । परन्तु अधुना स्त्रियः पुरुषाः यानि कर्माणि कुर्वन्ति तान्यपि कुर्वत्यः वर्तन्ते । साधु मन्ये स्त्रियः आधुनिककाले सर्वाण्यपि पुरुषकार्याणि सधैर्यं कर्तुं समर्था इति । परन्तु आधिकारिकबुद्ध्या स्त्रियः तावत् सर्वकारस्य प्रोत्साहनं संविधानोक्तरक्षणोपायाश्च तासां परतः सन्तीति असकृत् मिथ्यारोपान् पुरुषाणामुपरि कुर्वत्यः दृश्यन्ते । अस्योदाहरणानि बह्वीषु पत्रिकासु सामूहिकमाध्यमेषु चोपलभ्यन्ते । एकस्यां पत्रिकायां (Times of India) प्रकटितमासीत् यत् आरक्षकाणां कथनानुसारं पुरुषाणामुपरि वरदक्षिणादिहिंसारोपः २०% मिथ्यैवावलोकिताः इति । महिलानां मिथ्यारोपैः पुरुषसमाजः हिंसितः । किमिदं मानवाधिकाराणां दुरुपयोगः नैव वा ?। अतः केषुचित्प्रसङ्गेषु भारतीयमौल्यानि विस्मृत्य अमानवीयरीत्या मातृहृदयभूता अपि महिलाः मानवाधिकाराणां दुरुपयोगं कुर्वन्ति । शत्रोः नाशनाय च मिथ्यारोपं कुर्वन्ति काश्चन । स्त्रियः साम्प्रदायिकसीमानमतिरिच्य आधुनिका भूत्वा अगौरवयुतं कार्यमपि धनार्थं कुर्वत्यः दृश्यन्ते । स्वार्थसम्पादनाय महिलाः अधिकारस्य दुरुपयोगं कुर्वन्तीति प्रत्यक्षमपि अनेकान्युदाहरणान्युपलभ्यन्ते ।

३. गुरुशिष्यसम्बन्धः –

आचार्यदेवोभव इति भारतीयसंस्कृतिः प्रतिपादयति । भारतीयशिक्षणपद्धतौ गुरोः समीपं गत्वा शिष्याः तत्रैव स्थित्वाध्ययनं कुर्वन्ति स्म । अर्थात् गुरुकुलपद्धतिः आसीत् । गुरुशुश्रूषया विद्या इत्युक्तरीत्या गुरोराज्ञां परिपालयन् शिष्यः गुरुं सेवमानः, गुरोर्वचनं श्रुत्वा ज्ञानार्जनं करोति स्म । एवञ्च पितृवच्छिष्यस्य पालनं गुरुः स्वगृहे करोति स्म । शिष्योऽपि पुत्रवदाज्ञां परिपालयति स्म । यदा गुरुः यं विषयं पाठयति तदा तमधिगच्छति स्म शिष्यः । गुरोः यात्रायामपि तेन सहैव गच्छन्ति स्म । आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया इति भावनया यन्निर्दिशति गुरुः तच्छ्रद्धया शिष्यः परिपालयति स्म । यदा अधीतशास्त्रः, स्वतन्त्रजीवनं कर्तुं योग्य इति गुरुः शिष्यमुपदिशति तदा गुरोरनुमत्या गुरुकुलाद्बहिः गत्वा स्वजीवननिर्वहणं करोति स्म ।

अधुना अध्यापकानां चयनं सर्वकारीयनियमानुसारं जायते । सर्वेऽपि समर्था एव चिता भवन्तीत्यपि वक्तुं न शक्यते । यदि गुरुः सामर्थ्यवान् यद्वक्ति तस्यान्यार्थतामपि कदाचित् स्वीकृत्य शिष्यः गुरुं भाययति ताडयति च । गुरोर्वचनं तृणसमानं मन्यमाना अपि शिष्याः लोके दृश्यन्ते । यतो हि व्यक्तिस्वातन्त्र्यं मानवाधिकारः । मौलिकोपदेशः दीयते चेदपि अश्रुत्वा गुरुमपरधिस्थानेऽपि कदाचित् स्थापयति । को वा शिष्यत्वं स्वीकृत्य भारतीयपरम्परानुसारं गुरोर्वचनं श्रोतुं सिद्धोऽधुना ? वेतनं स्वीकृत्य पाठयति अध्यापकः इति कारणेन वदेच्छात्रः गुरुं कदाचित्, स्वकीयं कार्यं कृत्वा तूष्णीं गच्छ इति । भारतीयमौल्यं विस्मृत्य आधिकारिकबुद्ध्या उत्प्लवति शिष्यः । गुरुशिष्यसम्बन्धः वाणिज्ये ग्राह्यग्राहकसम्बन्ध इव जातोऽस्त्यधुना । स्वतन्त्र्यमस्तीति आधिकारिकबुद्ध्या मानवाधिकारस्य दुरुपयोगमेव कुर्वन्तः गुरुशिष्याः प्रायः लोके दृश्यन्ते । गुरुरपि कदाचित् शिष्येण सह अन्यार्थताभयेन प्रेम्णापि न व्यवहरति, पितृवत् पालनं च न करोति । अतः तयोः सम्बन्धः केवलं विद्यालये एव सीमितः वर्तते ।

४. भारते भ्रष्टाचारः –

Scanned with OKEN Scanner

भ्रष्टाचारभूयिष्ठं राष्ट्रं जायमानं वर्तते भारतम् । सर्वकारीयकार्यालयं गत्वावलोकयामश्चेज्ज्ञायते अधिकारिणः स्वाधिकारं धनाय विक्रयन्ति । कृष्णधनसङ्ग्रहणे निरता बहवोऽधिकारिणः सन्ति । सर्वकारः वेतनं दत्वा मानवीयदृष्ट्या कार्यं कर्तुं सूचयति । परन्तु कुत्रास्ति मानवीयमौल्यम् ?। न्यायालये, कार्यालये, सर्वकारीयचिकित्सालये, विद्यालये, इतरसर्वकारीयसंस्थासु चाप्यधुना धनं विना कार्यं न सम्भवति । सर्वत्र भ्रष्टाचारः । आधिकारिकबुद्ध्या जनहिंसा प्रचलति । भारतीयमौल्यानां हननं भवति । अकार्ये आसक्तिं दर्शयन्तः अधिकारिणः राजनीतिं कुर्वन्ति । अधिकारस्य दुरुपयोगं कुर्वन्ति । देशविकासचिन्तनं विहाय स्वार्थं चिन्तयन्ति । देशविकासस्य मारकः भवत्ययं भ्रष्टाचारः । धनस्य यावन्मौल्यं वर्तते तावन्मानवस्य नास्ति । धनस्य पुरतो मानवः गौरवहीनः । मानवता नश्यन्ती वर्तते । भारतीयमौल्यानि नष्टानि । अतो वक्तुं शक्यते यदधिकारस्य दुरुपयोगेन मानवीयमौल्यानि नश्यन्तीति ।

५. समूहमाध्यमाधिकारः –

माध्यमानामधिकारः अपि मानवाधिकारेष्वन्यतमः । वार्तापत्रिकाः, दूरदर्शनम्, आधुनिकान्तर्जालमाध्यमाः मुखपुस्तकं (फेस्बुक्), सन्देशतन्त्रं (वाट्स आप्) प्रभृतयः सामाजिकमाध्यमेष्वन्तर्भवन्ति । वास्तविकरीत्या माध्यमस्वातन्त्र्यं भारतीयसंविधाने नोक्तं वर्तते । परन्तु वाक्स्वातन्त्र्यमिति अधिकारः संविधाने प्रस्तुतः । तदधीने माध्यमानामपि स्वातन्त्र्यं प्राकल्पि । समूहमाध्यमाः देशविदेशानां वर्ताः श्रावयन्ति । अपि च विविधप्रकारकान् मनोरञ्जनकार्यक्रमान् प्रसारयन्ति । तेषां स्वातन्त्र्यं वर्तते कार्यक्रमप्रसारणे । परन्तु केचन माध्यमाः राजनैतिकपक्षाणां पुतः धनं स्वीकृत्य वार्तां प्रसार्य जनान् वञ्चयन्ति । स्वकीयं मौलिकमधिकारं विस्मृत्य कदाचित् आधिकारिकबुद्ध्या स्वेच्छाचारं कुर्वन्ति । प्रसारयितुमयोग्यमपि कार्यक्रमं धनस्याशया मूल्यानि विस्मृत्य प्रदर्शयन्ति । मानवाधिकाराणां दुरुपयोगं कुर्वन्तः माध्यमाः बहवोऽवलोक्यन्ते । वाक्स्वातन्त्र्यमस्तीति यथाकथञ्चित् व्यवहारः, यत्किमपि कथनं च नैव कुर्युः । माध्यमः (Press) इति परिचयपत्रं स्वीकृत्य जनान् वञ्चयन्तोऽपि केचन सन्ति । स्वातन्त्र्यस्य दुरुपयोगः जायमानोऽस्तीति तेषां माध्यमानां गौरवमपि न्यूनं भवति । जनाः अपि शिक्षिताः भवन्ति । सर्वमपि अवगन्तुं शक्नुवन्ति। माध्यमाः भारतीयमूल्यानि विस्मृत्य वैदेशिकसंस्कृतेः प्रचारे निरता अपि वर्तन्ते । भारतीयसंस्कृतेः नाशनमपि माध्यमैः क्रियते इति वदामश्चेन्नास्ति दोषः । बहूनि एतस्योदाहरणानि प्रदर्शयितुं शक्नुमः । अतः माध्यमाः स्वातन्त्र्यस्य दुरुपयोगं कुर्वन्तः भारतीयमौल्यानि नाशयन्ति ।

६. शिक्षायाः अधिकारः –

प्रत्येकं मानवस्याधिकारः शिक्षाप्रप्तिः । सर्वशिक्षाभियानमिति विशिष्टकार्यक्रमः भारते सर्वेषां कृते शिक्षा लभ्येत इति प्रारब्धः । परन्तु अधुनापि केषुचित्स्थलेषु ग्रामेषु च शाला एव नास्ति । अधिकारैः सर्वकारीयसौलभ्यैश्च वञ्चिताः सन्ति । विपर्यासो नाम येषां कृते सौलभ्यं वर्तते ते शिक्षायाः अधिकारस्य दुरुपयोगं कुर्वन्तः सन्ति । शिक्षिताः एव भारतीयसंस्कृतेः नाशनहेतवः सञ्जायमानाः सन्ति । आधिकारिकबुद्ध्या या कापि शिक्षा प्राप्तुं शक्येति शिक्षणसंस्थासु कदाचित् कोलाहलं कुर्वन्तोऽपि जनाः अवलोक्यन्ते । योग्यतायाः अभावेऽपि शिक्षणसंस्थासु भ्रष्टाचारं कृत्वा स्थानप्राप्तेः प्रयत्नो विधीयते बहुभिः । किमिदं शिक्षाधिकारस्य दुरुपयोगो नैव वा ? । मानवीयता सर्वकारीयनियमः इत्यादयः केवलं पत्रेष्वेव । दौष्ट्यमाचरन्ति अत्यधिकतया शिक्षिता एव । अतः शिक्षायाः अधिकारस्य प्रभावः भारतीयमौल्यानामुपरि वर्तते इति वादः ।

७. कर्मचारिणामधिकारः –

वास्तविकरीत्या संविधाने कर्मचारिणामधिकारः इति विषयं साक्षादनुक्त्वा भिन्नरूपेण प्रास्तावि । परमत्र लौकिकार्थं स्वीकृत्य वास्तविकीं स्थितिमवलम्ब्य च विषयः प्रस्तूयते । कार्यकरणार्थं नियुक्ताः कर्मचारिणः कियन्तः सन्ति श्रद्धया समर्पणभावनया च कार्यं कुर्वाणाः ? प्रायशः स्वार्थिनः एव । स्वार्थसिद्धये किमपि कार्यं कर्तुं सदा सिद्धा भवन्ति । राजनैतिकक्रीडामपि चालयन्ति । आधिकारिकबुद्ध्या सर्वविधसौलभ्यं प्राप्तुमग्रेसराः अवलोक्यन्ते । परन्तु निष्ठया कार्यकरणे पृष्ठे भवन्ति । मानवीयतां विस्मृत्य कार्यमकृत्वा जनान् पीडयन्तोऽप्यधिकारिणः सन्ति । अतोऽभिप्रायः

Scanned with OKEN Scanner

एष एव यत् मानवाधिकाराणां दुरुपयोगः प्रभावश्च भारतीयमौल्येषु जायमानोऽस्ति ।

८. आरक्षकाणामधिकारः / दौर्जन्यम् –

देशरक्षकाः जनसंरक्षकाः रक्षणाधिकारवन्तः आरक्षकाः राक्षसा इवापि व्यवहरन्तोऽवलोक्यन्ते कदाचित् । अमानवीयरीत्या जनेभ्यः हिंसां यच्छन्ति । जनान् भाययन्ति स्वाधिकारदर्पेन । आरक्षकाणां गृहागमनं नाम अवमाननमित्यपि मन्यमानाः सुसंस्कृताः मौल्यवन्तः जनाः सन्ति लोके । कदाचित् वयं पश्यामः वार्तासु आरक्षकदुर्व्यवहारं दौर्जन्यं च । निरपराधीन् जनानपि धनस्याशया श्रीमतां कथनानुसारं स्वाधिकारेण दण्डयन्ति । अधिकारस्य दुरुपयोगं कुर्वन्तः बहवो ह्यारक्षका अवलोक्यन्ते । अर्थात् सर्वेऽपि भ्रष्टा इति न मेऽभिप्रायः । मनुष्यत्वं तु तेषु दृष्टिगोचरं न भवति । अमानवीय-व्यवहारमेवाधिकतया कुर्वन्ति । अतः आरक्षकाणामधिकारदर्पः भारतीयमौल्येषु दुष्परिणामं जनयतीति वक्तुं शक्यते ।

एवं रीत्या अनेके मानवाधिकाराः सर्वकारीयाधिकाराश्च भारतीयमौल्यानामुपरि बहुविधप्रभावं जनयन्ति । क्वचिदधिकाराणां दुरुपयोगश्च जायते । भारतीयसंस्कृतिः, सम्प्रदायादयः भारतस्य गौरवं वर्तते । परन्तु तेषां नाशः आधुनिककालेऽस्मिन् जायमानोऽस्ति । अविभक्तकुटुम्बपद्धतिः दृष्टुमेवाशक्यास्ति स्वार्थजीवनरतेषु जनेष्वधुना । पित्रोः, बन्धु-भगिनीनां च सम्बन्धः मरीचिकैव वर्तते । केवलं स्वार्थपरायणः मानवः आधिकारिकबुद्ध्या भारतीयमौल्यमेव विस्मरन् वर्तते । अधिकाराणां दुरुपयोगं करोति । इत्यादिभिः बिन्दुभिः विषयं प्रस्तूय विषयविस्तरादत्रैवोपसंह्रियते ।

विषयस्रोतः –

१. अन्तर्जालम् ।

२. वार्तापत्रिकाः ।

३. सामाजिकसमूहमाध्यमाः ।

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयशोधपत्रिका

2017

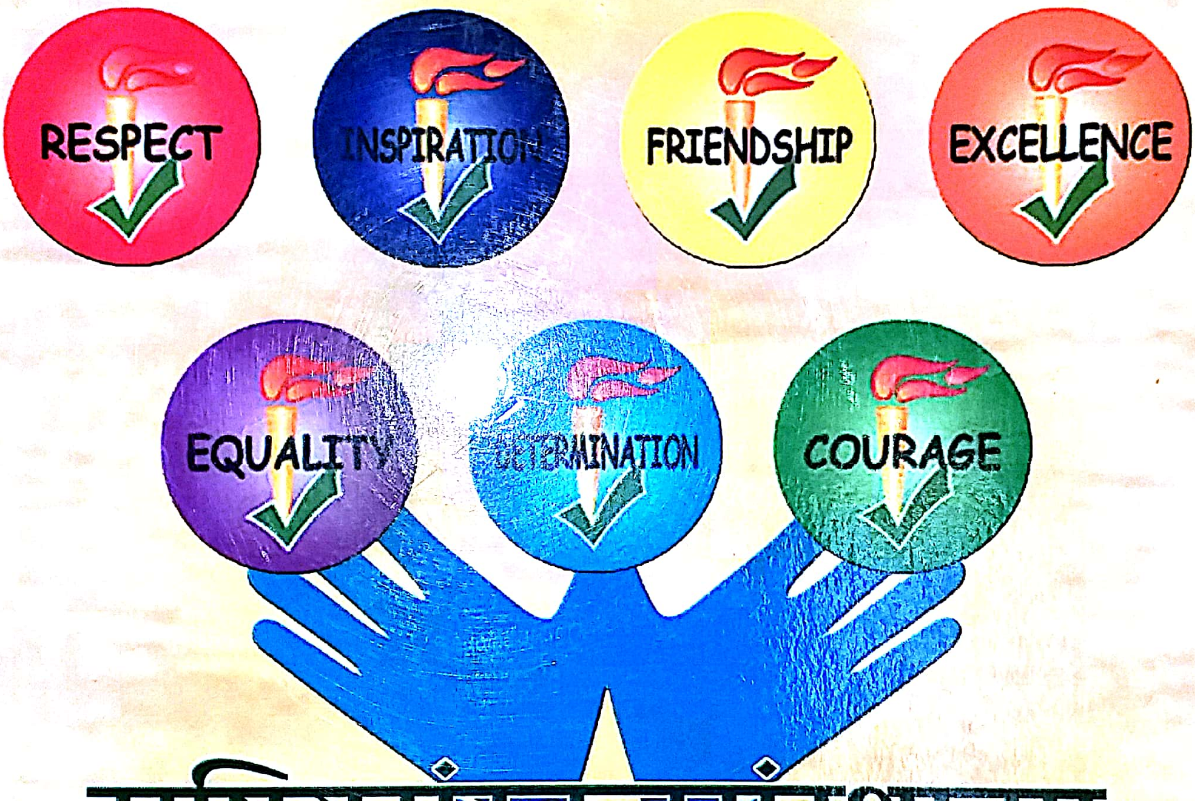

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

मानितविश्वविद्यालयः

राष्ट्रियमूल्याङ्कनप्रत्यायनपरिषदा “ए ”श्रेण्यां प्रत्यायितम्

क.जे.सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्,

विद्याविहारः, मुम्बई-७७

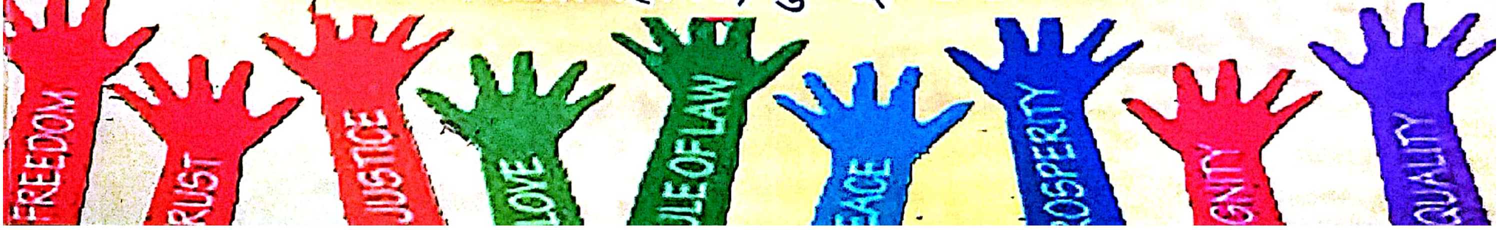

Scanned with OKEN Scanner

Peer Reviewed Refereed Journal **ISSN : 2395-7921**

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च शोधपत्रिका)

Annual Research Journal of Department of Education

2016 - '17

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमय्याभुवि भासते परिसरो विद्याविहारे स्थितः।।

संरक्षकः

आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री

प्रधानसम्पादकः

आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा

सम्पादकाः

आचार्यः मदनमोहनझाः **डा. देवदत्तसरोदे** **डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि**

सह-सम्पादकाः

डा. मन्थाश्रीनिवासु **डा. कुमारः**
डा. सुनीलकुमारशर्मा **डा. विनोदकुमारशर्मा**

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

(मानितविश्वविद्यालयः)

भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः (पूर्वम्) मुम्बई - 400077

Scanned with OKEN Scanner

पत्रिकानाम	:	शिक्षारश्मिः (शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका)	
प्रकाशकः	:	शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्(मा. वि.) क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई - 77	

© प्रतिलिप्यधिकारः	:	प्रकाशकाधीनः	

ISSN	:	2395-7921	

संरक्षकाः	:	आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री, कुलपतयः	
प्रधानसम्पादकाः	:	आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः	
सम्पादकाः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः	डा. देवदत्तसरोदे
		डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि	
सह-सम्पादकाः	:	डा. मन्थाश्रीनिवासु	डा. कुमारः
		डा. सुनीलकुमारशर्मा	डा. विनोदकुमारशर्मा
सम्पादकमण्डलसदस्याः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः	डा. देवदत्तसरोदे
		डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि	डा. मन्थाश्रीनिवासु
		डा. कुमारः	डा. सुनीलकुमारशर्मा
		डा. विनोदकुमारशर्मा	श्री शंकर आन्धले
		साई प्रसाद आपटे (छात्रसदस्यः)	शुभलक्ष्मी सामल (छात्रसदस्या)
मूल्याङ्कनमण्डलम्	:	प्रो. ए पी सच्चिदान्दः	प्रो. प्रकाश चन्द्र
		प्रो. लोकमान्यमिश्र	प्रो. गोपीनाथशर्मा
		प्रो. प्रह्लादजोशी	प्रो. वै यस् रमेश
		प्रो. रजनी रञ्जन	प्रो. के. भारतभूषण

प्रकाशनवर्षम्	:	2017	
अनुकृतयः	:	200	
मुखचित्रविन्यासः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः	
अक्षरसंयोजनम्	:	डा. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि	
मुद्रकः	:	वन्दना आर्ट्स, मुम्बई	

Scanned with OKEN Scanner

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं. शीर्षकम्	लेखकः	पुटसंख्या
1. साहचर्यम्	प्रो.मदनमोहनझाः	1 - 6
2. मूल्यशिक्षा – छात्रेषु मूल्यापादनोपाया:	डा. देवदत्त सरोदे	7 - 13
3. भारतीयशिक्षाप्रणाल्यां समाजे च भेदभावा अत्याचाराश्च, वर्तमाने तयोः नियन्त्रण-निवारणव्यवस्थाश्च	डा वि यस् वि भास्कर रेड्डि	14 - 21
4. मानवाऽधिकाराणां प्रभावः दुरुपयोगश्च	डा. कुमारः	22 - 25
5. मूल्य शिक्षा का सम्प्रत्यय	डा. सुनील कुमार शर्मा	26 - 30
6. पाठ्यचर्यायाः सम्प्रत्ययः , निर्धारकतत्त्वानि च	डा. विनोदकुमार शर्मा	31 - 36
7. संस्कृतवाङ्मये मूल्यशिक्षायाः अवधारणा	डा. मन्था श्रीनिवासु	37 - 42
8. श्रुति-लिंग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समाख्यानां पूर्वपूर्वबलीयस्त्वम्	आचार्य: राजन् . इ .एम्	43 - 46
9. शास्त्रेषु मङ्गलाचरणम्, अनुबन्धचतुष्टयं च	डा. नारायणन् ई. आर्.	47 - 49
10. वर्तमानपरिप्रक्ष्ये मानवाधिकारशिक्षायाः उपादेयता	डा. प्रेमसिंहसिकरवारः	50 - 54
11. A Comparative study of Physical Fitness between Tribal & Urban Sr College Boys Student of M U	Shri Andhale Shankar B	55 - 60
12. Evolution of Human Rights: A Theoretical Perspective	Dr Suman Singh	61 - 69
13. Right School: Reaching to the Children with Rights	Dr. Shweta Sood	70 - 73
14. हिन्दी सिनेमा के पर्दे पर मूल्य शिक्षा	डॉ. गीता दुबे	74 - 76
15. मूल्यों के विकास में परिवार की भूमिका	डॉ. आरती शर्मा	77 - 80
16. The Guru Tattva	Arun Kumar Upadhyay	81 - 88
17. महाभारते मूल्यानि	देवकी धोंगडे	89 - 91
18. नीतिसाहित्ये मूल्याशिक्षा	सत्यनारायणः	92 - 96
19. Human Rights in the Ancient Indian Religion	Jayanta Nuniya	97 - 100
20. मानवाऽधिकाराः बालाऽधिकाराश्च	सुजन बिश्वासः	101 - 102
21. वेदेषु उपनिषत्सु च मूल्यशिक्षा	योगेन्द्रकुमारः	103 - 104
22. मानवाऽधिकारः महिलाऽधिकारश्च	जितेन्द्र गुप्ता	105 - 108
23. पाठ्यचर्याविकासात्मकाधाराः वैशिष्ट्यञ्च	जगन्नाथवर्गः	109 - 115
24. शास्त्रशिक्षणे नवाचाराः	मम्मटवर्गः	116 - 118
25. मानवाऽधिकाराणां संरक्षणे राष्ट्रियमानवाऽधिकाराऽऽयोगस्य भूमिका	आनन्दवर्धनवर्गः	119 - 122
26. विषयाधारितम् अधिगममूल्याङ्कनम्	वामनवर्गः	123 - 127
27. सामाजिक-राजनैतिक-सांस्कृतिक-भौगोलिक-आर्थिकविविधताः शैक्षिकदृष्टिश्च	कुन्तकवर्गः	128 - 130
28. साकल्यशिक्षायाः क्रियान्वयने अनुभूयमानाः समस्याः समाधानानि च	भामहवर्गः	131 - 134

Scanned with OKEN Scanner

पाठ्यचर्यायाः सम्प्रत्ययः , निर्धारकतत्त्वानि च

✍ डा. विनोद कुमार शर्मा *

व्युत्पत्तिः Latin भाषायाः 'Currere' इति शब्दात् जातो वर्तते, यस्यार्थो भवति धावनक्षेत्रम् इति। (Curriculum derived from the Latin word 'Currere' which means Race course or Run way). पाठ्यचर्यया तादृशः शिक्षणकार्यक्रमः समालोचितो भवति यस्यानुसरणेन छात्राः स्वीयोद्देश्यानि, आदर्शान्, आशाः,अभिलाषा.. आदीन् सम्पादयितुं शक्नुवन्ति इति।

शिक्षणं नाम अध्ययनाध्यापनप्रक्रियैव (Instruction is nothing but teaching) भवति। औपचारिक-निरौपचारिकाभिकरणद्वारा प्राप्यमाणा शिक्षैषा त्रिमुखीप्रक्रिया भवति। यस्यामध्यापकः, छात्रः, पाठ्यचर्या चेति त्रीण्यङ्गानि समप्रधानानि भवन्ति।

II. पाठ्यचर्यायाः परिभाषाः –

1. **Cunningham** महोदयस्य मतानुसारं पाठ्यचर्या कलाकारस्य(अध्यापकस्य) हस्ते वर्तमानमेकमुपकरणं भवति। सः स्वसामग्रीं (छात्रान्) स्वीकृत्यस्वीयादर्शानुगुणं कलाभवने (विद्यालये) परिवर्तयति इति।

2. **माध्यमिकशिक्षाऽऽयोगः** – विद्यालयीय सर्वप्रकारकानुभवाः, यैः सन्तुलितव्यक्तित्वस्य क्रमिकविकाससम्पादनाय छात्राणां सर्वप्रकारकजीवनानुभवसम्बद्धा भवतीति।

3. **Froebel** महोदयस्य मतानुसारं मानवप्रजातेः संपूर्णज्ञानस्याऽनुभवस्य च सारभूतं भवति पाठ्यचर्या इति।

4. **M.S.Ansary** महोदयस्य मतानुसारं पाठ्यचर्यायां विद्यालयीय सर्वप्रकारकानुभवाः अन्तर्भवन्ति। यै अधिगन्तॄणां व्यवहारे अभिलषितपरिवर्तनानि आनेतुं शक्यते। अर्थात् – कक्ष्याप्रकोष्ठस्याभ्यन्तरे बाह्ये च क्रियमाणाः सर्वे अनुभवाः अस्यामन्तर्भवन्तीति।

III. पाठ्यचर्या- पाठ्यक्रमयोः भेदः -

पाठ्यचर्या (Curriculum)	पाठ्यक्रमः (Syllabus)
1.कक्ष्याप्रकोष्ठस्याभ्यन्तरे बाह्ये च क्रियमाणानां सर्वेषामनुभवानां समष्टिरूपं भवति पाठ्यचर्या।	1.पाठ्यांशानामनुज्झितक्रमविन्यासस्य पाठ्यक्रमेति व्यव्रिह्यते।
2.इयं व्यापकी भवति।	2. अयं सीमितः (संकुचितः) भवति।
3. अनया सर्वाङ्गिण विकासः जायते।	3.अनेन संज्ञानात्मक-बौद्धिकविकास एव जायते।
4.कक्ष्याप्रकोष्ठस्याभ्यन्तरे बाह्ये च।	4.कक्ष्याप्रकोष्ठस्याभ्यन्तरैव।
5.सहगामिक्रियाश्चात्रान्तर्भवन्ति।	5.अत्र सहगामिक्रियाः नान्तर्भवन्ति।
6. इयम् अङ्गीभूता भवति।	6. पाठ्यचर्यायाम् अयम् अङ्गभूतः भवति।

IV. पाठ्यचर्याया आधाराः –

IV (A) दार्शनिकाधारः – पाठ्यचर्या -

* संविदाऽध्यापकः, शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः) मुम्बई परिसरः।

Scanned with OKEN Scanner

कस्यापि देशस्य शिक्षाव्यवस्थायां पाठ्यचर्याया आधारेषु दार्शनिकाधार अन्यतमः भवति। भारतीयदर्शनानि त्यागवादिनः सन्ति। पाश्चात्यदर्शनानि भोगवादिनः सन्ति। दर्शनानुगुणं पाठ्यचर्यायाः निर्माणं क्रियते। प्राचीनभारते – आत्मसाक्षात्कारः (सा विद्या या विमुक्तये) भौतिकपदार्थेभ्यः भिन्नस्य शाश्वतमूल्यानां कृते प्राधान्यम्। आधुनिकभारते लोकतान्त्रिकभावनायाः विकासः, सुखमयजीवनञ्च (सा विद्या या नियुक्तये)। **Sparta** मध्ये शक्तिशालिराष्ट्रनिर्माणम् सैनिकानामावश्यकता। शारीरिकव्यायामः, युद्धकौशलेषु नैपुण्यसम्पादनम्।

IV (A.1) आदर्शवादः – पाठ्यचर्या

शाश्वतमूल्यानां, सत्यानाम्, आदर्शानाञ्च (अभौतिकस्य) कृते महत्वपूर्णतां यच्छति। प्राचीनकालात् यानि मूल्यानि स्वीकृतानि तानि यथा- सत्यम्, अहिंसा, धर्मः इत्यादयः । धर्मस्य लक्षणानि उक्तञ्च यथा -

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

आदर्शवादिपाठ्यचर्यायां कथा, नाटकमाध्यमेन उदात्तचरित्रस्य वर्णनं क्रियते। समाजे राष्ट्रे यानि यानि उदाहरणानि जातानि तेषां सर्वेषां मानवानां घटनानाम् आदर्शवादिपाठ्यचर्यायां स्थानं दीयते। बालकानां आदर्शचरित्र निर्माणम् आदर्शवादिपाठ्यचर्यया एव क्रियते। आदर्शवादिपाठ्यचर्यायां प्रधानतमविषयाः – दर्शनं, नीतिशास्त्रं, स्वास्थ्यविज्ञानम्, साहित्यम्, इतिहासः, सङ्गीतं, कवीता, कलादयः। गौणविषयाः - गणितं, विज्ञानं, भूगोलं, खगोलादयः।

IV (A.2) प्रकृतिवादः- पाठ्यचर्या

बालकानां प्राकृतिकशक्तीनां विकासकरणाय प्रकृतिवादिपाठ्यचर्या प्रवर्तते। प्रकृत्या सम्बद्धविषयानां कृते पाठ्यचर्यायां स्थानं प्रदेयम्। कृषिशास्त्रं, भौतिक-रासायनिक-जीव-वनस्पति-भूगर्भ-भूगोल-खगोल......शास्त्राणां कृते अत्र स्थानं दीयते। पुस्तकीयज्ञानापेक्ष्या व्यावहारिकज्ञानस्य (सर्वश्रेष्टमिति तेषामाशयः) प्राधान्यं भवति । प्रकृतिवादिपाठ्यचर्यायां वैज्ञानिकज्ञानस्य प्राधान्यं भवति। वर्तमानसामाजिकावश्यकतानुगुणं राष्ट्रानुगुणं पाठ्यचर्या भवेत्। छात्रेभ्यः वृत्तिप्रधानशिक्षायाः प्राधान्यं भवति अत्र। प्रकृतिवादिपाठ्यचर्यायां छात्रकेन्द्रितशिक्षा दीयते। Learning by doing माध्यमेन शिक्षणं क्रियते। भारतीयपाश्चात्यप्रकृतिवादिनः बालकेभ्यः स्वतन्त्रता दातव्या इति चिन्तयति। प्रकृतिवादिपाठ्यचर्यायाम् अनुशासनं कार्यकरणेन स्वयमेव आयाति इति चिन्तनम्।

IV (A.3)प्रयोजनवादः – पाठ्यचर्या –

प्रयोजनवादिनः पाठ्यचर्यायाः निर्माणं परिवर्तमानपरिवेषानुगुणं स्वीकुर्वन्ति। पाठ्यचर्या समयोजिता निर्मातव्या, परिवर्तनीया च। जीवने यस्योपयोग अधिकः भवति तस्यैव प्राधान्यम्। साम्प्रतिके युगे प्रयोजनवादिपाठ्यचर्या अधिका प्रासङ्गिका सान्दर्भिका च वर्तते।

V सामाजिकाधाराः -

बालकेषु सामाजिकभावनायाः विकाससम्पादनयोग्यानां विषयानां , तत्त्वानाञ्च कृते प्राधान्यम्। समाजस्य प्राथमिकाभिकरणं परिवारः भवति। परिवारः शिशोः प्रथमा पाठशाला भवति। माता शिशोः प्रथमः गुरुः भवति। समाजेन आनुकूल्यं सम्पाद्य जीवनयापनक्षमतानां विकासः। पाठ्यचर्यायां तथा तत्त्वानि योजनीयानि यैः सामाजिकवातावरणं सुष्ठु भवेत्। सामाजिकचेतनायाः केन्द्राणि भवन्ति विद्यालयाः। पाठ्यचर्यायां तथा कार्यकलापाः योजनीयाः। समाजोपयोगिक्रियाणाञ्च कृते प्राधान्यम् दीयते पाठ्यचर्यायाम् अस्याम् । समाजस्य परंपराणां, आचाराणां, संस्कृतेः..... इत्यादीनाम् एकस्मात् युगात् अपरं युगं प्रति संक्रमणं कर्तुं पाठ्यचर्यायां योजनीयानि । समाजस्थ संस्कृतेः संकलनाय अपेक्षितांशानां कृते पाठ्यचर्यायां महत्वपूर्णता प्रदातव्या। उदा.- इतिहासः, साहित्यम्, भाषा, विज्ञानं ....इत्यादयः। समाजोत्थानभावनायाः जागरणायापेक्षितांशानां कृतेऽपि पाठ्यचर्यायां स्थानं प्रदेयम्। उदा ..... समाजशास्त्रं, नीतिशास्त्रं,

Scanned with OKEN Scanner

मानवशास्त्रम्.......।

VI. मनोवैज्ञानिकाधाराः – मनोविज्ञानानुसारं पाठ्यचर्याया आधारा इमे स्युः। यथा -

1. पाठ्यचर्यायां बालकानां वृद्धिंविकासश्चाधारीकृत्य निर्मिता स्यात्।
2. बालकस्य प्रकृतेः, नैसर्गिकप्रवृत्तीनां, मौलिकावश्यकतानां, अधिगमक्षमतानां, बौद्धिकस्तराणां, स्मृतिसञ्चयनक्षमतानुसारं पाठ्यचर्या निर्मातव्या।
3. पाठ्यचर्यायां क्रिडामाध्यमः, रूचेः जागरणादि विषयाः यो जनीयाः।
4. वैयक्तिकभिन्नतानुरूपं पाठ्यचर्या निर्मातव्या। पाठ्यचर्या – नैसर्गिकप्रवृत्तीनां विकासाय भवेत्।

VII. वैज्ञानिक-प्राविधिकाधाराः –

कलात्मकविषयाणामपेक्षया वैज्ञानिकविषयानाञ्च कृतैव पाठ्यचर्यायां महत्वपूर्णता प्रदातव्या। दैनन्दिनकार्येषु वैज्ञानिक-प्राविधिकयन्त्राणां प्रयोगसम्बद्धज्ञानस्य पाठ्यक्रमे संयोजनम्।

सैद्धान्तिकज्ञानापेक्षया प्रायोगिकक्रियाणाञ्च कृतैव पाठ्यचर्यायां स्थानं प्रदेयम्।

सरलतम-सौविध्यसहितजीवनं वैज्ञानिकतत्त्वानां,तथ्यानामुपरि एवाधारितं भवति।

मूढ-अन्धविश्वासानां स्थाने वैज्ञानिकवृत्तीनां विकासःसम्पादयितुं शक्यते।

पाठ्यचर्यायां भौतिकप्रपञ्चेन सम्बद्धविषयानां कृतैव स्थानं प्रदेयम्।

वैज्ञानिकचिन्तनस्य प्राविधिकदृष्टिकोणस्य च सम्बद्धविषयाः योजनीयाः।

VIII. पाठ्यचर्यानिर्माणस्य मौलिकसिद्धान्ताः –

1. **जीवनकेन्द्रितसिद्धान्तः** - दैनन्दिनजीवनेन सम्बद्धाः विषयाः क्रियाश्च भवितव्याः। भोजनम्, जलम्, शिक्षा, आजीविका,आवासादयः जीवनेन साक्षात् सम्बद्धाः विषयाः सन्ति। सरलतम-सौविध्यसहितजीवनायापेक्षिताः विषयानामुपरि बलं दीयते। अभौतिकप्रपञ्चसम्बद्धविषयाः न भवेयुः। अयं प्रयोजनवादिनामुपागमः।

2. **रूचेः सिद्धान्तः** – अयं मनोवैज्ञानिकानामुपागमःभवति ।अन्येषाम् अन्येषामुपरि बलात् आरोपणमनुत्तममिति मन्यते। छात्राणां रूचिः येषु विषयेषु भवति तेभ्य एव पाठ्यचर्यायां स्थानं प्रदेयम्। परन्तु वयो अनुसारं, लिङ्गभेदानुसारं रूचिः परिवर्तिता भवति। रूचि- अधिगम – प्रेरणा अवधान-स्मृति..... इत्यादीनां मध्ये-घनिष्ठ-मिथश्चसम्बन्धः भवति।

3. **वैविध्यसिद्धान्तः** – पाठ्यचर्यायां केवलमेकप्रकारकविषया एव नैव समाविष्टाः स्युः। येन रूचेः नष्टं,जाड्यं, निराशा...इत्यादयः जायन्ते। वैविध्यपूर्णतायाः विषयाः समाविष्टाः स्युः। येन अवधान-अधिगमसंसिद्धता-रूच्या....दीनां विकासः जायते। यैः मानसिक-बौद्धिक-धार्मिक-आध्यात्मिकविषयानां पूर्तिः भवेत्।

4. **नम्यतासिद्धान्तः** – पाठ्यचर्या गत्यात्मकसामाजिकावश्यकतानुसारं परिवर्तनशीला स्यात्। यया समायोजनक्षमतायाः, व्यक्तित्वस्य च विकासः जायते। समाजे राष्ट्रे च बहूनि परिवर्तनानि प्रतिक्षणं भवन्ति। परिवर्तनानुगुणं पाठ्यचर्यायां नम्यता अपेक्षिता भवति।

5. **सर्जनात्मकसिद्धान्तः** - अयमपि मनोवैज्ञानिकानामुपागम एव। पाठ्यचर्यायां बालकस्य अन्तर्निहितनां सर्जनात्मकशक्तीनां विकासायावसराः प्रकल्पनीयाः। वैज्ञानिक-प्राविधिका....दि विषयाः जायते। प्रायोगिकपक्षस्य प्राधान्यं भवति अत्र । मौलिकचिन्तने वैधता-विश्वसनीयता-प्रामाणिकता सर्जनात्मकशक्तेः कारकाणि भवन्ति।

6. **उपयोगसिद्धान्तः** – पाठ्यचर्यायां वर्तमान-भाविकाले च उत्पन्नमानसमस्यानिवारणक्षमताविकासविषयाः योजनीयाः। व्यक्तेः समाजस्य च उन्नतेः कल्याणकारिविषयाः समावेशितव्याः।

7. **समसिद्धान्तः** – पाठ्यचर्यायां अयं सांविधानिक-राजनैतिक-सामाजिक-मानवीयोपागमः भवति । पाठ्यचर्यायाम्

Scanned with OKEN Scanner

अवसर-अधिकार-कर्त्तव्य-एकता-परस्पराभिबोधा.......दि सम्बद्धविषयाः समाविष्टाः स्युः।

8. **आवश्यकतासिद्धान्तः** – अयमपि मनोवैज्ञानिकानाम् उपागम एव। पाठ्यचर्यायां मानवस्य दैनन्दिनजीवनसम्बद्धविविधावश्यक प्रपूरणक्षमता- विकाससम्बद्धाः विषयाः भवेयुः। राष्ट्रे समाजे च परिवर्त्यमानसामाजिकवातावरणेन सह सुष्ठुसमायोजनक्षमताविकाससम्पादनविषयाः योजनीयाः।

9. **क्रिडासिद्धान्तः** – इयं **पाठ्यचर्या** उद्यानशिक्षया (Kinder garden) सह सम्बद्धा भवति। क्रिडासम्बद्धव्यवहारयुक्ता स्यात्। अत्र LEARNING BY PLAYING प्रयुज्यते। अन्ताराष्ट्रियशिक्षाऽऽयोगेन अपि अस्य सिद्धान्तस्य प्रकारान्तरेण स्वकीये प्रतिवेदने समर्थनं कृतम्।

IX. पाठ्यचर्यायाः प्रकाराः

1. **विषयकेन्द्रितपाठ्यचर्या** – पाठ्यचर्या विषयकेन्द्रिता भवितव्या। यः विषयः यस्मिन् पाठ्यचर्यायां भवति तस्य विषयस्य तलस्पर्शी पाण्डित्यं छात्रेषु भवेत्।

2. **क्रियात्मकपपाठ्यचर्या** – ज्ञानं भारः क्रियां विना - सूक्तिरियं सर्वे जानन्त्येव। यावत् ज्ञानात्मक -भावात्मक- क्रियात्मकादि त्रयः पक्षाः न भवन्ति तावत् पाठ्यचर्या सम्पूर्णा न भवति।

3. **बालकेन्द्रतपाठ्यचर्या** - प्राचीनपाठ्यचर्यायाम् अध्यापककेन्द्रितशिक्षा भवति स्म। सम्प्रति बालेभ्यः ये विषयाः रोचन्ते ते एव विषयाः पाठ्यचर्यायां स्युः। अत्र जीवनोपयोगिनः विषया एव भवन्ति।

4. **अनुभवात्मकपाठ्यचर्या** - ज्ञानं भिन्नम् अनुभवः भिन्नः। ज्ञानेन साकम् अनुभवः कार्येषु नैपुण्यं दक्षतां चानयति। कृतानां गुणदोषानां ज्ञानेन अनुभवः वर्धते। अनुभवात्मकपाठ्यचर्यायां विदुषां लेखाः राष्ट्रियान्ताराष्ट्रियघटनानां पठन-पाठनं भवितव्यम्।

5. **जीवनकेन्द्रितपाठ्यचर्या** - अस्यां पाठ्यचर्यायां जीवनाय यानि मूलभूततत्त्वानि, सिद्धान्ताः, प्रायोगिककार्याणि यथा- भोजनम् ,जलम्, आजीविका, सुरक्षादयः।

6. **अनौपचारिकपाठ्यचर्या** – अनौपचारिकपाठ्यचर्यायां स्थानं, पाठ्यक्रमः, छात्राः, किमपि निश्चितं न भवति। पाठ्यचर्या एषा व्यावहारिकज्ञानं , लौकिकज्ञानं प्रददाति।

7. **भेदरहितपाठ्यचर्या** – भेदरहितपाठ्यचर्यायां सर्वेभ्यः समाना शिक्षा दीयते। अस्यां शिक्षायां पाठ्यक्रमस्य एकरूपता भवति। शिक्षकः पाठ्यक्रमानुगुणं समानरूपेण छात्रान् पाठयति।

8. **सन्तुलितपाठ्यचर्या** – सन्तुलितपाठ्यचर्यायां सर्वे विषयाः पाठ्यन्ते अध्यापकैः। सन्तुलितपाठ्यचर्यायाम् आधुनिकशिक्षणं क्रियते। अत्र राष्ट्रियशिक्षानीत्यानुगुणं पाठ्यक्रमस्य निर्माणं क्रियते।

X. वर्तमानपाठ्यचर्यायां दृश्यमानाः केचन दोषाः–

1. इयं सङ्कुचितरूपेण निर्मिता वर्तते।
2. पुस्तकीय, सैद्धान्तिकज्ञानस्य चोपरि एवाधिकतया आधारिता वर्तते।
3. इयं वैयक्तिकाभिरूच्यनुसारं नैव निर्मिता।
4. इयं बहुसम्मर्दपूर्णा वर्तते।
5. प्राविधिक-व्यवसायिक-वृत्तिसम्बद्धविषयाणां कृते अपेक्षितप्राधान्यं नैव प्रदीयते।
6. इयं परीक्षा केन्द्रिता, उपाधिकेन्द्रिता च वर्तते।

XI. माध्यमिकशिक्षाऽऽयोगः (1953) – संस्तुतयः-

1. बालकानां समस्तानुभवानां समावेशः कुर्यात्।
2. अस्यां वैविध्यता, नम्यता च भवेत्।

Scanned with OKEN Scanner

3. सामाजिकजीवनेन सह सम्बन्धः स्यात्।
4. अवकाशकालस्य सदुपयोगाय प्रशिक्षणम्।
5. अनुभवाधारितशिक्षायै प्राधान्यम्....... इत्यादयः।

XII. सामान्यशिक्षायाः पाठ्यचर्यायाः रूपरेखा

भाषाः 15%

समाजोपयोगिसमुत्पादककार्यम् (Social Useful Productive Work) 15%

अधोलिखितेषु विषयेषु केचन् त्रयो विषयाः – 70%

भाषाः (अनिवार्यभाषायाः भिन्नाः भाषाः)

गणितम्

अर्थशास्त्रम्

रसायनशास्त्रम्

राजनीतिशास्त्रम्

जीवविज्ञानम्

भूगोलम्

भौतिकशास्त्रम्

समाजशास्त्रम्

मनोविज्ञानम्

दर्शनम्

गृहविज्ञानम्

इतिहासः

वाणिज्यमं लेखा च

ललितकलाः

शारीरिकशिक्षा चेति।

(आ) विशिष्टशिक्षायाः पाठ्यचर्यायाः रूपरेखा

क. भाषाः 15%

ख. सामान्या आधारभूतपाठ्यचर्या (General Foundation Course) 15%

अ. खण्डः – अधोनिर्दिष्टाः विषयाः सर्वेषां कृतेऽध्यनीयाः।

1. शिक्षायाः गान्धिवादिसम्प्रत्ययः
2. राष्ट्रियार्थव्यवस्थायां कृषिः
3. ग्राम्यविकासः
4. नगरीयवसतीनां समस्याः
5. स्वास्थ्यं, स्वास्थ्यविज्ञांनं स्वच्छता च

(ब) खण्डः - अधोनिर्दिष्टेषु नवविषयेषु व्यवसायानुरूपस्यैकस्य चयनम्।

- लघुकुटीरोद्योगः
- निविदाकर्म उद्यमिता च
- सहकारिता ऋणसुविधा च

Scanned with OKEN Scanner

- विपणनम्
- विक्रयप्रोन्नतिः
- अनियोजनम् , अर्धनियोजनम् भारते जनशक्तेरूपयोगश्च
- मानवीयसम्बन्धः
- पर्यावरणविकासः संरक्षणञ्च,
- विश्वपरिवर्तनानां प्रवृत्तीनाञ्च ज्ञानञ्चेति

ग. व्यावसायिका ऐच्छिकविषयाः

सप्तसंख्याकेषु विषयसमूहेषु त्रयाणां व्यवसायविषयाणां चयनम्। केचन विषयाः अधोनिर्दिष्टाः वर्तन्ते।

कार्यालयकार्याभ्यासः
व्यापारवाणिज्ययोर्परिनियमावल्या अभ्यासः
भोजननिर्माणप्रौद्योगिकी
यानसंरक्षणपाठ्यचर्या
पुष्टाऽऽहारो भोजनञ्च
अन्तः सज्जा
औद्यानिकी
फलसंरक्षणम् कृषिः
चिकीत्सकीयप्रयोगशालाप्रौद्योगिकी
रुग्णोपचारकर्म
वस्त्रनिर्माणम्
आरेखणपाठ्यचर्या
ग्रन्थोत्पादनम्
सौन्दर्यप्रसाधनपाठ्यचर्या
विपणनम्
कोषागारकर्म
मुद्रणम्

अनुशीलिताः –

1. Prof. Ghanta Ramesh & Dr.Burra Ramesh, Foundations of Education, Neelkamal publication pvt. Ltd, Hyderabad,2008.
2. Dr. Somanath sahu, शिक्षायाः दार्शनिकाधाराः, Sushila publications, Kushang, Orissa, 2005.
3. Dr. A. S. Ramakrishna, Fondations of Education, New era publication, Guntur, 2008.
4. P.Nagamuni Reddy, Educational Philosophy, unpublished material, Rsvp, Tirupati, 2002.
5. Dr.S.S.Mathur, शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा,2006.
6. Ornstein,A.and Hunkins, F. Curriculum: Foundations, Principal and issues.(1998).
7. www.google.co.in/curriculum wikipaedia.

मूल्याधारितावधारणा-

'मूल्य' इति 'मूल' शब्दात् यत् प्रत्यये सति निष्पन्नं भवति। यस्य कस्यापि वस्तुनः महत्त्वस्य पर्यायत्वेन

Scanned with OKEN Scanner

विक्रमाब्दः 2074 खीस्ताब्दः 2017 ISSN No. 2457-0729
प्रथमोऽङ्कः

वाग्वै ब्रह्म

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च वार्षिकी राष्ट्रियशोधपत्रिका)

सृष्टौ या सर्गरूपा जगदवनविधौ पालिनी या च रौद्री,
संहारे चापि यस्या जगदिदमखिलं क्रीडनं या पराख्या।
पश्यन्ती मध्यमाऽथो तदनु भगवती वैखरीवर्णरूपा-
साऽस्मद्वाचं [illegible] विधिहरिगिरिशाराधिताऽलङ्करोतु।।

व्याकरणविभागः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
(मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयभारतसर्वकाराधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-77

Scanned with OKEN Scanner

विक्रमाब्दः 2074 खीस्ताब्दः 2017 ISSN No. 2457-0729
प्रथमोऽङ्कः

वाग्वै ब्रह्म

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च वार्षिकी राष्ट्रियशोधपत्रिका)

सृष्टौ या सर्गरूपा जगदवनविधौ पालिनी या च रौद्री,
संहारे चापि यस्या जगदिदमखिलं क्रीडनं या पराख्या।
पश्यन्ती मध्यमाऽथो तदनु भगवती वैखरीवर्णरूपा-
साऽस्मद्वाचं प्रसन्ना विधिहरिगिरिशाराधिताऽलङ्करोतु।।

व्याकरणविभागः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
(मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयभारतसर्वकाराधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-77

Scanned with OKEN Scanner

RNI No.	MAHSAN/2017/73496
ISSN No.	2457-0729
मुद्रकः	प्रो. प्रकाशचन्द्रः
प्रकाशकः	प्रो. प्रकाशचन्द्रः
स्वामिनः नाम	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः) (भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्) क. जे. सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, विद्याविहारः (पूर्वः), मुम्बई, महाराष्ट्रम् - 400 077
मुद्रणम्	वन्दना आर्टस्, बी-56, भूमितलम् स्टेशन प्लाझा, स्टेशन रोड, भाण्डुपम् (पश्चिमम्), मुम्बई - 400 078, महाराष्ट्रम्, भारतम् ।
प्रकाशनम्	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः) (भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्) क. जे. सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, विद्याविहारः (पूर्वः), मुम्बई, महाराष्ट्रम् - 400 077
अङ्कः	प्रथमः
अनुवृत्तयः	100
प्रकाशनसमयः	दिसम्बर, 2017
संपादक :	**प्रो. प्रकाशचन्द्रः**

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः, विभागाध्यक्षः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

प्रो. बोधकुमारझाः, आचार्य्यः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

श्रीसुभाषचन्द्रमीणा, सहायकाचार्य्य, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः, संविदाध्यापकः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

डॉ. नवीनकुमारमिश्रः, संविदाध्यापकः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

सुश्रीविदुषीबोल्ला, शोधप्रज्ञा, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

पुनर्वीक्षकमण्डलम्

- **प्रो. (श्रीमती) अर्चना दूबे**, श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयः, गुजरातम् ।
- **डॉ. दिलीपकुमारझाः**, कामेश्वरसिंहदरभंगासंस्कृतविश्वविद्यालयः, दरभंगा, बिहारः, ।
- **डॉ. अशोकचन्द्रगौडः**, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, गरलीपरिसरः, हिमाचलप्रदेशः ।
- **डॉ. प्रियव्रतमिश्रः**, श्रीरामसुन्दरविश्वविद्याप्रतिष्ठानम्, रमौली, दरभंगा, बिहारः ।

मूल्याङ्कनकर्तृमण्डलम्

- **प्रो. मदनमोहनझाः**, आचार्य्यः, शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई, महाराष्ट्रम् ।
- **डॉ. देवदत्तसरोदे**, सहायकाचार्य्यः, शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई, महाराष्ट्रम् ।
- **डॉ. रा. गा. मुरलीकृष्णः**, सहायकाचार्य्यः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली ।
- **डॉ. मधुकेश्वरभट्टः**, सहायकाचार्य्यः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली ।

Printed by Prof. Prakash Chandra, Published by Prof. Prakash Chandra on behalf of Rashtriya Sanskrit Sansthan (Deemed University), Under MHRD, Govt. of India, K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeetham, Vidyavihar (E), Mumbai, Mahrashtra - 400 077 and Printed at Vandana Arts B-56, Ground Floor, Station Plaza, Station Road, Bhandup (West), Mumbai - 400 078, Maharashtra, India and Published at Rashtriya Sanskrit Sansthan (Deemed University), Under MHRD, Govt. of India, K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeetham, Vidyavihar (E), Mumbai, Maharashtra - 400 077, Editor Prof. Prakash Chandra.

Scanned with OKEN Scanner

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषयः	लेखकः	पृष्ठाङ्कः
1.	राष्ट्रियः, राष्ट्रीयो वा ? अथवा उभयम् ?	प्रो. अर्कनाथचौधरी	01
2.	'वृद्धिरादैच्' इतिसूत्रविमर्शः	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	04
3.	'क्क्ङिति चे' ति सूत्रभाष्यविमर्शः	प्रो. बोधकुमारझाः	13
4.	कृदन्तविमर्शः	डॉ. दयारामदासः	24
5.	व्याकरणमहाभाष्यदृष्ट्या 'वृद्धिरादैच्' सूत्रविमर्शः	डॉ.अशोकचन्द्रगौडशास्त्री	38
6.	महाभाष्यस्थः हलोऽनन्तराः संयोगः, इति सूत्रविचारः	प. सुभाषचन्द्रमीणा	43
7.	प्रगृह्यसंज्ञासूत्रविमर्शः	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	46
8.	भाष्योक्तदिशा दाधा घ्वदाप्सूत्रविचारः	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	56
9.	भाष्यानुसारी 'वृद्धिरादैच्' सूत्रविमर्शः	सुश्रीविदुषीबोल्ला	65
10.	भाषाविज्ञानदृष्ट्या प्रयत्नविमर्शः	श्रीचेमटेसुरेशः	74
11.	'इको गुणवृद्धी' इत्यत्र इग्ग्रहणविचारः	श्रीमतीऋतम्भरापाण्डेयः	88
12.	महाभाष्यदृशा 'इको गुणवृद्धी' सूत्रविमर्शः	श्रीसत्यराजरेग्मी	95
13.	'तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्' इत्यस्मिन् सूत्रे सावर्ण्यविचारः	आ. पद्मराजरेग्मी	101
14.	महाभाष्ये शाबरभाष्ये च कृतः संज्ञाविचारः	श्रीधर अवधूतलोहोकरे	106
15.	बाह्यप्रयत्नविवेकः	कु. मुग्धा चन्द्रकान्तदाते	110
16.	महाभाष्यदृशा 'इको गुणवृद्धी' इति सूत्रविमर्श	श्रीसर्वेशकुमारतिवारी	113
17.	'न धातुलोप आर्धधातुके' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	सुश्रीबिन्दुहासिनीमिश्रः	117
18.	'ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	सुश्रीआशा छेडा	119
19.	'ष्णान्ता षट्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीश्यामकिशोरपाण्डेयः	123
20.	'बहुगणवतुडति संख्या' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीचन्द्रमापौड्यालः	126
21.	'निपात एकाजनाङ्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीउमेशत्रिवेदी	130

Scanned with OKEN Scanner

'वृद्धिरादैच्' इतिसूत्रविमर्शः

प्रो. प्रकाशचन्द्रः

'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रं पाणिनिव्याकरणस्य प्रथमं सूत्रम् । अस्य सत्रस्य व्याख्याने भाष्यकारेण वार्त्तिकमाध्यमेन विविधाः शोधात्मका विषया विचारिताः, यथा चकारस्य कुत्वाभावविचारः, तद्भावितातद्भावितग्रहणसमीक्षा, संज्ञासंज्ञिभावविमर्शः, इतरेतराश्रयदोषपरिहार-विचारः, प्रत्येकमादैचां वृद्धिसंज्ञाविचारः, तपरकरणविचारपूर्वकं गुणानां भेदकत्वाभेदकत्वादिविषय-विमर्श इत्यादयः प्रमुखा विषयाः सूत्रस्यानुशीलनाय प्रस्तुता भाष्यकारेण ।

'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रपदार्थः कुत्वाभावविचारश्च । 'वृद्धिरादैच' इति द्विपदं सूत्रं 'वृद्धिः आदैच्' इति 'कृतमनयोः साधुत्वम्' इति अत्र सूत्रभाष्ये दर्शनात् । यद्वा अत्र पदत्रयं 'वृद्धि आत् ऐच्' इति पस्पशायां भाष्योक्तत्वात् 'न केवलानि चर्चापदानि व्याख्यानम् – वृद्धिः, आत्, ऐज् इति' पदविभागदर्शनात् । वृद्धिशब्दस्त्वावृत्त्या योज्यः अत्र पक्षे 'अनयोः' इति भाष्यं खण्डयोरित्यर्थकम्।[1] लघुशब्देन्दुशेखरेऽपि नागेशभट्टेन पदत्रयं निरूपितम् " 'वृद्धिः आत् ऐच्' इति इदं पदत्रयमिति न सामासान्तादिप्रवृत्तिशङ्का"[2] । भाष्यकारः 'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रस्थचकारस्य कुत्वमाशङ्क्य कथयति "कुत्वं कस्मान्न भवति, चो कुः पदस्य इति"[3] अत्र कुत्वाप्राप्तिः कथं सम्भवतीति विषयं स्पष्टयन् निगदति प्रदीपकारः 'अनेकशक्तेः शब्दस्यशक्त्यवच्छेदेन संज्ञिनि विनियोगान्नित्यत्वाच्च सर्वसंज्ञानां लौकिकत्वादादैच्छब्दस्यानु-करणशब्दत्वाज्जातिशब्दत्वाद्वा शास्त्रप्राप्तिरस्तीति प्रश्नः'[4] शब्दार्थसम्बन्धस्य नित्यत्वात्सर्वसंज्ञानां नित्यत्वमतो लौकिकत्वाच्छास्त्रप्राप्तिरित्यन्वयः । लोकेऽर्थान्तरे प्रसिद्धानामपि संज्ञानां नित्यत्वमिति वोधयितुं सर्वशब्द' इति उद्योतकारः ।[5] हरदत्तमिश्रोऽस्मिन् विषये लिखति 'आदैच्छब्दा-त्समासत्वादर्थवत्त्वाद्वा विभक्त्युत्पत्तौ चो कुः (8/2/30) पदस्येति कुत्वं प्राप्तम् ।'[6] 'छन्दोवत्सूत्राणि भवन्तीति' भाष्येष्ट्या अयस्मयानि छन्दसि (1/4/20) इति सूत्रेण अत्र भत्वात् कुत्वं न भवति, परत्वात् भसंज्ञया पदसंज्ञा बाध्यत इति कुत्वाभावः । अस्मिन् प्रसङ्गे पुनः आक्षिपन् कथयति भाष्यकारः "यदि भसंज्ञा 'वृद्धिरादैजदेङ्गुणः' इति जश्त्वमपि न प्राप्नोति"[7] संहितापाठे इति भावः । शङ्कां समादधानः स्पष्टयति भाष्यकारः 'उभयसंज्ञान्यपि छन्दसि दृश्यन्ते। तद्यथा 'स सुष्टुभा स ऋक्वता गणेन ।' पदत्वात्कुत्वम्, भत्वाज्जश्त्वं न भवति । एवमिहापि पदत्वाज्जशत्वम्, भत्वात्कुत्वं न भविष्यति ।'[8] वेदव्याकरणयोरङ्गाङ्गिभावत्वाद् व्याकरण-

Scanned with OKEN Scanner

सूत्राण्येव छन्दोवद् भवन्तीति नान्यानि सूत्राणि यथा कैयटो लिखति 'छन्दोवदिति । न वैशेषिकसूत्राणि, अपित्वङ्त्वाद्व्याकरणसूत्राण्येव'[9] अङ्गत्वादर्थात् 'पदपदार्थबोधनद्वारा वेदोपकारकत्वादिति'[10] उद्योतकारः ।

तदभावितातद्भावितग्रहणपक्षसमीक्षा । सूत्रेऽस्मिनादैज्ग्रहणं किं स्वरूपं स्वीक्रियते तद्भावितमतद्भावितं वेति समुपस्थिते प्रश्ने भाष्यकारेणोभौ पक्षौ समीक्ष्यादैज्मात्रस्य ग्रहणं स्वीकृत्य तद् भावितातद्भवितेति पक्षद्वयमपि सिद्धान्तितम् । भाष्यवचनमस्ति 'अस्तु तर्हि आदैज्मात्रस्य ग्रहणम् ।'[11] तत्र तद् भावितग्रहणमर्थात् तेन वृद्धिशब्देन भवितानां विहितानां ग्रहणमिति । वृद्धिशब्दस्यावृत्त्यायमर्थो लभ्यत इति भावः । आदैज्मात्रस्येति स्वीकारे वृद्धिशब्दां नावर्तनीय इति भावः ।[12] आदैज्मात्रस्यग्रहणमेव पाणिनिसम्मतं मतमिति प्रतिपादयन् कैयटमनुसृत्य नागेशभट्टः निगदति आदैज्मात्रस्यग्रहणादेव 'मालादीनां च' इति सार्थकम् । अन्यथाऽस्यावृद्धत्वात् 'प्रस्थेऽवृद्धमकर्क्यादीनाम्' इत्येव सिद्धे किं तेन ।[13] मालाशब्दो 'वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम्' (1.1.73) इति सूत्रेण वृद्धसंज्ञोऽस्ति, स च तद्भावितो नास्ति अतः आदैज्मात्रग्रहणपक्ष एव मालादीनां च इति सूत्रे संगच्छत इति भावः ।

संज्ञासंज्ञिभावविमर्शः । भाष्यकारः 'वृद्धिरादैच' इति सूत्रस्य संज्ञासूत्रत्वं साधयितुं तत्र संज्ञाधिकारः कर्तव्यो न वेति विषयं विमृश्य वृद्धिशब्दः संज्ञेति आदैच्च संज्ञीति कथं स्वीकर्तुं शक्यत इति वार्त्तिकमाध्यमेन विविधैर्विशिष्टविचारैः समीक्षितवान् । यथा वार्त्तिकमस्ति 'संज्ञाधिकारः संज्ञासंप्रत्ययार्थः' अत्र भाष्यकारः वार्त्तिकाभिप्रायं लिखति 'अथ संज्ञा' इत्येवं प्रकृत्य वृद्ध्यादयः शब्दाः पठितव्याः । संज्ञासंप्रत्ययार्थः । वृद्ध्यादीनां शब्दानां संज्ञा इत्येष सम्प्रत्ययो यथा स्यात् ।[14] अत्र प्रदीपकारः कथयति 'संज्ञाधिकारः इति वार्त्तिकम् । तस्य व्याख्यानम्, अथसंज्ञेत्येवमिति । अथशब्दः संज्ञायाः प्रस्तावद्योतनार्थः । संज्ञाधिकारत्वेन वृद्ध्यादयः संज्ञात्वेन प्रतीयेरन्'[15] इति संज्ञाधिकारस्य प्रयोजनम् । तत्र संज्ञाधिकारस्य समर्थनेऽपरं वार्त्तिकमस्ति । 'इतरथा ह्यसंप्रत्ययो यथा लोके' अर्थात् अक्रियमाणे हि संज्ञाधिकारे वृद्ध्यादीनां संज्ञा इत्येष सम्प्रत्ययो न स्यात् । इदमिदानीं बहुसूत्रमनर्थकं स्यात् । अनर्थकमित्याह । कथम्? यथा लोके । लोके ह्यर्थवन्ति चानर्थकानि च वाक्यानि दृश्यन्ते ।[16] संज्ञाधिकारं विना 'यावच्चाप्तत्वमाचार्यस्य न साधितं तावदनर्थकत्वशङ्का झटिति समन्वयानवगमाद्वा'[17] बहूसूत्रमनर्थकं स्यादिति भावः संज्ञासंज्ञ्यसंदेहश्च इत्यपि वार्त्तिकं प्रस्तुवन् भाष्यकारः कथयति क्रियमाणेऽपि संज्ञाधिकारे संज्ञासंज्ञिनोरसन्देहो वक्तव्यः । कुतो ह्येतत् । वृद्धिशब्दः संज्ञा आदैचः संज्ञिनः इति । न पुनरादैचः संज्ञा वृद्धिशब्दसंज्ञीति ।[18] वार्त्तिकद्वयमपि निराकुर्वन् सिद्धान्तवार्त्तिकद्वारा निर्दिशति

Scanned with OKEN Scanner

भाष्यकारः यत्तावदुच्यते संज्ञाधिकारः कर्तव्यः संज्ञासंप्रत्ययार्थः इति । न कर्तव्यः । 'आचार्याचारात्संज्ञासिद्धिः ।' आचार्याचारात्संज्ञासिद्धिर्भविष्यति । किमिदमाचार्याचारादिति । आचार्याणामुपचारात् ।[19] आचार्याणां व्यवहारादित्यर्थः[20] 'यथालौकिकवैदिकेषु' तद्यथा लौकिकेषु वैदिकेषु कृतान्तेषु । लोके तावन्मातापितरौ पुत्रस्य जातस्य संवृत्तेऽवकाशे नाम कुर्वाते देवदत्तो यज्ञदत्त इति । तयोरुपचारादन्येऽपि जानन्ति इयमस्य संज्ञेति वेदे याज्ञिकाः संज्ञा कुर्वन्ति स्फयो यूपश्चषाल इति । तत्र भवतामुपचारादन्येऽपि जानन्ति इयमस्य संज्ञेति । एवमिहापि । इहैव तावत्केचिद्व्याक्षाणा आहुः वृद्धिशब्दः संज्ञा, आदैचः संज्ञिन इति ।[21] अपरं वार्तिकं निराकुर्वन् निगदति यदप्युच्यते क्रियमाणेऽपि संज्ञाधिकारे संज्ञासंज्ञियोरसन्देहो वक्तव्यः इति । संज्ञासंज्ञ्यसंदेहश्च । संज्ञासंज्ञिनोश्चासन्देहः सिद्धः । कुतः? आचार्याचारादेव ।[22] प्रकारान्तरेण, संज्ञाधिकारं विना, वृद्धिशब्दः संज्ञा आदैचः संज्ञिनः कथं भवितुमर्हत इति विषये कथयति 'अनाकृतिः' अथवा अनाकृतिः संज्ञा, आकृतिमन्तः संज्ञिनः । लोकेऽपि, ह्याकृतिमतो मांसपिण्डस्य देवदत्त इति संज्ञा क्रियते । 'लिङ्गेन वा' अथवा किञ्चिल्लिङ्गमासज्य वक्ष्यामि इत्थं लिङ्गा संज्ञेति । वृद्धिशब्दे च तल्लिङ्गं करिष्यते नादैच्छब्दे ।[23] तत्र 'अनाकृतिः संज्ञा इत्येतत्तु न्यायसिद्धत्वान्न वक्तव्यम्, लिङ्गेन वा' इत्येतद्वक्तव्यम् इति, 'तच्चापि वक्तव्यम्' इति भाष्याशयः । तत्र संज्ञालिङ्गमनुबन्धादिषु करणेन इत्संज्ञा लोपश्च न वक्तव्यौ भवतः । अर्थात् ङकारादिष्वनुबन्धेषु कलादिकमासङ्क्ष्यते ततश्च तेषां संज्ञात्वे सति ङादात्मनेपदं स्वयं निवर्तत इतीत्संज्ञा लोपश्च न वक्तव्यौ भवत इत्यर्थः ।[24] संज्ञासंज्ञिभावज्ञानाय अयमुपायो भवितुमर्हति पाणिन्यसम्मतत्वादपाणिनीयत्वात् स्वीकर्तुं न शक्यते यथा भाष्यकारो निगदति 'सिध्यत्येवम् । अपाणिनीयं तु भवति ।'[25] अतोऽयमुपायो नाश्रयणीय इति भावः ।

'वृद्धिरादैच' इति सूत्रद्वारा संज्ञासंज्ञिभावावगमार्थं शास्त्रज्ञानार्थञ्च भाष्यकारो विविधान् सम्भावितपक्षानुपस्थाप्य समीक्ष्य च सूत्रं नास्ति अनर्थकं, साधुत्वबोधकम्, प्रयोगनियमार्थम्, आदेशार्थम्, आगमार्थम्, विशेषणार्थञ्च न सम्भवति अपित्वस्ति संज्ञार्थमेवेति सप्रमाणं निर्दिष्टवान्। 'संज्ञाधिकारः संज्ञासम्प्रत्ययार्थ', 'इतरथा ह्यसम्प्रत्ययो यथा लोके' इति वार्त्तिकद्वयेन संज्ञाधिकारं विना सूत्रार्थक्यं शङ्कितमासीत् । तां शङ्कां निराकुर्वन् भाष्यकारः स्पष्टं ब्रूते । न यथा लोके तथा व्याकरणे । प्रमाणभूत आचार्यो दर्भपवित्रपाणिः शुचावकाशे प्राङ्मुख उपविश्य महता प्रयत्नेन सूत्राणि प्रणयति स्म । तत्राशक्यं वर्णेनाप्यनर्थकेन भवितुम्, किं पुनरियता सूत्रेण । किमतो यदशक्यम् अतः संज्ञासंज्ञिनावेव ।[26] संज्ञाधिकारं विना सूत्रानर्थक्यं नैव शङ्क्यमिति भावः। सूत्रञ्चेदं संज्ञासंज्ञिभावबोधकं विद्यत इत्यभिप्रायः ।

सूत्रविषये अन्यान् संभावितपक्षान् प्रस्तुवन् निराकुर्वन् च भाष्यकारो विचारयति 'कुतो नु खल्वेतत् संज्ञासंज्ञिनावेव । न पुनः साध्वनुशासनेऽस्मिन् शास्त्रे साधुत्वमनेन क्रियते ।'[27] व्याकरणशास्त्रं साध्वनुशासनशास्त्रम्, 'वृद्धिरादैच' इति सूत्रेण 'वृद्धिरादैच्' इति पदयोः साधुत्वं स्वीकर्तुं शक्यते[8] न वेति प्रश्ने भाष्यकारः समाधत्ते 'कृतमनयोः साधुत्वम् । कथम् । वृधिरस्मयविशेषेणोपदिष्टः प्रकृतिपाठे, तस्मात् क्तिन्प्रत्ययः । आदैचोऽक्षरसमाम्नाय उपदिष्टा'[28] 'वृद्धिरादैच्' इति पदयोः सूत्रेण साधुत्वं न क्रियत इति भावः ।

'प्रयोगनियमार्थं तर्हीदं' सूत्रं विद्यते 'वृद्धिशब्दात्परे आदैचः प्रयोक्तव्या इति' शङ्का निराकुर्वन् कथयति भाष्यकारः 'नेह प्रयोगनियम आरभ्यते ।'[29] 'प्रयुज्यमानस्य नियमो नारभ्यते, अपितु पदावयवस्य प्रकृतिप्रत्ययोपसर्जनागमादिरूपस्य । लोके च केवल एव वृद्धिशब्दः प्रयुज्यत इति न तस्यानेन नियमः क्रियते, लोके प्रयुक्तानां हीदमनुशासनम् ।'[30] अपि च 'यत्र सहप्रयोगप्रसङ्गस्तत्र नियमः कर्तव्यः, न च वृद्ध्यादैच्छब्दयोः सहप्रयोगप्रसङ्गः विनियोगात्प्राग-ससम्बन्धात् उत्तरकालं वृद्धिशब्देनैव गतत्वादिति नास्ति प्रयोगनियमार्थं सूत्रमिति'[31] हरदत्तः ।

आदेशार्थमपि सूत्रं भवितुमर्हति न वेति आक्षेपभाष्येण कथयति भाष्यकारः 'आदेशा-स्तर्हीमे स्यु' । वृद्धिशब्दस्यादैच आदेशाः ।[32] आदैचो वृद्धिशब्दस्यादेशा नैव भवितुमर्हन्तीति निर्दिशन् वदति भाष्यकारः 'षष्ठीनिर्दिष्टस्यादेशा' भवन्ति । न चात्र षष्ठीं पश्यामः ।[33] कैयटो भाष्याशयं स्पष्टयति 'षष्ठीनिर्दिष्टस्येति । स्थानशब्दोऽर्थवाची तिष्ठन्त्यस्मिञ्शब्दा इति स्थानम् । न च वृद्धिशब्दार्थमादैचो वक्तुं शक्ताः, तेनात्र षष्ठ्यर्थाभावादिति तात्पर्यम् ।[34]' तत्र पदमुञ्जरीकारस्यापि समीक्षणं भाष्यानुसारि वर्तते 'स्थान्यर्थाभिधानस्यैव ह्यादेशत्वम् । न च वृद्धिशब्द आदैचाम्, ते वा तस्यार्थमभिधातुं समर्थाः ।'[35] अतो 'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रमादेशार्थमपि नास्तीति भावः । आगमार्थमपि सूत्रमिदं भवितुमर्हति न वेति सम्भावयन् भाष्यकारो निगदति । 'आगमास्तर्हीमे स्युर्वृद्धिशब्दस्यादैच आगमाः ।'[36] आदैचामागमत्वं निराकुर्वन् कथयति भाष्यकारः 'आगमा अपि षष्ठीनिर्दिष्टस्यैवोच्यन्ते लिङ्गेन च, न चात्र षष्ठीं, न खल्वप्यागमलिङ्गं पश्यामः।'[37] अत्र प्रदीपकारो विषयं स्पष्टयन् कथयति 'अत्राप्यर्थोऽपेक्ष्यते अनागमकानामर्थे सागमका इत्यर्थः'[38] 'यथा न य्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वौ तु ताभ्यामैच्' इत्यादौ पञ्चम्याः षष्ठ्यर्थोऽवगम्यते ।'[39] 'देशविशेषप्रतिपत्तये टकारादिलिङ्गम् तत्र क्रियते'[40] अत्र षष्ठीनिर्देशा-भावात् टित्वादिलिङ्गाभावाच्च वृद्धिशब्द आगमार्थमपि नास्तीति भावः । सिद्धान्तपक्षं प्रस्तुवन्, वृद्धिरादैच पदयोः विशेषणविशेष्यभावनिराकरणपूर्वकं तयोः संज्ञासंज्ञिभावपक्षं स्थापयति यथा कथयति भाष्यकारः इदं खल्वपि भूयः सामानाधिकरण्यमेकविभक्तित्वं च । द्वयोश्चैतद् भवति ।

Scanned with OKEN Scanner

कयोः विशेषणविशेष्योर्वा संज्ञासंज्ञिनोर्वा । तत्रैतत्स्यात् विशेषणविशेष्ये इति । तच्च न, द्वयोर्हि प्रतीतपदार्थकयोर्लोके विशेषणविशेष्यभावो भवति । न चादैच्छब्दः प्रतीतपदार्थकः । तस्मात्संज्ञासंज्ञिनावेव ।'[41] वृद्धिरादैचपदयोः एकसूत्रस्थित्वादस्ति तयोः समानाधिकरण्यमेकविभक्तित्वञ्च । सामान्याधिकरण्यमेकविभक्तिञ्च विशेषणविशेष्ययोर्भवति संज्ञासंज्ञिनोर्वा भवति । एतयोर्विशेषणविशेष्यत्वं तु नैव युज्यते यतो हि द्वयोः प्रतीतपदार्थकयोर्लोके विशेषणविशेष्यभावो भवति । 'न ह्यस्ति सम्भवो वृद्धिशब्दश्चासावादैच्छब्दश्चेति । न च वर्धनक्रियाऽऽदैजिति । एवं विशेषणे च प्रयोजनमपि नास्ति ।'[42] न चादैकच्छब्दः प्रतीतपदार्थकः, न ह्यस्य कश्चिल्लौकिकोऽर्थः प्रसिद्ध इत्यर्थः ।[43] तस्मात्संज्ञासंज्ञिनावेव, 'वृद्धिरादैच' इति सूत्रं संज्ञार्थमिति भावः । तत्र सन्देहो भवति कः संज्ञो का संज्ञेति प्रश्ने भाष्यकारः समाधानत्रयं प्रस्तुतिपूर्वकं लघ्वर्थं हि संज्ञाकरणमिति सिद्धान्तं प्रतिपादितवान्, अपि च पूर्वोच्चारितः संज्ञो परोच्चरिता संज्ञेति तत्त्वं प्रकाशितवान् । सतो हि कार्यिणः कार्येण भवितव्यम् । तद्यथा इतरत्रापि सतो हि मांसपिण्डस्य देवदत्त इति संज्ञा क्रियते ।'[44]

'वृद्धिरादैच्' सूत्रे च पूर्वोच्चाारिता संज्ञा परोच्चारितः संज्ञी इति कथमिति प्रश्ने माङ्गलिक आचार्यो महतः शास्त्रौघस्य मङ्गलार्थं वृद्धिशब्दमादितः प्रयुङ्क्ते । अन्यत्र 'सर्वत्रैव हि व्याकरणे पूर्वोच्चारितः संज्ञी परोच्चारिता संज्ञा 'अदेङ्गुणः' इति यथा ।'[45] दोषवान्खल्वपि संज्ञाधिकारः अष्टमेऽपि संज्ञा क्रियते – 'तस्य परमाम्रेडितम् इति । तत्रापीदमनुवर्त्यं स्यात् ।'[46] अर्थात् संज्ञासंज्ञीभावस्य लोकवेदशास्त्रसिद्धत्वाद् दोषयुक्तत्वाच्च संज्ञाधिकारो नैव विधेय इति भाष्याशयः ।

इतरेतराश्रयदोषनिराकरणम् । 'वृद्धिरादैच्' इति सूत्रे इतरेतराश्रयरूपदोषमुद्भाव्य शब्दस्य नित्यत्वाद् दोषो निराकृतो भाष्यकारेण । यथा वार्त्तिकमाध्यमेन कथयति भाष्यकारः । सतो वृद्ध्यादिषु संज्ञाभावात्तदाश्रय इतरेतराश्रयत्वादप्रसिद्धिः । अर्थात् 'सतामादैचां संज्ञया भवितव्यम्, संज्ञया चादैचो भाव्यन्ते । तदेतद इतरेतराश्रयं भवति । इतरेतराश्रयाणि च प्रकल्पन्ते । तद्यथा नौर्नाविबद्धा नेतरत्राणाय भवति।'[47] दोषं निराकुर्वन् वार्त्तिकं प्रस्तुवन् भाष्यकारो ब्रूते 'सिद्धं तु नित्यशब्दत्वात् ।' सिद्धमेतत्। कथम् नित्यशब्दत्वात् । नित्याः शब्दाः नित्येषु शब्देषु सतामादैचां संज्ञा क्रियते, न च संज्ञयाऽऽदैचो भाव्यन्ते ।'[48] अत इतरेतराश्रयदोषो न सम्भवतीति भावः । शब्दस्य नित्यत्वाच्छास्त्रा- नर्थक्यमाशङ्क्य कथयति भाष्यकारः । 'यदि तर्हि नित्याः शब्दाः किमर्थं शास्त्रम् ।' शङ्कायाः समाधानं विद्यते । किमर्थं शास्त्रमिति चेन्निवर्तकत्वात्सिद्धम् । निवर्तकं शास्त्रम् । कथम् । 'मृजिरस्मायविशेषेणापदिष्टः । तस्य सर्वत्र मृजिबुद्धिः प्रसक्ता ।

Scanned with OKEN Scanner

तत्रानेन निवृत्तिः क्रियते । मृजेरक्ङित्सु प्रत्ययेषु मृजिप्रसङ्गे मार्जिः साधुर्भवतीति ।'[49] तदेव शब्दस्यनित्यत्वादितरेतराश्रय- रूपदोषो न क्वापि शास्त्रे विद्यत इत्यभिप्रायः । वृद्धिगुणसंज्ञे आदैचाम् अदेङाञ्च प्रत्येकं वर्णानां भवतः समुदायस्य वेति विषयं वार्त्तिकमाध्यमेन समीक्ष्यं संज्ञाद्वयमपि प्रत्येकं वर्णस्य भवतो न समुदायस्य इति सप्रमाणं निर्दिष्टवान् भाष्यकारः । तत्र वार्त्तिकमस्ति 'प्रत्यवयवं च वाक्यपरि- समाप्तेः' वार्त्तिकं स्पष्टयन् कथयति भाष्यकारः प्रत्यवयवञ्च वाक्यपरिसमाप्तिर्दश्यते । न चोच्यन्ते प्रत्येकमिति । पत्येकं च भुजिः परिसमाप्यते । सत्येतस्मिन्दृष्टान्ते यदि तत्र सहग्रहणं क्रियते, इहापि प्रत्यकमिति वक्तव्यम् । अथ तत्रान्तरेण सहग्रहणं सहभूतानां कार्यं भवति, इहापि नार्थः प्रत्येकमिति वचनेन ।[50] अन्यत्र सहवचनात्समुदाये संज्ञाऽप्रसङ्गः अर्थात् अन्यत्र सहवचना- त्समुदाये वृद्धिगुणसंज्ञयोरप्रसङ्गः । यत्रेच्छति सहभूतानां कार्यं करोति तत्र सहग्रहणम् । तद्यथा 'सह सुपा' 'उभे अभ्यस्तं सह' इति ।[51] अस्मिन् विषये पदमञ्जरीकारो निगदति । अतो यत्नाभावात्प्रत्येकमेव संज्ञा । किञ्च लौकिकप्रयोगे व्यवस्थितामादैचां संज्ञया भवितव्यम्, न च समुदायस्य क्वचित्प्रयोगः, अतोऽसम्भवादपि प्रत्येकमेव संज्ञा । लिङ्गाच्च । किं लिङ्गम्? प्रस्थेऽवृद्धमकर्क्यादीनाम् (6.2.87) मालादीनां च (6.2.88) इह हि 'मालाप्रस्थः' इत्यादाव- वृद्धमिति पर्युदासे वचनम्, अतः प्रत्येकमेव संज्ञा[52] न समुदायस्येति भावः ।

सूत्रे आकारस्य तपरकरणं किमर्थमिति प्रश्नं विचारयन् कथयति भाष्यकारः । अथ किमर्थमाकारस्तपरः क्रियते?[53] प्रश्नाशयं स्पष्टयति प्रदीपकारः 'अथ किमर्थमिति । किमाकृतिपक्षे भिन्नकालनिवृत्त्यर्थम् अथवा व्यक्तिपक्षे गुणान्तरयुक्तानां ग्रहणार्थमिति प्रश्नः ।'[54] 'आकारस्य तपरकरणं सवर्णार्थम्' इति वार्त्तिकद्वारा समाधत्ते भाष्यकारः तपरकरणं क्रियते । किं प्रयोजनम् । सवर्णार्थम् । 'तपरस्तत्कालस्य' इति तत्कालानां सवर्णानां ग्रहणं यथा स्यात् । केषाम्? उदात्तानुदात्तस्वरितानाम् ।[55] अस्मिन् प्रसङ्गे गुणानां भेदकत्वाभेदकत्वपक्षद्वयमपि लौकिकदृष्टान्त- द्वारा विविच्य गुणानामभेदकत्वपक्षः सूत्रप्रमाणेन सिद्धान्तत्वेन स्वीकृतो भाष्यकारेण । यथा भाष्यमस्ति 'उभयमिदं गुणेषूक्तम् - भेदका अभेदका इति । किं पुनरत्र न्याय्यम् । कुत एतत्? 'अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङुदात्तः' इति उदात्तग्रहणं करोति । यदि च भेदका गुणाः स्युः उदात्त- मेवोच्चारयेत् ।'[56] तपरकरणस्य प्रयोजनान्तरं निर्दिशन् कथयति भाष्यकारः 'इदं तर्हि प्रयोजनम् आन्तर्यतस्त्रिमात्रचतुर्मात्राणां स्थानिनां त्रिमात्रचतुर्मात्रा आदेशा वा मा भूवन्निति । खट्वा इन्द्रः खट्वेन्द्रः खट्वा उदकं खट्वोदकम्, खट्वा ईषा खट्वेषा, खट्वा ऊढा खट्वोढा, खट्वा एलका खट्वैलका, खट्वा ओदनः खट्वौदन, खट्वा ऐतिकायनः खट्वैतिकायनः, खट्वा औपगवः

Scanned with OKEN Scanner

खट्वौपगवः इति ।'[57] त्रिमात्रचतुर्मात्राणां स्थानिनां त्रिमात्रचतुर्मात्रा आदेशा मा भूवन्निति तपरपदे तः परो यस्मात्सोऽयं तपर इति विग्रहेन साकं तादपि परस्तपर इति विग्रहोऽपि भाष्यकारेण निर्दिष्टः तेन वृद्धिगुणसंज्ञकसूत्रद्वयस्थिताः सर्वेऽपि वर्णाः तपरा भवन्ति येन त्रिमात्रचतुर्मात्राणां स्थानिनां द्विमात्रा एव आदेशा भवन्ति न तु त्रिमात्राश्चतुर्मात्रा वेति भावः । यथा भाष्यवचनमस्ति। अथ क्रियमाणेऽपि तकारे कस्मादेव त्रिमात्रचतुर्मात्राणां स्थानिनां त्रिमात्रचतुर्मात्रा आदेशा न भवन्ति। तपरस्तत्कालस्येति नियमात् । ननु तःपरो यस्मात्सोऽयं तपरः ! नेत्याह तादपि परस्तपरः ।[58]

काशिकाकारः भाष्यसम्मतं सूत्रार्थं निर्दिशन् निगदति 'वृद्धिशब्दः संज्ञात्वेन विधीयते प्रत्यकमादैचां वर्णानां सामान्येन तद्भावितानामतद्भावितानां च । तपरकरणमैजर्थं तादपि परस्तपर इति । खट्वैडकादिष् त्रिमात्रचतुर्मात्रप्रसङ्गनिवृत्तये ।'[59]

तदेव पाणिनिव्याकरणस्य 'वृद्धिरादैच्' इति प्रथमं सूत्रं छन्दोवत्सूत्राणि भवन्तीति सिद्धान्तप्रतिपादकम्, तद्भावितातद्भावितोभयपक्षनिदर्शकम्, सूत्रानर्थक्यनिषेधकम्, शब्दसाधुत्वानुशासनबोधकम्, प्रयोगनियमनियामकम्, आदेशागमस्वरूपपतिपादकम्, विशेषणविशेष्यभावस्वरूपबोधकम्, व्याकरणे संज्ञासंज्ञिभावस्वरूपनिर्णायकम्, लघ्वर्थं हि संज्ञाकरणमिति सिद्धान्तद्योतकम्, मङ्गलार्थप्रबोधकम्, शब्दनित्यत्वसिद्धान्तप्रतिपादनद्वारा व्याकरणशास्त्रे इतरेतराश्रयदोषनिवारकम्, शास्त्रं निवर्तकमिति सिद्धान्तप्रतिपादकम्, प्रत्येकमादैचां वर्णानां संज्ञात्वनिर्णायकम्, गुणानामभेदकत्वसिद्धान्तप्रतिष्ठापकम्, 'तपरस्तत्कालस्य' इति सूत्रस्य व्यवस्थापकम्, सूत्रकारस्य सूत्राणाञ्च प्रामाण्यपोषकमिति बहुविधशोधविषयसमन्वितं सद्व्याकरणशास्त्रस्य प्रवर्तकं प्रस्तावकञ्च सूत्रं वर्तत इति भाष्यानुशीलनेन सप्रमाणं वक्तुं युज्यत इति शम् ।

सन्दर्भाः

1. महाभाष्योद्योतः ।
2. लघुशब्देन्दुशेखरः, संज्ञाप्रकरणम् ।
3. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
4. तत्रैव प्रदीपः ।
5. तत्रैवोद्योतः ।
6. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
7. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
8. तदेव ।

Scanned with OKEN Scanner

9. तत्रैव प्रदीपः ।
10. तत्रैवोद्योतः ।
11. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
12. महाभाष्यप्रदीपरत्नप्रकाशः 1.1.1 ।
13. महाभाष्योद्योतः 1.1.1 ।
14. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
15. तत्रैव प्रदीपः ।
16. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
17. तत्रैव प्रदीपः ।
18. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
19. तदेव ।
20. तत्रैव प्रदीपः
21. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
22. तदेव ।
23. तदेव ।
24. तत्रैव प्रदीपः ।
25. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
26. तदेव ।
27. तदेव ।
28. तदेव ।
29. तदेव ।
30. तत्रैव प्रदीपः ।
31. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
32. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
33. तदेव ।
34. तत्रैव प्रदीपः ।
35. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
36. महाभाष्यम् 1.1.1 ।

Scanned with OKEN Scanner

37. तदेव ।
38. तत्रैव प्रदीपः ।
39. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
40. महाभाष्यप्रदीपः 1.1.1 ।
41. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
42. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
43. महाभाष्यप्रदीपः 1.1.1 ।
44. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
45. तदेव ।
46. तदेव ।
47. तदेव ।
48. तदेव ।
49. तदेव ।
50. तदेव ।
51. तदेव ।
52. पदमञ्जरी 1.1.1 ।
53. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
54. तत्रैव प्रदीपः ।
55. महाभाष्यम् 1.1.1 ।
56. तदेव ।
57. तदेव ।
58. तदेव ।
59. काशिका 1.1.1 ।

आचार्यः (व्याकरणविभागः)
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई ।

★★★

Scanned with OKEN Scanner

वर्षः- 42 अक्टूबर 2016 - सितम्बर 2017 अङ्कः-1

स्वरमङ्गला

त्रैमासिकी संस्कृत-शोध-पत्रिका

(वार्षिकाङ्कः)

राजस्थान-संस्कृत-अकादमी

जे-15, अकादमीसङ्कुलम् (द्वितीयतलम्)
झालानासांस्थानिकक्षेत्रम्, झालानाडूंगरी, जयपुरम्-302004
दूरभाष एवं फैक्स - 2709120
E-mail: rajasthansanskritacademy@gmail.com
Website: www.rajasthansanskritacademy.org

Scanned with CamScanner

रजि.संख्या RM 26065/72 ISSN : 2249-9296

स्वरमङ्गला

(त्रैमासिकी संस्कृत-शोधपत्रिकाया:)

वार्षिकाङ्कः

वर्ष: 42 अक्टूबर 2016 - सितम्बर 2017 अङ्कः 1

प्रधानसम्पादक:

डा. जया दवे

अध्यक्ष:, राजस्थान-संस्कृत-अकादमी, जयपुरम्

प्रबन्धसम्पादक:

डा. जे.एन.विजय:

निदेशक:, राजस्थान-संस्कृत-अकादमी, जयपुरम्

सम्पादक:

डा. राजधरमिश्र:

सह-आचार्य:, कार्यपरिषत्सदस्य:, ज.रा.राजस्थानसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य, जयपुरम्

सहायक-सम्पादक:

डा. ललितकिशोरशर्मा

व्याख्याता, श्रीदिगम्बरजैन-आचार्यसंस्कृतमहाविद्यालयस्य, जयपुरम्

राजस्थान-संस्कृत-अकादमी

जे-15, अकादमीसङ्कुलम्, झालानासांस्थानिकक्षेत्रम्,

झालानाडूंगरी, जयपुरम् - (राजस्थानम्)

Scanned with CamScanner

रजि.संख्या RM 26065/72 ISSN : 2249-9

स्वर-मङ्गला

प्रकाशनम्

अक्टूबर 2016 - सितम्बर 2017

प्रधानसम्पादकः

डॉ. जया दवे

प्रबन्धसम्पादकः

डॉ.जे.एन.विजयः

सम्पादकः

डॉ. राजधरमिश्रः

सहायक-सम्पादकः

डॉ. ललितकिशोरशर्मा

वार्षिकमूल्यम् : शतम् रूप्यकाणि (100.00)
सैषा प्रतिः पञ्चविंशति रूप्यकाणि (25.00)
आजीवनमूल्यम् : सहस्रम् रूप्यकाणि (1000.00)

सङ्गणकटङ्ककः दीपक एन्टरप्राइजेज, जयपुरम्, दूरध्वनिः 7976587612
मुद्रक : राजस्थान-राज्य-सहकारी-मुद्रणालयः लि., जयपुरम्

Scanned with CamScanner

वार्षिकाङ्कः

स्वरमङ्गला - विषयसूचिः

प्रबन्धसम्पादकीयम्		-	डॉ. जयादवे	
सम्पादकीयम्		-	डॉ. राजधरमिश्रः	
व्याकरणशास्त्रीयो निबन्धः -				
१.	घटो घट' इत्यत्र शास्त्रार्थसंवादः	-	प्रो.बोधकुमारझाः	1
२.	आगमप्रमाणं शक्तिश्च	-	डॉ.संजीतकुमारझा	10
३.	कच्चायनपाणिनिव्याकरणयोः कारकप्रकरणस्य तुलनात्मक-अध्ययनम्	-	डॉ. श्वेताजैनः	15
मीमांसाशास्त्रीयो निबन्धः -				
४.	कुण्डमण्डपशब्दविवरणम्	-	कमलनयनशर्मा	21
अद्वैतवेदान्तशास्त्रीयो निबन्धः				
५.	ब्रह्मणः जगत्कारणत्वे कश्चिद्विचारः	-	डॉ. उमेशनेपालः	25
साहित्यशास्त्रीयो निबन्धः				
६.	अत्यष्टिजातिगतानां प्रमुखच्छन्सां काव्यानुगुणता	-	डॉ. मीराद्विवेदी	33
७.	काव्येषु राजनीतिः	-	डॉ.रामनारायणझा	46
८.	अभिनवाचार्यराधावल्लभीयसंस्कृतनाट्यसाहित्ये सांस्कृतिकी पर्यावरणचेतना	-	डॉ.पूर्णचन्द्र-उपाध्यायः	57
९.	राष्ट्रकविः 'महाकविभवभूतिः'	-	डॉ.रामेश्वरप्रसादगुप्तः	67
१०.	महाकविमाघस्य धर्मविमर्शः	-	डॉ. स्नेहलताशर्मा	71
११.	दर्शनशास्त्रज्ञः कालिदासः	-	डॉ०आशासिंहः	78
१२.	अभिनवसंस्कृतकाव्यशास्त्रसमीक्षणम्	-	डॉ. राधावल्लभशर्मा	83
दर्शनसम्बद्धो निबन्धः				
१३.	मानवजीवने गीतायाः प्रासङ्गिकता	-	डॉ. ललितकिशोरशर्मा	88

Scanned with CamScanner

वैदिकवाङ्मयसम्बद्धो निबन्धः

१४. वैदिकवाङ्मये अन्तरिक्षविज्ञानम् – म.म.डॉ.कैलाशनाथद्विवेदी 92

१५. जन-हिते – वैदिकभाषा-सम्बन्धे
एका लघ्वी जिज्ञासा – डॉ०नारायणशास्त्री काङ्करः 97

१६. वैदिकवाङ्मये शक्तिः – डॉ०अनिलकुमारशर्मा 101

शिक्षाशास्त्रीयो निबन्धः

१७. शास्त्रशिक्षणे प्रामाण्यविचारः – डॉ. रेखाशर्मा 10

कथासाहित्यसम्बद्धालेखः

१८. परम्परा – डॉ. राकेश शास्त्री 10

१९. उत्तरपूर्वाञ्चले वैदेशिकप्रवेशमवरोद्धुं सावधं
सफलञ्चाभियानम् भाग-II - वेणीमाधव शर्मा 1

२०. राजकुमारी' अम्बा (स्मृतिकथा) – डॉ. हर्षदेवमाधवः 1

कविताशोधालेखः

२१. कयाचित् सम्मिल्य – डॉ.बलरामशुक्लः 1

२२. संस्कृता भारती भाति वैज्ञानिकी – प्रो.रहसबिहारीद्विवेदी 1

२३. कस्यात्र दोषः – डॉ०वत्सला 1

शोधालेखः

२४. श्रीमदुदयनाचार्यकृतायां लक्षणावल्यां
वर्णितादार्शनिकचिन्तनस्य पर्यायलोचनम् – डॉ०भूपेन्द्रकुमारराठौरः

२५. माघस्सर्वगुणोपेतः – कृष्णदासचेला

२६. महाभारते वनसंरक्षणम् – सुभाषचन्द्रः

२७. ज्योतिर्विज्ञाने सन्ततियोगवियोगश्च – धीरजशर्मा

२८. राजस्थानसंस्कृत-अकादमी अध्यक्षः निदेशकश्च परम्परा

२९. राजस्थानसंस्कृत-अकादमीद्वारा संस्कृतभाषायां प्रकाशितग्रन्थानां सूचिः

३० राजस्थानसंस्कृत-अकादमीद्वारा हिन्दीभाषायां प्रकाशितग्रन्थानां सूचिः

Scanned with CamScanner

वर्ष: 42 अङ्क: 1
अक्टूबर 2016–सितम्बर 2017

स्वरमङ्गला
ISSN-2249-9296

'घटो घट' इत्यत्र शास्त्रार्थसंवाद:

प्रो.बोधकुमारझा:
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
क०जे०सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्,
विद्याविहार:, मुम्बई-४०००७७

सदाशिवसमारम्भां शङ्कराचार्य्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्य्यपर्य्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्।।

पक्षोपस्थापनम् –

तत्र तावत् बोधो नाम कश्चिदात्मवृत्तिर्गुण:। स च प्रत्यक्षप्रमाणजन्य: 'अयं घट:' इति बोध: प्रत्यक्षम्, अनुमानप्रमाणजन्य: 'पर्वतो वह्निमान्' इति बोध: अनुमानम्, उपमानप्रमाणजन्य: 'गवयपदवाच्योऽयम्' इति शक्तिबोध: उपमानम्, शब्दप्रमाणजन्यश्च 'वेदा: प्रमाणमि'त्यादिबोध: शाब्दबोध उच्यते। तदेवं प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दा: चत्वार: प्रमाणानि, तज्जन्यास्तु प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दा: चत्वारो बोधा: प्रमा इत्युच्यन्ते। तत्र यस्यार्थस्य बोधो भवति सोऽर्थो विषय:। यथा 'राज्ञ: पुरुष:' इति ज्ञाने शाब्दिकमते राजा, स्वस्वामिभाव:, पुरुषश्च विषया:। न्यायनये तु 'राज्ञ: पुरुष:' इत्यत्र राजा, निरूपितत्वम्, स्वत्वम्, आश्रयत्वम्, पुरुषश्च विषया:। तत्र क्रमश: स्वस्वामिभावसम्बन्धेन राजविशिष्ट: पुरुष:' इति, राजनिरूपितस्वत्ववान् पुरुष' इति बोधाकार:। अयञ्च बोध: अन्वयबोध इत्यप्युच्यते। अन्वयपदं च करणव्युत्पत्त्या सम्बन्धपरम्, यथा 'राज्ञ: पुरुष:' इत्यत्र स्वस्वामिभावसम्बन्धिनान्वय: इत्यत्रान्वयपदम्। अन्वयबोधपदस्य पदार्थद्वयसम्बन्धविषयकबोधे रूढत्वात् शाब्दबोधोऽर्थ:।

अथेदं विचारणीयम् – यच्छब्दप्रमाणजनितान्वयबोधे अन्वयभानं किमधीनम्? न हि पदार्थतावच्छेकादिसंसर्गावभासिका पदवृत्ति: एकस्मिन् पदार्थे अपरपदार्थस्य संसर्गं भासयितुमलम्, तादृशसंसर्गस्य वृत्त्यविषयत्वात्। शब्दस्थलीयार्थावगते: शब्दमात्राधीनतया उपायान्तरेण तद्भानं न शक्योपपादनमिति चेच्छ्रूयताम् –

शाब्दबोधे शक्यशक्यतावच्छेदकतत्संसर्गादीनां वृत्तिभास्यत्वम्। पदार्थे पदार्थसंसर्गस्य चाकाङ्क्षाभास्यत्वं न्यायविदोङ्गीकुर्वन्ति। तथाहि – शाब्दस्थले द्विविध: संसर्गो भासते – वृत्तिभास्य:, आकाङ्क्षाभास्यश्च। 'घटोऽस्ती'त्यत्र घटपदवृत्ति: घटे घटत्वस्य समवायसम्बन्धं भासयति। 'अस्ति' पदञ्च अस्तित्वं भासयति। किन्तूक्तपदार्थयो: सम्बन्धं 'घटोऽस्ती'ति

Scanned with CamScanner

वाक्यानुपूर्वीरूपा आकाङ्क्षा भासयति। इत्थञ्चाकाङ्क्षाज्ञानस्य शाब्दकारणत्वे सिद्धे कीदृशशाब्दबोधे कीदृशमाकाङ्क्षाज्ञानं कारणमिति विशेषतः शाब्दाकाङ्क्षाज्ञानयोः कार्य्यकारणभावज्ञानात्मकव्युत्पत्तितत्त्वबुबोधयिषया नव्यन्यायाचार्य्यो गदाधरभट्टाचार्यो व्युत्पत्तिवादाभिधं शब्दखण्डग्रन्थं न्यभान्त्सीत्। तत्र प्रथमतः शाब्दबोधद्वैविध्यप्रयोजकं सम्बन्धद्वैविध्यं प्रदर्शयन्नसौ व्यलेखीत् – ''स च क्वचिदभेदः क्वचिच्च तदतिरिक्त एवे'ति। तत्र अभेदस्तादात्म्यम्, तद्भिन्नो निरूपितत्व-स्वस्वामिभावादिः भेदसम्बन्ध इत्युच्यते, भेदे सति यः सम्बन्ध इति सप्तमीसमासाभ्युपगमात्। अनयोर्भेदाभेदयोः यः अभेदः सम्बन्धः, तस्य बोधः क्व इति जिज्ञासायां जगाद गदाधरः ''अभेदान्वयबोधश्च विरूपोपस्थितयोरेवेति व्युत्पत्ति'रिति।

'विरूपोपस्थिततयोरि'त्यत्र रूपं नाम धर्म्मः। विरुद्धधर्म्माभ्याम् उपस्थितयोः पदार्थयोरेव अभेदान्वयोरेव अभेदान्वयो भवतीति राद्धान्तः। यथा 'नीलो घटः' इत्यत्र पदार्थस्यैक्येऽपि नीलत्वेन नीलोपस्थितिः, घटत्वेन घटोपस्थितिः। तथाहि –नीलत्वं प्रकारतावच्छेदकं, घटत्वं विशेष्यतावच्छेदकं, तयोः धर्म्मयोः विरूद्धत्वात् अभेदान्वयः, अर्थात् अभेदसंसर्गक नीलप्रकारकः घटविशेष्यको बोधः।'घटो घटः' इत्यत्र प्रकारतावच्छेदक-विशेष्यतावच्छेदकयोः घटत्वरूपयोः समानत्वात् नाभेदान्वयः।

न च एकव्यक्तेरेव, अर्थात् विशेष्यविशेषणयोः ऐक्ये एव अभेदान्वयः सम्भवः, तर्हि विरूपोपस्थितयोरित्यत्र द्विवचनमनुपपन्नमिति वाच्यम्, अत्र बहुव्रीहेरभ्युपगमात्। तथा च विरूपाभ्याम् विभिन्नधर्म्माभ्याम्, उपस्थितो याभ्यां शब्दाभ्यां तौ विरूपोपस्थितौ, तयोः विरूपोपस्थितयोरिति। इदञ्च शब्दस्य विशेषणम्। षष्ठ्यर्थो जन्यत्वम्। तथा च भिन्नरूपेणोपस्थापकपदजन्य एवाभेदान्वयबोध इति नियमाकारः। परमेतादृशे नियमाकारेऽङ्गीकृते ''नीलो घटः घटो घटः'' इति वाक्यद्वयजन्यः समूहालम्बनात्मकः बोधोऽपि विषयाक्रान्तः स्यात्, प्रथमेन नीलाभिन्नघटत्वेन, द्वितीयेन घटत्वेन घटोपस्थितिरिति विभिन्नरूपाभ्यामेकस्यैवार्थस्योपस्थितेः। तस्मात् नियमस्वरूपे भावे क्तप्रत्ययेन भाव्यम्। उपस्थितेः प्रयोज्यत्वसम्बन्धेन षष्ठ्यर्थविषयतायाम्, तस्य च निरूपकत्वसम्बन्धेन अभेदेऽन्वयः। तथा च विरूपे = विभिन्नप्रकारिके, ये उपस्थिते = उपस्थिती, तत्प्रयोज्या या प्रकारता – विशेष्यतारूपा विषयता, तन्निरूपको योऽभेदस्तद्विषयको बोध इत्यर्थः।

तदित्थं गदाधरोक्तम्'अभेदान्व्यबोधश्च विरूपोपस्थितयोरेवेति' वचनं सम्यक्। अस्माभिः सर्व्वैश्च तदङ्गीकरणीयमेव।

पूर्व्वपक्षः – अयि भोः!'प्रयोजनं विना मन्दोऽपि न प्रवर्त्तते' – इति पांशुलपादा हालिका अपि जानन्ति। अभेदान्वयबोधाय एका व्युत्पत्तिः पूर्व्वमेव गदाधरेण स्वीकृता। सा च 'अभेदस्य प्रातिपदिकार्थे स्वसमानविभक्तिकेन स्वाव्यवहितपूर्ववर्त्तिना च पदेनोपस्थापितस्यैव संसर्गमर्यादया

भासते' इतिरूपा। 'उपस्थापितस्यैव' इत्यत्र एवकारो भिन्नक्रमः। अनुयोगित्वं सप्तम्यर्थः। तत्र तस्य प्रकृत्यर्थे प्रातिपदिकार्थे वृत्तित्वसम्बन्धेन, अभेदे च निरूपकत्वसम्बन्धेनान्वयः। उपस्थापितस्येत्यत्र षष्ठ्यर्थः प्रतियोगित्वम्। तस्य प्रकृत्यर्थे वृत्तित्वसम्बन्धेन, अभेदे च निरूपकत्वसम्बन्धेनान्वयः। तथा च प्रातिपदिकार्थनिष्ठानुयोगितानिरूपकः स्वसमानविभक्तिक-स्वाव्यवहितपूर्वान्यतरपदोपस्थाप्य-अर्थनिष्ठप्रतियोगितानिरूपकः अभेदः आकाङ्क्षाप्रयोज्यसंसर्गताश्रय इत्यर्थः। 'नीलो घटः' इत्यत्र स्वम्= विशेष्यवाचकपदं घटपदम्, तत्र वर्त्तमाना विभक्तिः = प्रथमा विभक्तिः, तत्समानविभक्तिकं प्रथमान्तं नीलपदम्, तेनोपस्थापितस्य नीलरूपाश्रयस्य अभेदः संसर्गः। एवं हि व्यस्तस्थले बोधः। समस्तस्थले च 'नीलघटमानये'त्यत्र समानविभक्तिकत्वाभावेऽपि स्वम् = घटपदम्, तदव्यवहितपूर्ववर्त्तिना नीलपदेन उपस्थापितस्य नीलपदार्थस्य प्रातिपदिकार्थे घटे अभेदान्वयः सम्पद्यते। 'नीलस्य घटः' इत्यत्र च नीलपदस्य घटपदसमानविभक्तिकत्वमपि नास्ति, विशेषणवाचकपदस्य नीलस्य षष्ठ्या व्यवधानेन घटपदाव्यवहितपूर्ववर्त्तित्वमपि नास्ति, अतो न तत्राभेदान्वयः। एवञ्च 'नीलो घटः', 'नीलघटमानय', 'नीलस्य घटः' इत्याद्यनुरोधात् अस्याः एकस्याः व्युत्पत्तेः अङ्गीकर्त्तव्यतया अपरा व्युत्पत्तिः कुतः स्वीक्रियते? किमापतितम्? यदर्थं गौरवं वोढुमुत्सहते?

उत्तरपक्षी – यद्यभेदसम्बन्धेनान्वये समानविभक्तिकत्वमेव प्रयोजकं स्यात्, स्याच्च तदा 'नीलो घट' इतिवत् 'घटो घटः' इत्यस्यापि प्रयोगः। किञ्च अस्ति। व्युत्पत्तिस्वीकारे अनुभव एव गमकः। 'घटो घटः' दण्डवान् दण्डवान्' 'पाकं पचती'त्यादौ क्रमशः घटत्वावच्छिन्ने घटत्वावच्छिन्नस्य, दण्डवत्त्वावच्छिन्ने दण्डक्त्वावच्छिन्नस्य, पाकत्वावछिन्ने पाकत्वावच्छिन्नस्य अभेदान्वयबोधानुदयात्, 'नीलो घट' इत्यादौ च तादृशबोधानुभवात् अवश्यमपरापि व्युत्पत्तिरभ्युपेया।

पूर्वपक्षी – 'कारणसामग्रीसत्त्वे कार्य्यावश्यम्भाव' इति नियमः। तदनुरोधेन घटस्य स्वात्मना भेदाभावाद् योग्यतायाः सत्त्वात्, समानविभक्तिकत्वस्य च सत्त्वात् 'घटो घट' इत्यत्र अभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारतानि रूपितघटत्वावच्छिन्नविशेष्यताकशाब्दबोधस्य आपत्तिस्तु वर्त्तत एव।

उत्तरपक्षी – यादृशं फलं क्वचित्प्रसिद्ध्यति तादृशस्यैवापत्तिः सम्भवति क्लृप्तसामग्रीबलात्। आपत्तिं प्रति आपाद्यव्यतिरेकनिश्चयः, आपादकवत्तानिश्चयश्च अपेक्षितः। आपाद्यमत्र अभेदसंसर्गकघटप्रकारकघटविशेष्यकत्वं शाब्दबोधे। अत्र प्रतियोगिनः आपाद्यस्य अभावात् तद्व्यतिरेकस्य आपाद्यव्याप्यापादकस्याप्रसिद्धेः तादृशान्वयबोधापत्तिः अशक्यैव। न हि कैश्चित् क्वचित् खपुष्पस्य – शशविषाणस्य वा आपत्तिः दीयते।

पूर्वपक्षी – अप्रसिद्धिहेतोः 'घटो घटः' इत्यत्र अभेदान्व्यापत्तिः नेति भवत्या अभिप्रायः। परं 'घटो नीलघट' इत्यत्र नीलाभिन्नो घट इत्येव बोधः। उद्देश्यस्य प्रथमावगतत्वेन तस्य

अपूर्वबोध्यत्वरूपविधेयत्वासम्भवेन विधेयतया उद्देश्यावगाही शाब्दबोधो न सम्भवतीति यद्यपि प्राचामभिमतम्। तथापि विधेयकोटावधिकावगाहिनः शाब्दबोधस्य नवीनैः स्वीकारात् नीलघटाभिन्नो घट' इति बोधात्, तेनैव च 'घटो नीलघटो न वेति' सन्देहनिवृत्तिसम्भवात् 'घटो नीलघट' इत्यादौ नीलत्वस्य अधिकस्य भानेऽपि अभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारतानिरूपित-घटत्वावच्छिन्नविशेष्यताकः शाब्दबोधः प्रसिद्ध एव।

उत्तरपक्षी - विशेषणस्य विशेषणं विशेषणतावच्छेदकम्। 'घटो नीलघट' इत्यत्र नीलं विशेषणतावच्छेदकम्। तथा चात्र विशेषणतावच्छेदकविधया 'नीलघटाभिन्नो घट' इति शाब्दबोधे नीलभाननियामकसामग्री (१) नीलपदजन्यनीलोत्पस्थितिः (२) घटपदं नीलघटान्वितस्वार्थं बोधयतु - इति तात्पर्य्यज्ञानम् (३) घटः नीलघटाभेदसंसर्गवान् - इति योग्यताज्ञानम् (४) प्रथमान्तघटपदाव्यवहितोत्तर-प्रथमान्तनीलघटपदत्वसमभिव्याहारः - इति आकाङ्क्षाज्ञानम्। एतादृशनीलभाननियामकसामग्रीबलाद् 'घटो नीलघटः' इत्यत्र अभेदसंसर्गक-घटप्रकारक-घटविशेष्यकशाब्दबोधसम्भवेऽपि, तादृशसामग्र्यभावात् न 'घटो घटः' इत्यत्र अभेदसंसर्गावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारतानिरूपित-घटत्वावच्छिन्नविशेष्यताकः शाब्दबोधः।

पूर्वपक्षी - 'द्रव्यं घटः' इत्यादौ यो द्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यतानिरूपित-घटत्वावच्छिन्नप्रकारताकः शाब्दबोधः, सः अभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारताकः धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन द्रव्यत्वे प्रसिद्धः। तादृशशाब्दबोधस्य धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन 'घटो घट' इत्यादौ घटत्वे आपत्तिः सम्भवति।

उत्तरपक्षी - आपादकाभावे आपत्त्यभावः स्यात्।

पूर्वपक्षी - न चात्रापादकाभावः। 'द्रव्यं घट' इत्यादौ द्रव्यत्वे धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन शाब्दबोधोत्पादको यदभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारताकं योग्यताज्ञानम्, घटत्वावच्छिन्नप्रकारताक-बोधजननेच्छया उच्चरितत्वरूप-तात्पर्य्यज्ञानम्, घटत्वावच्छिन्नोपस्थितिः - इत्येतत्समुदायः, स एव समुदायः 'घटो घट' इत्यत्रापि अस्त्येव।

सिद्धान्ती - द्रव्यत्वे धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन निरुक्तशाब्दबोधोत्पादिका सामग्री तु - द्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यताक-अभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारताक-योग्यताज्ञानम्, द्रव्यपदजन्यद्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यताकोपस्थितिः इत्यादिघटितैव। अन्यथा अन्यधर्मावच्छिन्नविशेष्यताकयोग्यताज्ञानादिना अन्यधर्मावच्छिन्नविशेष्यकशाब्दबोधापत्तिः। तथा च तदभावान्न 'घटो घट' इत्यादौ घटत्वे तादृशो बोधः।

पूर्वपक्षी - ननु निरुक्ता विषयघटिता सामग्री आत्मनिष्ठप्रत्यासत्त्या कारणीभूता, तस्याः कार्य्यतावच्छेदकः समवाय एव, न तु धर्मितावच्छेकता। तर्हि तेन सम्बन्धेन तस्याः सामग्र्याः कथं द्रव्यत्वे कार्य्योत्पादकत्वम्?

Scanned with CamScanner

सिद्धान्ती – समनियतधर्म्मावच्छिन्ने कार्य्ये जननीये समनियतधर्मावच्छिन्नकार्य्योत्पादकसामग्र्या अपेक्षा। आत्मनिष्ठप्रत्यासत्त्या कारणसमग्र्याः कार्य्यतावच्छेदकम् – घटत्वावच्छिन्नप्रकारतानिरूपित-द्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यताकशाब्दबुद्धित्वम्। तद्घटकत्वञ्च द्रव्यत्ववृत्तिधर्मितावच्छेकतायाः। तथा चात्र धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन द्रव्यत्वे जायमान-अभेदसम्बन्धावच्छिन्नघटत्वा-वच्छिन्नप्रकारताकशाब्दबुद्धित्वं निरुक्तकार्य्यतावच्छेदकसमनियतमिति। एवञ्चात्र द्वयं कार्य्यतावच्छेदकम्। तत्र द्वितीये समनियते या कारणसामग्री सा प्रथमेऽपि अपेक्षिता। अतो धर्म्मितावच्छेदकतायाः कार्य्यतावच्छेदकसम्बन्धताविरहेऽपि समवायसम्बन्धेन जायमाने शाब्दबोधे योग्यताज्ञानादिघटितसामग्री द्रव्यत्वे धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन शाब्दबोधं प्रत्यपि अपेक्षिता।

पूर्वपक्षी – नन्वेवं यथा आत्मनि विद्यमाना कारणसामग्री स्वीयकार्य्यतानवच्छेदकेनापि धर्म्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन द्रव्यत्वे शाब्दबोधं जनयति, तथैव घटत्वेऽपि उत्पादयेत्?

सिद्धान्ती – मैवम्। उक्तद्रव्यपदजन्यद्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यकोपस्थित्यादिसामग्री समवायेन स्वीयकार्य्यतावच्छेदकावच्छिन्नस्य द्रव्यत्वावच्छिन्नविशेष्यकघटत्वावच्छिन्नाभेदबुद्धित्वरूपस्य उत्पत्तेरेव व्याप्यतया घटत्वादौ धर्मितावच्छेदकतासम्बन्धेन घटत्वावच्छिन्नाभेदबोधस्य आपादिका भवितुं नार्हति।

पूर्वपक्षी – सर्वत्रैव शाब्दबोधस्थले कार्य्यकारणभावे द्वयी विधा विद्वत्समाजे प्रसिद्धा। आत्मनिष्ठप्रत्यासत्त्या, विषयनिष्ठप्रत्यासत्त्या च। तत्र विषयनिवेशरूपगौरवेण आत्मनिष्ठप्रत्यासत्त्या कार्य्यकारणभावं विहाय लाघवात् धर्म्मितावच्छेदकं द्रव्यत्वादिकमनिवेश्य धर्म्मितावच्छेदकता-सम्बन्धेन शाब्दबुद्धौ तादृशसम्बन्धेन हेतुताकल्पनात् अभेदसम्बन्धावच्छिन्नघटत्वावच्छिन्न-प्रकारताकयोग्यताज्ञानबलादेव 'द्रव्यं घट' इत्यत्रैव 'घटो घट' इत्यत्रापि अभेदसम्बन्धावच्छिन्न-घटत्वावच्छिन्नप्रकारताकशाब्दबोधापत्तिः।

सिद्धान्ती – एवं हि 'घटः प्रमेयः' इत्यादौ घटत्वावच्छिन्नः अभेदसम्बन्धावच्छिन्नप्रकारताक-योग्यताज्ञानबलात् धर्म्मिमतावच्छेदकतासम्बन्धेन अभेदसमम्बन्धावच्छिन्नघटत्वावच्छिन्न-प्रकारताकशाब्दबोधो यथा, तथा द्रव्यपदाद् द्रव्यत्वावच्छिन्नोपस्थित्यभावेऽपि उक्तसम्बन्धेन उक्तयोग्यताज्ञानबलाद् 'घटो द्रव्यम्' इति शाब्दबोधापत्तिः। तस्माद् विषयनिष्ठप्रत्यासत्त्या कार्य्यकारणभावो न वक्तव्यः।

पूर्वपक्षी – अस्तु। प्रकारतासम्बन्धेन शाब्दबोधं प्रति समानप्रकारतासम्बन्धेनोपस्थितिरिति कार्य्यकारणभावोऽङ्गीकरणीयः। अर्थात् यस्मिन् पदार्थे प्रकारतारूपविषयतासम्बन्धेनोपस्थितिः, तस्मिन्नेव धर्म्मितावच्छेदकतारूपप्रकारतासम्बन्धेन शाब्दबोधोत्पत्तिः।

सिद्धान्ती – अभिप्रायो विशद्यताम्।

पूर्वपक्षी – व्याप्यधर्म्मावच्छिन्ने कार्य्ये जननीये व्यापकधर्मावच्छिन्नकार्य्योत्पादकसामग्री अपेक्ष्यते।

Scanned with CamScanner

तथाहि घटत्वावच्छिन्नप्रकारक-अभेदसंसर्गक-शाब्दबोधत्वरूप व्याप्यधर्म्मावच्छिन्ने शाब्दबोधे जननीये शुद्धशाब्दबोधत्वरूपव्यापकधर्मावच्छिन्नशाब्दबोधोत्पादिका या प्रकारतासम्बन्धेनोपस्थितिः, तस्या अवश्यम् अपेक्षा। एवञ्च प्रकारतासम्बन्धेन द्रव्यत्वे द्रव्यपदजन्योपस्थित्यसत्त्वे, द्रव्यत्वे धर्म्मितावच्छेकतासम्बन्धेनापि शाब्दबोधोत्पत्तिर्न सम्भवति।

सिद्धान्ती - प्रकारतासम्बन्धेनोपस्थितेः कारणत्वे - यत्र प्रमेयपदेन प्रमेयत्वावच्छिन्नोपस्थितिः, तत्रैव चक्षुः संनिकर्षाद् यदि द्रव्यत्वावच्छिन्नस्य भानम्, तर्हि तत्र द्रव्यविषयकशाब्दापत्तिवारणाय तद्धर्म्मावच्छिन्नविषयकशाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तद्धर्मावच्छिन्नविशेष्यकवृत्तिज्ञानजन्य तद्धर्म्मप्रकारकोपस्थितिः कारणमिति स्वीकर्त्तव्ये प्रकारविशेषनिवेशस्य आवश्यकत्वे विषयनिष्ठप्रत्यासत्त्या हेतुताकल्पने गौरवप्रसङ्गः।

पूर्वपक्षी - नायं दोषः। स्वजनकज्ञानीयवृत्तिनिष्ठप्रकारतानिरूपितविशेष्यतावच्छेदकता विशिष्ट प्रकारतासम्बन्धेनोपस्थितिः अभिप्रेता। तथा हि - सामानाधिकरण्येन प्रमेयत्ववैशिष्ट्यं प्रमेयत्वनिष्ठोपस्थितीयप्रकारतायाम्, न तद्बोधकान्तराद् भासमानद्रव्यत्वनिष्ठायामिति, द्रव्यत्वादौ प्रमेयपदजन्योपस्थितिनिरूपितप्रकारतासत्त्वेऽपि उक्तविशेष्यतावच्छेदकतावैशिष्ट्याभावात् न तदानीं द्रव्यत्वे शाब्दबोधः।

सिद्धान्ती - पुनरपि दोषः। प्रकारतासम्बन्धेनोपस्थितेः कारणत्वमशक्यम्, कारणाभावे कार्य्याभावरूपव्यतिरेकव्याप्तिव्यभिचारात्। तथाहि - 'द्रव्यं घट' इत्यादौ घटपदजन्यघटोपस्थितौ घटे विशेष्यता न तु प्रकारता। एवं प्रकारतासम्बन्धेन घटपदार्थोपस्थितेरभावेऽपि प्रकारतासम्बन्धेन घटे विशेषणे अपि शाब्दबोधोत्पत्तिः।

पूर्वपक्षी - मैवम्, परामर्शकारणताविचारदर्शितदिशा व्यभिचारस्य वारणात्। यथा 'पर्वतो वह्निमान्' इत्यनुमितिं प्रति 'वह्निव्याप्यधूमवान् पर्वतः', 'आलोकव्याप्यधूमवान् पर्वतः' इत्युभयोऽपि परामर्शः कारणम्। तत्रैकेन अनुमितौ अपरस्य अभावात् व्यभिचारात् न तयोः कारणत्वं स्यात्। अतो व्यभिचारवारणाय कार्य्यतावच्छेदककुक्षौ कारणाव्यवहितोत्तरत्वनिवेशः क्रियते। तथैव प्रकृतेऽपि स्वजनकज्ञानीयेत्यादिसम्बन्धेन शाब्दबोधं प्रत्येव स्वजनकज्ञानीयेत्यादिसम्बन्धन्धेनोपस्थितेः कारणत्वस्वीकारे 'द्रव्यं घट' इत्यादौ प्रकारे घटे या शाब्दबोधीया प्रकारता, तत्र स्वजनकेत्यादि-प्रकारतान्तकारणतावच्छेदकसम्बन्धवैशिष्ट्यविरहेण न व्यभिचारः। तथा च विषयनिष्ठप्रत्यासत्त्या कार्य्यकारणभावे दोषाभावात् 'द्रव्यं घट' इत्यत्र यद् घटत्वावच्छिन्नप्रकारकाभेदसंसर्गयोग्यताज्ञानम्, तस्य 'घटो घटः' इत्यत्रापि सत्त्वात् अभेदान्वयापत्तिः जायत एव।

सिद्धान्ती - आस्तान्तावत्। तद्धर्मावच्छिन्न अभेदसंसर्गावच्छिन्नप्रकारतानिरूपितविशेष्य-तावच्छेदकतासम्बन्धेन शाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति उपस्थित्यादिवत् तद्धर्मभेदस्यापि हेतुता। अर्थात् प्रकारतावच्छेदकभेदो विशेष्यतावच्छेदके अभेदान्वये अपेक्ष्यते। एवञ्च 'घटो घट' इत्यत्र घटत्वे

घटत्वभेदाभावान्न शाब्दबोधापत्तिः।

पूर्वपक्षी – एवं तर्हि 'स घटः' इत्यत्र जातित्वावच्छिन्नजातिमान् तत् पदार्थः। तत्र जातिः घटत्वम् विशेष्यतावच्छेदकम्, अपि च अवच्छेदकता जातित्वावच्छिन्ना इति 'घटो घट' इत्यतो विशेषः। 'घटः सः' इत्यत्रापि जातित्वावच्छिन्नजातिमान् तत्पदार्थः। तत्र जातिः घटत्वं प्रकारतावच्छेदकम्, अपि च प्रकारतावच्छेदकता जातित्वावच्छिन्नेति विशेषो घटशब्दात्। उभयत्रैव शाब्दबोध इष्यते, किन्तु स इदानीं न स्यात् प्रकारतावच्छेदकविशेष्यतावच्छेदकयोरैक्यात्।

सिद्धान्ती – दोषोऽयं निराकर्त्तुं शक्यः। विशेष्यत्वप्रकारत्वयोरवच्छेदकत्वे निरवच्छिन्नत्वेन विशेषणीये। तथाहि – तद्धर्म्मनिष्ठनिरवच्छिन्नावच्छेदकताकप्रकारतानिरूपितनिरवच्छिन्न-विशेष्यतावच्छेकतासम्बन्धेन शाब्दबोधं प्रति एव तद्धर्मभेदस्य हेतुत्वं ग्राह्यम्। एवञ्च यत्र प्रकारतावच्छेदकनिष्ठा अवच्छेदकता, तथा विशेष्यतावच्छेकनिष्ठावच्छेकता च निरवच्छिन्ना, तत्रैव प्रकारतावच्छेदकधर्म्मभेदः कारणम्, यथा 'द्रव्यं घट' इत्यत्र। प्रकृते च एकैव अवच्छेदकता निरवच्छिन्ना, अपरा च जातित्वेन अवच्छिन्ना। अतः अवच्छेदकयोरभेदेऽपि शाब्दबोधः।

पूर्वपक्षी – पुनर्दोषः। नवीनमते 'घटो नीलघट' इत्यत्र नीलघटत्वावच्छिन्न-अभेदसम्बन्धावच्छिन्नप्रकारतानिरूपितविशेष्यतावच्छेदकतासम्बन्धेन घटत्वे शाब्दबोधः। तत्र च घटत्वभेदाभावाद् व्यभिचारः।

सिद्धान्ती – अयमपि निराकर्त्तुं शक्यः। व्यभिचारवारणाय पर्य्याप्तिनिवेशशरूपा दिक् आश्रेया। तथा च तद्धर्म्मपर्य्याप्तावच्छेदकताक-अभेदसम्बन्धावच्छिन्नप्रकारतानिरूपितेत्यादिरूपः कार्य्यतावच्छेकसम्बन्धः। प्रकृते च नीलघटत्वोभयपर्य्याप्ता अवच्छेदकता न घटत्वपर्य्याप्तेति घटत्वभेदाभावेऽपि न दोषः।

पूर्वपक्षी – पुनर्दोषः। एवमपि 'सः सः' इत्यत्राभेदान्वयापत्तिः। अत्र प्रकारतावच्छेदकनिष्ठा, विशेष्यतावच्छेदकनिष्ठा चावच्छेदकता सावच्छिन्ना, अतो न तद्धर्म्मभेदस्य = प्रकारतावच्छेदकधर्म्मभेदस्य हेतुता आवश्यकी।

सिद्धान्ती – अयमपि निराकर्त्तुं शक्यः। यत्रावच्छेदकता सावच्छिन्ना तत्र प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकभेदः कारणम्। एवं हि तद्धर्मावच्छिन्नावच्छेदकताप्रकारतानिरूपित-धर्म्मितावच्छेदकतावच्छेदकत्वप्रत्यासत्त्या शाब्दबोधं प्रति तद्धर्मभेदस्य पृथक्कारणत्वं कल्पनीयम्। प्रकृते तत्पदार्थ-जातित्वावच्छिन्नजातिमान् इत्यत्र प्रकारः विशेष्यश्च जातिमान्, तदवच्छेदिका जातिः, तदवच्छेदकं जातित्वम्। एवं प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकं, विशेष्यतावच्छेदकतावच्छेदकञ्च जातित्वम्। तथा चात्रोक्तसम्बन्धेन सम्भाव्यमानोऽभेदान्वयः जातित्वे उत्पत्स्यते, तत्र प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकधर्म्मस्य जातित्वस्य भेदाभावात् नाभेदान्वयबोधः।

पूर्वपक्षी – पुनर्दोषः। 'दण्डवान् दण्डवान्' इत्यत्राभेदान्वयापत्तिः। दण्डवान् अर्थात् दण्डसंयोगवान्।

Scanned with CamScanner

अत्र प्रकारो दण्डसंयोगवान्, प्रकारतावच्छेदको दण्डसंयोग:, प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकं दण्डसंयोगत्वम्। अत्र 'स: स:' इत्यपेक्षया एकावच्छेदकताया: अधिकाया: प्रवेश:। अतो दोष आपद्यते।

सिद्धान्ती – अयमपि निराकर्त्तुं शक्य:। तद्यथा दण्डसंयोगत्वाद्यवच्छिन्नावच्छेदकताक-प्रकारतानिरूपितविशेष्यतानिरूपित-संयोगत्वावच्छिन्नावच्छेदकतानिरूपितावच्छेदक-तावच्छेदकत्वसम्बन्धेन शाब्दबोधे दण्डत्वादिभेदस्यापि अर्थात् प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदक-तावच्छेदकभेदस्यापि कारणत्वं कल्पनीयम्।

पूर्वपक्षी – पुनर्दोष:।'जातिमद्वान् दण्डवान्' इत्यत्र विशेष्यतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकजातौ प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकदण्डत्वे च भेदो नास्ति, 'दण्डत्वं न जाति:' इति प्रतीत्यभावात्। अतोऽत्र इष्टोऽपि अभेदान्व्यबोधो न स्यात्।

सिद्धान्ती – अयमपि निराकर्त्तुं शक्य:। यत्र धर्मितावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकता अथवा प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकता निरवच्छिन्ना, तत्रैव तद्धर्मभेद: अर्थात् प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकधर्मभेद: कारणम्। 'जातिमद्वान् दण्डवानि'त्यत्र विशेष्यतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदिका जाति: जातित्वावच्छिन्नैव, न निरवच्छिन्ना, अतो नात्र तद्धर्मभेद: कारणम्।

पूर्वपक्षी – इदानीं यावत् नानाकार्य्यतावच्छेदकसम्बन्धं मत्वा तद्धर्म्मभेदस्य कारणत्वमुक्तम्, तेन अनेककार्य्यकारणभावकल्पनायां गौरवम्। अतस्तादृश: कश्चन कार्य्यकारणभाव: प्रदर्शनीय: यत: सर्वासां शाब्दबोधापत्तीनां वारणं शक्यम्।

सिद्धान्ती – आम्, आम्! व्याप्यधर्मावच्छिन्नकार्य्योत्पत्तौ व्यापकधर्मावच्छिन्नकार्य्योत्पादकसामग्री अपेक्षिता। अत: शाब्दबोधम्प्रति ज्ञानस्य व्यापकत्वात् ज्ञानं प्रत्येव सम्प्रति कार्य्यकारणभाव: प्रदर्श्यते तथा च, तद्धर्मान्यवृत्तिविषयतासम्बन्धेन ज्ञानं प्रति तद्धर्मभेदो हेतुरिति आस्थेय:। अत्र तद्धर्मपदेन विशेषणकोटिप्रविष्टपदार्थगतधर्म्म: प्रकारतावच्छेदक-प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदक-प्रकारतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदकरूपो धर्म्मो ग्राह्य:। तद्धर्मान्यश्च विशेष्यतावच्छेदक-विशेष्यतावच्छेदकतावच्छेदक-विशेष्यतावच्छेदकतावच्छेदकतावच्छेदको धर्म्मो ग्राह्य:। यदि तद्धर्म्मेण प्रकारतावच्छेदको गृह्यते तर्हि तद्धर्म्मान्यपदेन विशेष्यतावच्छेदक एव ग्राह्य:। एवञ्च विषयतारूपसम्बन्धस्य तद्धर्म्मान्यवृत्तित्वम्, तद्धर्म्मान्यवृत्तिविषयतासम्बन्धेन च ज्ञानं प्रति तद्धर्मभेदत्वमपेक्षितम्।

तथाहि – 'नीलो घट:' इत्यत्र प्रकारो नीलो, विशष्यो घटश्च। तद्धर्म्म: प्रकारतावच्छेदकं नीलत्वम्, तद्धर्म्मान्यद् घटत्वम्, तद्वृत्तिविषयतासम्बन्धेन = विशेष्यतावच्छेदकतारूप-विषयतासम्बन्धेन शाब्दबोधात्मकज्ञानं प्रति तद्धर्म्मभेद: अर्थात् नीलत्वभेद: कारणम्। अयं

Scanned with CamScanner

तद्धर्म्मभेदो घटत्वेऽस्ति अतः शाब्दबोधे अनापत्तिः। 'घटो घटः' इत्यादिस्थले घटत्वादौ तादृशविषयतासम्बन्धेन ज्ञानत्वावच्छिन्नोत्पादकसामग्रीविरहेण अर्थात् तद्धर्म्मान्यवृत्तिविषयतासम्बन्धविरहेण, अपि च तद्धर्म्मभेदविरहेण न तत्र तादृशविशेष्यतावच्छेदकतासम्बन्धेन शाब्दबोधापत्तिः।

पूर्वपक्षी - साधु! साधु!

सिद्धान्ती - **'यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोसि ददासि यत्।**

यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।। इति वासुदेवोक्तरीत्या कृतमिमं शास्त्रार्थं 'केशवाय' समर्प्य,

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।

तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम्।। इति रीत्या च शास्त्रार्थरसिकेभ्यो विद्वद्भ्योऽपि समर्पणपुरस्सरं नमोवाकं प्रशास्मि।

पूर्वपक्षी - अहमपि तथा।

Scanned with CamScanner

Rg. No. : R.N. 26065/72

ISSN - 2249 - 9296

सितम्बर २०१७ तमे जोधपुरनगरे जयपुरस्थ-राजस्थानसंस्कृत-अकादमीद्वारा समायोजित-पं.श्रीरामदवेस्मृतिव्याख्यानमालांया 'साधना से सिद्धि' इत्यस्मिन् कार्यक्रमे डॉ. जयादवेमहोदया, कुलपति-प्रो. विनोदशास्त्री, विद्वांसश्च।

१५ अगस्त, २०१७ दिनाङ्के जयपुरस्थ-राजस्थानसंस्कृत-अकादम्या समायोजिते जन्माष्टमीमहोत्सवे डॉ.जयादवेमहोदया, डॉ.जे.एन.विजयमहोदयः, कर्मचारिणः, अतिथयः, श्रीकृष्णभूमिकायां बालाश्च।

न्धकारे राजतेऽन्धकारस्तु तन्न जग्राह।

अथेश्वरसकाशात् प्रहितो नर एकः समुद्बभूव, तस्य नाम योहन इति। स साक्ष्यार्थमाजगाम, ज्योतिरधि तेन तथा साक्ष्यं दातव्यमासीत्, तथा सर्व्वे तेन विश्वासिनो भवेयुः। स ज्योति र्नासीत्, अपि तु ज्योतिषि साक्ष्यदाने नियुक्तः।

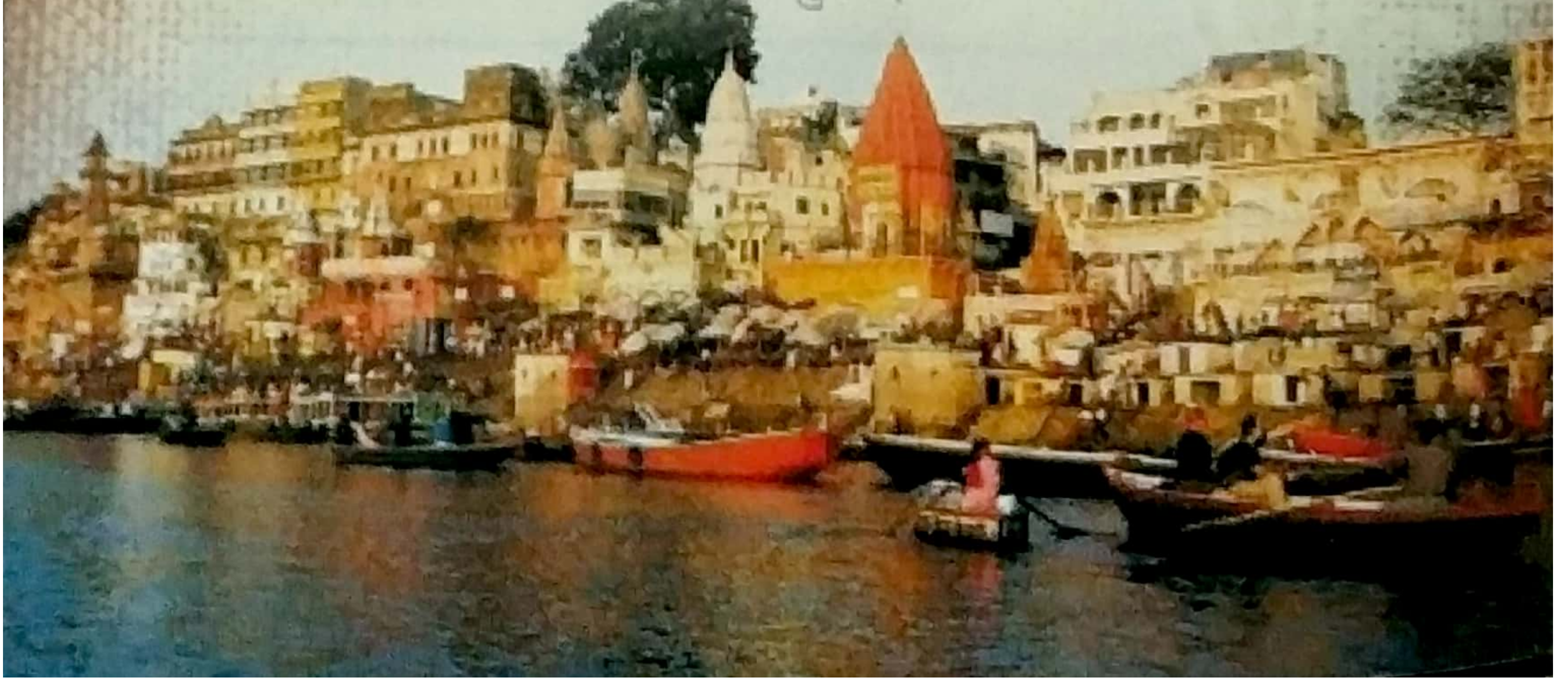

ISSN-2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका

2018

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, विद्याविहारः, मुम्बई-७७

Scanned with OKEN Scanner

Peer Reviewed Refereed Journal ISSN : 2395-7921

शिक्षारश्मिः

शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्त्रिका

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च शोधपत्त्रिका)

Annual Research Journal of Department of Education

2017 - 18

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमय्याभुवि भासते परिसरो विद्याविहारे स्थितः।।

संरक्षकः

आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री,
कुलपतिः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मा. वि.) नवदेहली

प्रधानसम्पादकः

आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा
प्राचार्यः, क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्, मुम्बई

सम्पादकाः

आचार्यः मदनमोहनझाः डॉ. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि डॉ. देवदत्तसरोदे

सह-सम्पादकाः

डॉ. कुमारः डॉ. विनोदकुमारशर्मा
डॉ. सुनीलकुमारशर्मा डॉ. सचिनकुमारः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

(मानितविश्वविद्यालयः)

भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः (पूर्वम्) मुम्बई - 400077

Scanned with OKEN Scanner

पत्रिकानाम	:	शिक्षारश्मिः (शिक्षाशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका)
प्रकाशकः	:	शिक्षाशास्त्रविभागः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मा. वि.), मुम्बई -77
© प्रतिलिप्यधिकारः	:	प्रकाशकाधीनः
ISSN	:	**2395-7921**
संरक्षकः	:	आचार्यः परमेश्वरनारायणशास्त्री, कुलपतिः
प्रधानसम्पादकः	:	आचार्यः सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः
सम्पादकाः	:	प्रो. मदनमोहनझाः डॉ. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि डॉ. देवदत्तसरोदे
सह-सम्पादकाः	:	डॉ. कुमारः डॉ. विनोदकुमारशर्मा डॉ. सुनीलकुमारशर्मा डॉ. सचिनकुमारः
सम्पादकमण्डलसदस्याः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः डॉ. देवदत्तसरोदे डॉ. वि. यस्. वि. भास्कररेड्डि डॉ. कुमारः डॉ. विनोदकुमारशर्मा डॉ. सुनीलकुमारशर्मा डॉ सचिनकुमारः सुश्री वैशाली निवडुंगे शुभलक्ष्मी सामल बिनायक बारिकश्च (छात्रसदस्यौ, द्वितीयवर्षम्) प्रियदर्शिनी होता फिरोज साहु (छात्रसदस्यौ, प्रथमवर्षम्)
मूल्याङ्कनमण्डलम्	:	प्रो. ए. पी. सच्चिदानन्दः प्रो. प्रकाशचन्द्रः प्रो. लोकमान्यमिश्रः प्रो. गोपीनाथशर्मा प्रो. प्रह्लादजोशी प्रो. वै. एस्. रमेशः प्रो. रजनी रञ्जन प्रो. के. भारतभूषणः
प्रकाशनवर्षम्	:	2018
अनुकृतयः	:	200
मुखचित्रविन्यासः	:	आचार्यः मदनमोहनझाः
अक्षरसंयोजनम्	:	डॉ. वि. एस्. वि. भास्कररेड्डि
अवधातव्यम्	:	शोधपत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितशोधपत्राणां मौलिकत्वस्य तत्र प्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं शोधपत्रलेखकानामेव भविष्यति, न वा सम्पादकस्य न च प्रकाशकस्य भविष्यतीति विज्ञप्यते।
मुद्रणम्	:	Rank Printers, Mulund (W), Mumbai.

विषयानुक्रमणिका

क्रं.सं	शोधपत्रस्य शीर्षकम्	लेखकः	पृष्टसंख्या
1.	उत्तरम्	प्रो. मदनमोहनझाः	01
2.	सङ्गणकसहकृतभाषाशिक्षणम्	डॉ. देवदत्तसरोदे	08
3.	सूचनाधिकारस्य जागरणे शिक्षायाः भूमिका	डॉ. वि. एस्. वि. भास्कररेड्डि	18
4.	भाषाशिक्षणे मूल्याङ्कनस्य नूतनविधयः	डॉ. विनोदकुमारशर्मा	25
5.	संस्कृतभाषाधिगमे भाषाप्रयोगशालायाः भूमिका	डॉ. सचिनकुमारः	31
6.	समासानामधिगमे रेखीयाभिक्रमस्योपयोगिता	डॉ. कुमारः	37
7.	भाषाशिक्षण में सूक्ष्मशिक्षण की उपयोगिता	डॉ. सुनीलकुमारशर्मा	43
8.	Language laboratory: An Innovative technique	Dr. Shweta Sood	51
9.	Significance of Evaluation and Assessment in Language proficiency	Dr. Leena	57
10.	Using Computers in Language Teaching	Dr. SubhashChander Meena	62
11.	How to enhance Sanskrit E-Learning by using Blog	Dr. Arti Sharma	65
12.	Creating Sanskrit Web pages by using Hypertext Markup Language	Ms. Vaishali Nivadunge	70
13.	संस्कृतशिक्षण में नवाचार : ई- अधिगम की भूमिका	डॉ. प्रेमसिंह सिकरवारः	75
14.	भाषाशिक्षणशास्त्रशिक्षणयोः नवाचाराः	डॉ. गणपति वि. हेगडे	82
15.	भाषाशिक्षणे मूल्याङ्कनस्य नूतनविधयः	डॉ. मनमोहनतिवारी	86
16.	भाषाशिक्षणे सूक्ष्मशिक्षणम्	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	90
17.	भाषाशिक्षणे सङ्गणकयन्त्रम्	अलोकमण्डलः	94
18.	भाषाशिक्षणे मूल्याङ्कनस्य नूतनविधीनाम् आलोचनात्मकमध्ययनम्	पलाशमण्डलः	103
19.	भाषाशिक्षणे संङ्गणकस्य अनुप्रयोगः	जीतेन्द्रकुमारगुप्तः	108
20.	भाषाशिक्षणे मनोवैज्ञानिकसम्प्रत्ययानाम् अनुप्रयोगः	रामजियावनप्रजापतिः	111
21.	साकल्यशिक्षा साकल्यविद्यालयस्य च सम्प्रत्ययः संसाधनानि उपलब्धता च	मम्मटवर्गः	115

Scanned with OKEN Scanner

22. मानवाधिकाराणां संरक्षणे राष्ट्रियमानवाधिकारायोगस्य भूमिका	आनन्दवर्धनवर्गः	121
23. सक्रियपाठ्यचर्यानुभवोत्पादने शिक्षकस्य भूमिका	वामनवर्गः	129
24. अधिगममूल्याङ्कने केन्द्रीयप्रवृत्तिमापनानाम् अनुप्रयोगः	कुन्तकवर्गः	134
25. अष्टादशशास्त्राणां परिचयः	दण्डिवर्गः	143
26. व्यक्तित्वस्य सिद्धान्ताः	पाणिनिवर्गः	158
27. पर्यावरणपरिरक्षणे विविधाभिकरणानां भूमिका	भर्तृहरिवर्गः	166
28. संस्कृतभाषाशिक्षणकौशलानि तत्संवर्धनोपायाश्च	कात्यायनवर्गः	170
29. भाषाशिक्षणे अन्तर्जालस्य प्रयोगः शैक्षिकोपग्रहश्च	पतञ्जलिवर्गः	177
30. भारतीयसंविधाने निहितानां शिक्षासम्बद्धानाम् अनुसूचीनाम् अधिनियमानाञ्च संग्रहणम्	जयादित्यवर्गः	183

*****

Scanned with OKEN Scanner

शिक्षारश्मि: 2018, ISSN : 2395 - 7921

Using Computers in Language Teaching

Dr. Subhash Chander Meena *

Computers have made a triumphal entry into education in the past decade, and only a dyed-in- the wool Luddite would deny that they have brought significant benefits to teachers and students alike. However, an uncritical use of computers can be just as disadvantageous to students as a refusal to have anything to do with them. In this article I discuss some of the ways that computers can be used in English language teaching, with a view to helping colleagues make the most of the opportunities they offer to ESL students. It is helpful to think of the computer as having the following main roles in the language classroom:

- **Teacher** : - the computer teaches students new language
- **Tester**: - the computer tests students on language already learned
- **Tool**: - the computer assists students to do certain tasks
- **Data source:** - the computer provides students with the information they need to perform a particular task
- **Communication facilitator**: - the computer allows students to communicate with others in different locations

Computer as teacher :

In the early days of computers and programmed learning, some students sat at a terminal for extended periods following an individualized learning program. Although we have come a long way from the rather naïve thought, held by some at that time, that the computer could eventually come to replace the teacher, there has been a return to a much more sophisticated kind of computerized teaching using multimedia CD ROMS. In such programs, students can listen to dialogues or watch video clips. They can click on pictures to call up the names of the objects they see. They can speak into the microphone and immediately hear a recording of what they have said. The program can keep a record of their progress, e.g. the vocabulary learned, and offer remedial help if necessary. Many of these CD ROM programs are offered as complete language courses. They require students to spend hours on their own in front of the computer screen, usually attached to a microphone headset. For this reason alone I prefer not to use them in my language teaching. Another of their serious drawbacks, in my view, is the fact that in many cases the course content and sequence is fixed. The teacher has no chance to include materials that are of interest and importance to the particular students in his or her class . As an alternative to large CD ROM packages, there is an increasing number of useful sites on the World Wide Web, where students

* *Asst Professor in Vyakarana, Rashtriya Sanskrit Sansthan (DU), K J Somaiya Campus, Mumbai.*

Scanned with OKEN Scanner

can get instruction and practice in language skills such as reading, listening and writing.

Computer as a tester :

The computer is very good at what is known as drill and practice; it will tirelessly present the learner with questions and announce if the answer is right or wrong. In its primitive manifestations in this particular role in language teaching, it has been rightly criticised. The main reason for the criticism is simple: many early drill and practice programs were very unsophisticated; either multiple-choice or demanding a single word answer. They were not programmed to accept varying input and the only feedback they gave was Right or Wrong. So for example, if the computer expected the answer "does not" and the student typed "doesn't" or " doesnot" or " does not ", she would have been told she was wrong without any further comment. It is not surprising that such programs gave computers a bad name with many language teachers. Unfortunately, there are now very many of these primitive drill and kill programs flooding the Internet.

Despite their obvious disadvantages, such programs are nevertheless popular with many students. This is probably because the student is in full control, the computer is extremely patient and gives private, unthreatening feedback. Most programs also keep the score and have cute animations and sounds, which many students like. There are some programs which do offer more useful feedback than right or wrong, or that can accept varying input. Such programs blur the role of the computer as teacher or tester and can be recommended to students who enjoy learning grammar or vocabulary in this way. If two or more students sit at the same computer, then they can generate a fair amount of authentic communication while discussing the answers together.

Computer as a tool :

It is in this area that I think the computer has been an unequivocal success in language teaching. Spreadsheets, databases, presentation slide generators, concordancers and web page producers all have their place in the language classroom, particularly in one where the main curricular focus is task-based or project-work. But in my opinion, by far the most important role of the computer in the language classroom is its use as a writing tool. It has played a significant part in the introduction of the writing process, by allowing students easily to produce multiple drafts of the same piece of work.. Students with messy handwriting can now do a piece of work to be proud of, and those with poor spelling skills can, after sufficient training in using the spell check, produce a piece of writing largely free of spelling mistakes.

Computer as a data source :

I'm sure I don't need to say much about the Internet as a provider of information. Anyone who has done a search on the World Wide Web will know that there is al-

Scanned with OKEN Scanner

ready more information out there than an individual could process in hundred life-times, and the amount is growing by the second. This huge source of information is an indispensable resource for much project work, but there are serious negative im-plications. I shudder to think of how much time has been wasted and will continue to be wasted by students who aimlessly wander the Web with no particular aim in mind and with little or no guidance. I generally do not turn my students free to search the web for information. Instead, I find a few useful sites beforehand and tell the students to start there; anyone who finishes the task in hand can then be let loose! As an alter-native to the Web, there are very many CD ROMs, e.g. encyclopaedias, that present information in a more compact, reliable and easily accessible form.

Computer as communication facilitator :

The Internet is the principal medium by which students can communicate with others at a distance, (e.g. by e-mail or by participating in discussion forums). In fact at Frankfurt International School the single most popular use of computers by students in their free time is to write e-mails to their friends. Some teachers have set up joint pro-jects with a school in another location and others encourage students to take part in discussion groups. There is no doubt that such activities are motivating for students and allow them to participate in many authentic language tasks. However, cautious teachers may wish to closely supervise their students' messages. Recent research has shown up the extremely primitive quality of much of the language used in electronic exchanges!

Computers in education have been disparaged as: Answers in search of a problem. And certainly many computer activities of dubious pedagogical value have been de-vised in the past simply to justify the existence of an expensive computer in the class-room. Nowadays, however, I think it is much more clearly understood that the comput-er can play a useful part in the language class only if the teacher first asks: What is it that I want my students to learn today, and what is the best way for them to learn it? In most cases, the answer will probably not involve the computer, but there will be occa-sions when the computer is the most suitable and, for the students, most enjoyable way to get the job done.

References

1. The Internet and ELT Eastment, D. 1999 The British Council

2 . CALL Environments Egbert, J & Hanson- Smith, E (eds.) 1999. TESOL, Frank-furt International School:

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः

ISSN-22776445

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

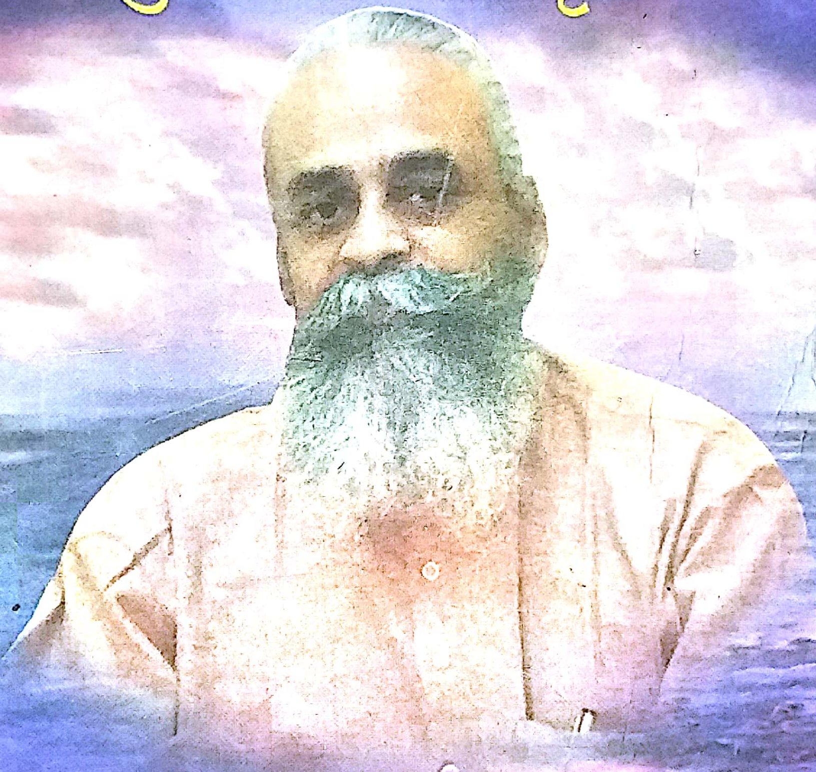

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः॥

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः प्रो. ई. एम्. राजन् प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः	ISSN-22776445
	UGC Reg. No. 40920
© प्रकाशकाधीनम्	
प्रकाशकम्	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्
प्राकाशनवर्षम्	2017-18
अङ्कः	षष्ठः
प्रधानसम्पादकः	प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः
सम्पादकमण्डलम्	प्रो. प्रकाशचन्द्रः
	प्रो. ई. एम्. राजन्
	प्रो. मदनमोहनझाः
	प्रो. बोधकुमारझाः
	डा. नारायणन् ई. आर्.
	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी
	डा. (श्रीमती) गीतादुबे
पत्रिकाप्रतिरूपाणि	300
मुद्रकः	BG&K Associates, Lower Parel, Mumbai-13

अवधातव्यम् पत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितलेखानां मौलिकत्वस्य तत्रत्यप्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं पत्रलेखककानामेव, न तु प्रकाशकस्य, सम्पादकस्य वेति स्पष्टं विज्ञप्यते।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

रचनानुक्रमणिका

स्मरणिकाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	ॐ श्रीमते रामानुजदेवनाथाय नमः	डा. को. वे. सोमयाजुलुः आचार्यः	**1**
2	पुण्यस्मरणम्	आचार्यः का. ई. देवनाथन्	**4**
3	स्मृत्युज्जीविका	प्रो. पि. सि. मुरलीमाधवन्	6
4	वियोगिनीकल्लोलिनी	आचार्यः जि.यस्.आर्. कृष्णमूर्तिः	**7**
5	सखा गुरुश्च मे	आचार्यः राजन्. ई. एम्.	**9**
6	पुण्य-स्मरण	प्रो. सुदेश कुमार शर्मा	**11**
7	प्राज्ञपुरुषोत्तमः रामानुजः	आचार्यः अतुलकुमारनन्दः	**14**
8	चिरं स्मराम्याचार्यरामानुजदेव...	प्रो. सुकान्तकुमारसेनापतिः	**20**
9	सदाचारिणे आचार्यरामानुजदेवनाथाय	आचार्यललितकुमारसाहुः	**22**
10	आचार्यदेवनाथस्मरणम्	डा. हरिओम्शास्त्री	**25**
11	आचार्यदेवो भव	डा. शिवरामभट्टः	**26**
12	Devanathan – My Best Friend	Dr. S V R Murthy	**31**
13	Dear Departed	Dr. Sharat C. Sharma	**33**
14	देशिकप्रणामः	डा. एम्-जयकृष्णन्	**41**
15	आचार्यो देवनाथः	डॉ. दे. दयानाथः	**42**
16	लीनोऽसि कुत्र प्रभो ....!	डा. प्रियव्रतमिश्रः	**47**
17	भजेऽहं भजेऽहं सदा तेऽङ्घ्रिपद्मम्	डा. विनायकरजतः	**51**
18	ज्ञानमहिममण्डिताः शिक्षाशास्त्रिणः	डा. परमेशकुमारशर्मा	**60**
19	आचार्यः सः नो महान्	डा. नितिनकुमारजैनः	65
20	आचार्य रामानुज देवनाथन:	डा. शिवदत्त आर्य	68
21	व्यक्तित्व के गुणों के धनी	डा. प्रेमसिंहसिकरवार	69
22	पुण्यश्लोक: आचार्य: रामानुजदेवनाथ:	डा. देवदत्तसरोदे	76
23	आदर्श अध्यापक के गुणों से परिपूर्ण	डॉ. श्रीगोविन्द पाण्डेय	80
24	चिरस्स्मरणीयाः वन्दनीयाश्च गुरवः	डा. राधागोविन्दत्रिपाठी	83

Scanned with OKEN Scanner

व्याकरणविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	वैयाकरणमतानुसारं पदशास्त्रीय..	डा. सोमयाजुलुः आचार्यः	88
2	काल एव हि विश्वात्मा	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	104
3	पाणिनीयपद्धत्या ए बी सी डी –	प्रो. बोधकुमारझाः	117
4	समासस्य तत्त्वबोधिनीलघुशब्देन्दु-	डा. सुभाष मीणा	121
5	व्याकरणनये सम्बन्धनिरूपणम्	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	125
6	कर्त्तृकर्मणोः कृति	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	135
7	भाषाविज्ञानदृष्ट्याशब्दार्थसम्बन्धविमर्शः	चेमटे सुरेशः	144
8	सिद्धान्तकौमुदीवैदिकप्रकरणस्थ-	ऋतम्भरापाण्डेयः	154

न्यायविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	विलक्षणं सिद्धान्तलक्षणम्	डा. ना .रा. श्रीधरन्	166

साहित्यविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राजकुमारमिश्रप्रणीतभारतभूषणकाव्यस्य	डॉ. कृपाशङ्करशर्मा	170
2	ध्वन्यालोकलोचनाभ्यां प्रकाशितं	डा. नारायणन्. ई. आर्.	176
3	आलङ्कारिकाभिमता व्यङ्ग्यबोधिनी	डा. एम्. सुदर्शनचिपळूणकरः	182

ज्योतिषविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राष्ट्र के निर्माण में ज्योतिषशास्त्र	प्रो. भारतभूषण मिश्र	188
2	मिथिला के शाक्त परम्परा में	डा. आशीष कुमार चौधरी	194
3	ज्योतिष-वास्तुशास्त्रयोः दिग्ज्ञान	डा. अनिरुद्ध नारायण शुक्लः	199

Scanned with OKEN Scanner

वेदान्तविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	Vedic Mahavakva	Prof. P. C. Muraleemadhavan	206
2	श्रीसुरेश्वराचार्याणामाभासवादः	डॉ. भगवानसामन्तरायः	212
3	आधुनिककाले भगवद्गीतायाः	डा. ए. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	**216**
4	संस्कृतवाङ्मये भक्तितत्त्वानि	डॉ. विनोद कुमार शर्मा	**221**

शिक्षाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	श्रीमहेन्द्रनाथदत्तानां शैक्षिकं चिन्तनम्	डा. एम्-जयकृष्णन्	227
2	भारोपीयभाषापरिवारः संस्कृतञ्च	डा. आरती शर्मा	232
3	संस्कृतशिक्षणे नवीनता	डॉ. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	238
4	श्रीमद्भागवते विश्वबन्धुत्वपोषकाणि	डा. परमेशकुमारशर्मा	241
5	संस्कृतिसंरक्षणे भाषाप्रयोगशालायाः	डॉ. प्रेमसिंहसिकरवारः	247
6	शिक्षायां मानसिकस्वास्थ्यम्	डा. कौशलेश शर्मा	257
7	उच्च शिक्षा में गुणवत्ताः समस्याएं एवं	डा. शुद्धात्मप्रकाश जैन	261
8	वैदिकशिक्षायाः स्वरूपं तद्वैशिष्ट्यानि	डा. देवदत्त सरोदे	269
9	वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायां	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी	282
10	भारतीयसन्दर्भमनुसृत्य	डा. सुनील कुमार शर्मा	290
11	संस्कृतभाषाधिगमे पठनकौशलम्	सचिनकुमारः	296

आधुनिकविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	मॉरीशस के हिन्दी उपन्यास सम्राटः	डॉ. गीता दूबे	304
2	A Comparative Study of the	Dr. Swargakumar Mishra	310
3	Impact of Globilization on	Dr. Kumar	319
4	Women Education in India	Dr. Pinki Malik	326
5	Culture in Chinua Achebe's	Dr. Shweta Sood	332
6	Gender And Environment	Dr. Suman Singh	338

Scanned with OKEN Scanner

7	शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए	डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव	347
8	साहित्य प्रकारांचे स्वरुप	डॉ. मीनाक्षी बरहाटे	352
9	Java Applets	Ms. Vaishali Nivadunge	355

Scanned with OKEN Scanner

समासस्य तत्त्वबोधिनीलघुशब्देन्दुशेखरयोः तुलनात्मको विमर्शः

डा. सुभाष मीणा
सहायकाचार्यः (व्याकरणविभागः)

विभक्तिर्लुप्यते यत्र तदर्थस्तु प्रतीयते।
पदानां चैकपद्यं च समासः सोऽभिधीयते।।

प्रत्येकं शास्त्रं समासेनोपकृतमित्यत्र नास्ति कश्चन विसंवादः। सम्पूर्वकाद् अस् (असु क्षेपणे) धातोः 'भावे' इत्यनेन घञ् प्रत्यये, अनुबन्धलोपे सम् + अस् + अ इति जाते, ञित्वात्'अत उपधायाः' इति सूत्रेण उपधावृद्धो जातायाम। सम + आस् + अ इति जाते वर्णसम्मेलने, स्वादिकार्ये 'समासः' इति सिद्ध्यति।

समासलक्षणं तद्भेदाश्च –

"समसनं समासः" एकपदीभवनं वा समासः

"अनेकपदानां समाहारः समासः कथ्यते"

यथा – राधायाः पतिः= राधापति

समासभेदाः – पञ्चविधसमासस्य संक्षिप्तविवरणमस्मिन् श्लोके प्राप्यते।

द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गेहे नित्यमव्ययीभावः
तत्पुरुष कर्मधारय्य येनाऽहं स्यां बहुव्रीहिः।
चकारबहुलो द्वन्द्वः स चासौ कर्मधारयः
यस्य येषां बहुव्रीहिः शेषस्तत्पुरुषो मतः।।

केचित्– सुपां सुपा तिङा नाम्ना धातुनाऽथ तिङां तिङा
सुबन्तेनेति विज्ञेयः समासः षड्विधो बुधैः।

समासभेदाः वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदीबालमनोरमा-तत्त्वबोधिनीसहिताद्वितीयभागानुसारेण –

1. अव्ययीभावः समासः, 2. तत्पुरुषसमासः, 3. बहुव्रीहि समासः, 4. द्वन्द्वसमासः, 5. एकशेषसमासः, 6. सर्वसमासशेषसमासः, 7. अलुक्समासः

1. अव्ययीभावसमासलक्षणम्

Scanned with OKEN Scanner

यत्र प्रायेण पूर्वपदस्य अर्थः प्रधानः सः अव्ययीभावः अर्थात् पूर्वपदस्य अर्थप्राधान्ये सति अव्ययीभावः इत्यर्थः। यथा हरि ङि इति अधिहरि।

- द्वयोः टीकयोः साम्यं वैषम्यं च ।
- तत्त्वबोधिनीकारस्तु व्यपेक्षालक्षणविषये –
  तत्र स्वार्थपर्यवसायिनां पदानामाकाङ्क्षादिवशाद्यः परस्परसम्बन्धः सा व्यपेक्षा सैव वाक्ये राज्ञः पुरुष इत्यादौ ।
- लघुशब्देन्दुशेखरकारस्तु –
  तत्र स्वार्थपर्यवसायिनां पदानामाङ्क्षादिवशाद्यः परस्परान्वयः तद् व्यपेक्षाभिधं सामर्थ्यम्, इदं च राज्ञः पुरुष इत्यादिवाक्य एव भवति।

2. तत्पुरुषसमासलक्षणं तद्भेदाश्च।
   प्रायेण उत्तरपदस्यार्थप्रधानः तत्पुरुषसमासः कथ्यते।
   अर्थात् उत्तरपदस्य अर्थः यदि क्रियया अन्वितो भवति तर्हि तत्पुरुषः भवति यथा – राजपुरुषः।

1. सामान्यतत्पुरुषः (कृष्णाश्रितः), 2. नञ् तत्पुरुषः (अब्राह्मणः),
2. कर्मधारयतत्पुरुषः (घनश्यामः), 4. प्रादितत्पुरुषः (प्राचार्यः),
   5. गतिसमासः (अच्छगत्यः), 6. उपपदतत्पुरुषसमासः (कुम्भकारः)

(क). समानाधिकरणः कर्मधारयः तत्पुरुषः

कर्मधारयस्य भेदः द्विगुः – संख्यापूर्वो द्विगुः

यत्रा – त्रिलोकी, त्रिभुवनम् ।

(ख). व्यधिकरणतत्पुरुषविचारः –

द्वितीया-तृतीया-चतुर्थी-पंचमी-षष्ठी-सप्तमीव्यधिकरणतत्पुरुषः अनेकविधः।

उदाहरणार्थम्– कृष्णं श्रितः-

कृष्णश्रितः, हरिणात्रातः – हरित्रातः, यूपाय् दारु – यूपदारु, चोरात् भयम् – चोरभयम् ।

राज्ञः पुरुषः – राजपुरुषः, अक्षेषु शौण्डः– अक्षशौण्ड।

Scanned with OKEN Scanner

(ग). प्रादितत्पुरुषः– यथा प्रगतः आचार्यः प्राचार्यः।

गत्यर्थक (कुगतिप्राद्यः) यथा कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः।

(घ). उपपदतत्पुरुषः – उपपदतिङ्

यथा – कुम्भकारः – कुम्भंकरोति।

- द्वयो टीकयोः साम्यं वैषम्यं च।
- तत्त्वबोधिनीकारस्तु –

  "गमेरिनिः" इत्यौणादिक इनिः स च "भविष्यति गम्यादयः" इति भविष्यत्काले।
- लघुशब्देन्दुशेखरकारस्तु –

  "गाम्यं गमीति""गमेरिनिः इति औणादिक इनि प्रत्ययः,स च भविष्यति गम्यादयः" इति वचनाद् भविष्यतिकाले भवति।

3. बहुव्रीहिलक्षणं तद्भेदाश्च –

अनेकं प्रथमान्तमन्यपदार्थे वर्तमानं वा समस्यते सः बहुव्रीहिः

अर्थात् अन्यपदार्थस्य अर्थः प्रधानः भवति। यथा – लम्बोदरः – लम्बः उदरः यस्य सः।

बहुव्रीहिभेदाः –

क. समानाधिकरणबहुव्रीहिः यथा – निर्गतं भयं यस्मात् – निर्गतभयः (पुरुषः)

ख. व्यधिकरणबहुव्रीहिः यथा – धनुः पाणौ यस्य सः धनुष्पाणि (रामः)

ग. तुल्ययोग बहुव्रीहिः यथा –"चित्रवाससम् आनय"

घ. व्यतिहारबहुव्रीहिः यथा – चित्रगुम् आनय अत्र व्यक्तिविशेषं स्वीकृतवान्।

- द्वयोः टीकयोः साम्यं वैषम्यं च।
- तत्त्वबोधिनीकारस्तु – कण्ठेकाल इत्यादिना बहुव्रीहिस्तु ज्ञापकसाध्य इति भावः।
- लघुशब्देन्दुशेखरकारस्तु – कण्ठेकालः इति सप्तम्यन्तपदघटितसमासगर्भो बहुव्रीहिः।

4. द्वन्द्वसमासलक्षणं तद्भेदाश्च –"चार्थे द्वन्द्वः" अनेकं सुबन्तं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते सः द्वन्द्वः। प्रायेण उभयपदार्थ प्रधानः द्वन्द्वः।

द्वन्द्वसमासभेदाः –

Scanned with OKEN Scanner

क. इतरेतरद्वन्द्वसमासः – परस्परापेक्षितानां समुदितानामेकस्मिन् क्रिया पदेऽन्वयो यत्र। यथा – धवखदिरौ– धवश्च खदिरश्च इति।

ख. समाहारद्वन्द्वसमासः – अथ समाहारं लक्षयति – समूहः समाहर इति परस्परसाहित्यमित्यर्थः। यथा –"संज्ञापरिभाषम्।"

ग. एकशेषविचारः – तदेवं द्वन्द्वे निरूपिते तदपवादमेकशेषप्रकरणमारभते अथैकशेष इति। यथा – समानं रुपम् एषां इति सरूपाः। सरूपाणां शब्दानाम् एकविभक्तौ परतः एकशेषः भवति।

"पितामात्रा" (1-2-70) मात्रा सहोक्तौ पिता वा शिष्यते माता च पिता च पितरौ।

- द्वयोः टीकयोः साम्यं वैषम्यं च।
- तत्त्वबोधिनीकारस्तु – ईश्वरं गुरुं च भजस्वेति – अत्र क्रियायां द्रव्ययोः समुच्चयोऽयम्।
- लघुशब्देन्दुशेखरकारस्तु – ईश्वरं गुरुं च भजस्वेति। अत्र सम्मुच्चयोदाहरणमिदम्।

सन्दर्भग्रन्थसूची

1. बृहच्छब्देन्दुशेखरः – नागेशभट्टः।
2. महाभाष्यप्रदीपोद्योत् – नागेशभट्टः।
3. परमलघुमञ्जूषा – नागेशभट्टः।
4. अष्टाध्यायी – पाणिनि।
5. महाभाष्यम् – पतञ्जलिः।
6. वाक्यपदीयम् – भर्तृहरिः।
7. काशिकाव्याख्या (पदमञ्जरी) – हरदत्तः।
8. सिद्धान्तकौमुदी – भट्टोजिदीक्षितः।
9. शब्दकौस्तुभः -भट्टोजिदीक्षितः।
10. लघुशब्देन्दुशेखर व्याख्या (ज्योत्स्ना) – उदयशंकर पाठकः।
11. तत्त्वबोधिनी – ज्ञानेन्द्रसरस्वती।

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः

ISSN-22776443

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-२०१७-१८

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

ISSN-22776445

विद्यारश्मिः

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका-2017-18

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्कः

वेदर्चामिर्चयन्तस्स्मृतिचयवचनं तत्त्वतश्चर्चयन्तः
शास्त्रान्तःसंस्पृशन्तोऽमृतगतिमतिदं दर्शनं दर्शयन्तः।
साहित्यं स्वादयन्तस्सहृदयवसतौ भासमुद्भासयन्तो
विद्याया रश्मयो ज्ञान् पिपुरतु सुधियां शेमुषीमेषयन्तः॥

प्रधानसम्पादकः

प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम्

प्रो. प्रकाशचन्द्रः प्रो. ई. एम्. राजन् प्रो. मदनमोहनझाः

प्रो. बोधकुमारझाः डा. नारायणन् ई. आर्.

डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी डा. (श्रीमती) गीतादुबे

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

विद्यारश्मिः ISSN-22776445
UGC Reg. No. 40920

© प्रकाशकाधीनम्

प्रकाशकम् राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्

प्राकाशनवर्षम् 2017-18

अङ्कः षष्ठः

प्रधानसम्पादकः प्रो. सुदेशकुमारशर्मा, प्राचार्यः

सम्पादकमण्डलम् प्रो. प्रकाशचन्द्रः
प्रो. ई. एम्. राजन्
प्रो. मदनमोहनझाः
प्रो. बोधकुमारझाः
डा. नारायणन् ई. आर्.
डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी
डा. (श्रीमती) गीतादुबे

पत्रिकाप्रतिरूपाणि 300

मुद्रकः BG&K Associates, Lower Parel, Mumbai-13

अवधातव्यम् पत्रिकायाममुष्यां प्रकाशितलेखानां मौलिकत्वस्य तत्रत्यप्रतिपादितविचारस्य च कृते समग्रमुत्तरदायित्वं पत्रलेखककानामेव, न तु प्रकाशकस्य, सम्पादकस्य वेति स्पष्टं विज्ञप्यते।

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्
(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

आचार्यः ए. पि. सच्चिदानन्दः
प्राचार्यः (प्र)
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
([illegible])
राजीवगान्धीपरिसरः, शृङ्गेरी - 577 139

Prof. A. P. Sachidananda
Principal (I/C)
RASHTRIYA SANSKRIT SANSTHAN
(Deemed University under MHRD Govt. of India)
Rajiv Gandhi Campus, Sringeri - 577 139

सहते किन्नु वियोगमीदृशम्

वन्दे तं प्रियदर्शनं मुहरहं विद्यानिधिं सज्जनम्
श्रीवत्साङ्कगुरोःप्रियं वसुमतेर्नाथं सतां सम्मतम् ।
पाण्डित्येऽप्रतिमं कृतौ पटुतरं शीलेऽनुशील्यं सदा
औदार्ये खलु पाकशासननिभं तं देवनाथं हृदा ॥१॥

शिक्षाशास्त्रविचक्षणं कविवरं व्याख्यानविद्याग्रणीं
कृत्स्नव्याकरणादिशास्त्रनिपुणं विज्ञानविद्योतनं ।
शिष्याणां सुखदं प्रशासनपटुं सद्ग्रन्थलेखोत्सुकम्
स्वल्पे ह्यायुषि साधिताखिलकृतिं संस्तौति लोकश्चिरम् ॥२॥

वाग्देव्याः समुपासनेन निखिलैः सम्मानितः पण्डितः
शिक्षारत्नपुरस्कृतः पुनरयं ब्रह्मर्षिनाम्ना स्तुतः ।
विद्यायान्तु बृहस्पतिः सुमहितः सच्छास्त्रविद्वन्मणिः
भूयोऽसौ बहुमानितो विजयतां, श्रीदेवनाथः सुधीः ॥३॥

गैर्वाणीं परिरक्षितुं परिसरे राजीवगान्ध्याह्वये
छात्रप्राज्ञसमूहमण्डितपदे दैवात्समाप्नोदसौ ।
यस्यैवागमनेन नूनमखिलं वृद्धिं गतं प्रत्यहं
तं प्राज्ञन्त्विह देवनाथविबुधं वन्दामहे सात्विकम् ॥४॥

मुदिता वसुधा समीहितं निजनाथं समवाप्य संस्कृतम् ।
ग्रसितं विधिना निरीक्ष्य सा सहते किन्नु वियोगमीदृशम् ॥५॥

भुवमेत्य समर्च्य वाङ्मयं कृतपुण्यैरवधूतकिल्बिषम्
गतमेनमवेत्य भारती सहते किन्नु वियोगमीदृशम् ॥६॥

ए. पी. सच्चिदानन्दः
ए. पि. सच्चिदानन्दः

Scanned with OKEN Scanner

राष्ट्रहिताय संस्कृतम्
प्रा. श्रीनिवास वरखेडी
कुलगुरुः
Prof. Shrinivasa Varakhedi
Vice-Chancellor

कविकुलगुरू - कालिदास - संस्कृत - विश्वविद्यालयः

रामटेकनगरम् (महाराष्ट्रराज्यम्)

Kavikulaguru Kalidas Sanskrit University

Ramtek (Maharashtra)

Established Government of Maharashtra Accredited by NAAC with"B" Grade

जा. क्र. ककासंवि/व्हीसीओ/2018/49

दिनांक :– 14.02.2018

देवनाथविभूती श्रद्धाञ्जलिः

यद्यद् विभूतिवत् सत्वं श्रीमद् ऊर्जितमेव वा।
तत्तद्देवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम्।।
— भगवद्गीता

कीर्तिकायस्य आचार्यदेवनाथस्य महात्मनः स्मृतिमात्रं चोदयत्यस्मान् स्वकर्मसु। तिरुपतिस्थराष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठे कानिचन वर्षाणि सेवां कृतवतो मे तत्रैव आचार्यदेवनाथमहाविभूतेः सान्निध्यं प्राप्य अष्टादशेभ्योऽपि समेभ्यः अधिकः कालः व्यतीयाय। न केवलं ज्येष्ठप्राध्यापकरूपेण मार्गदर्शकः अपि तु सुहृत्वेन हितबोधकोऽपि स मामुपाकार्षीत्। सदाचारेषु दीक्षितः, कार्येषु दक्षः, शास्त्रेषु विचक्षणः, मन्त्रेषु दीर्घदर्शी, बोधनेषु बृहस्पतिः, छात्रेषु सुहृच्छीलः, वृद्धेषु विनीतः, कर्मसु बद्धश्रद्धः, ग्रन्थेषु कुशलः नान्यः कश्चित् दृष्टः देवनाथाचार्येण तुलामधिरोढुम्।

आचिनोति हि शास्त्रार्थान् स्वान् शिष्यान् ग्राहयत्यपि।
स्वयमाचरते यस्तु तमाचार्यं प्रचक्षते।।

इत्यस्य अभियुक्तवचनस्य अनितरसाधारणं निदर्शनमेकम् आचार्यदेवनाथः आजीवनम् अहर्निशं स्वान्तःसुखाय श्वासोच्छ्वासवत् गीर्वाणवाणीसेवां विधाय स्वजनमानसे स्थिरं विलसन्तमाचार्यम् - देवनाथं स्मरति भूदेवलोकः।

देवनाथसमो नास्ति गैर्वाणजनमण्डले।
पाण्डित्ये च पटुत्वे च शासने कार्यसाधने।।

श्रीवरः
श्रीनिवास वरखेडी
कुलगुरू

Scanned with OKEN Scanner

आचार्यरामानुजदेवनाथः

Scanned with OKEN Scanner

Scanned with OKEN Scanner

राष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठम्. तिरुपतिः
(मानितविश्वविद्यालयः)
खिलभारतशास्त्रार्थप्रशिक्षणवर्गः
संसाधनविकासमन्त्रालयसाहाय्येन समायोजितः)
१२-२००० तः २७-१२-२०००

श्रीरणवीरपरिसरे शास्त्रचर्चायाम् आचार्यसुरेन्द्रशास्त्रिणा (वामवर्तिणा)
आचायर्प्रियतमचन्द्रशास्त्रिणा (दक्षिणवर्तिणा) च साकम्।

Scanned with OKEN Scanner

श्रीरणवीरपरिसरे आचार्येण परमेश्वरनारायणशास्त्रिणा सार्धम्।

श्रीरणवीरपरिसरे सुन्दरवनीस्थश्रीमद्विश्वात्मानन्दसरस्वत्या समम्।

Scanned with OKEN Scanner

श्रीरणवीरपरिसरे वेदविभागे।

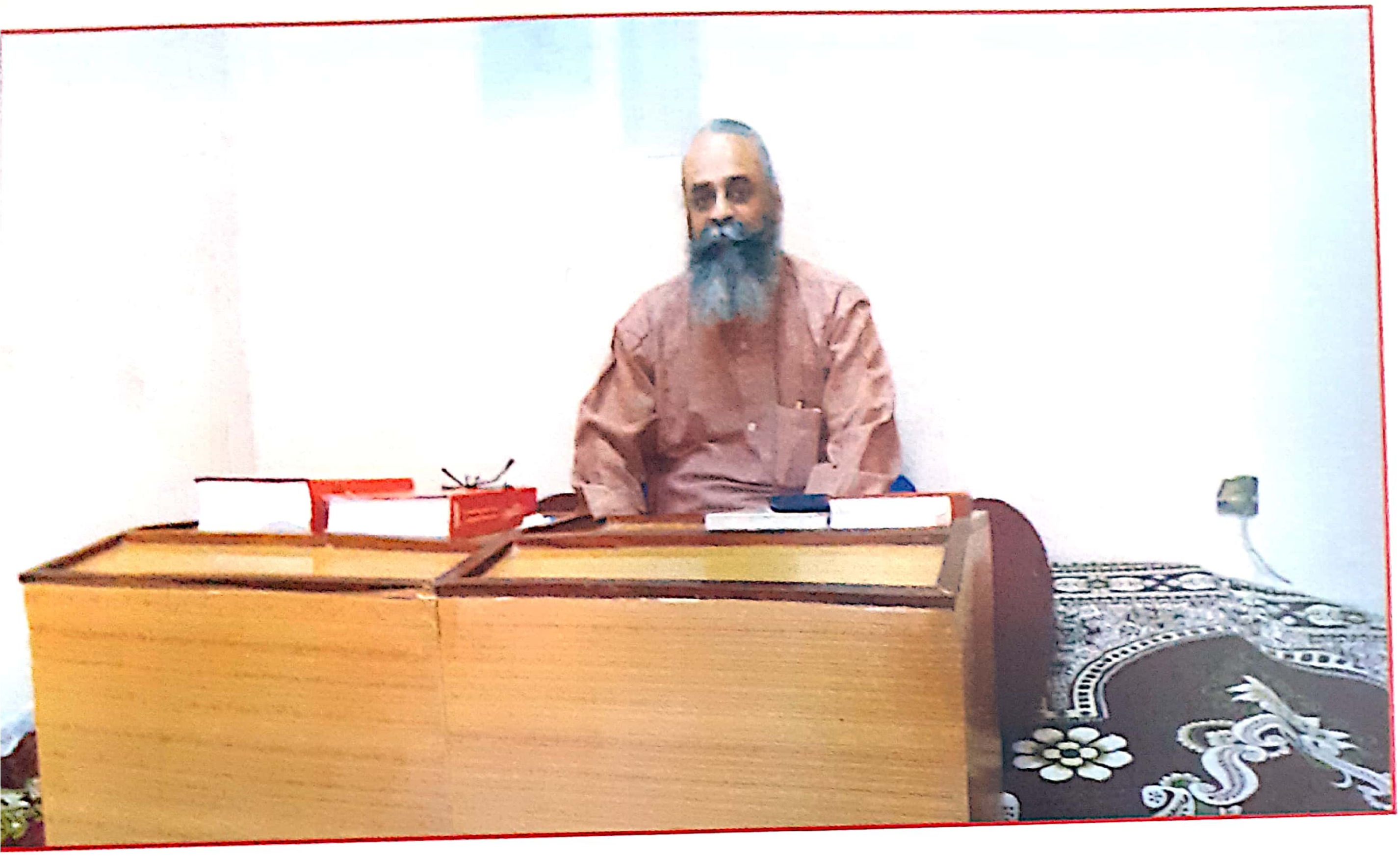

१५-०८-२०१६-तमे दिनाङ्के श्रीरणवीरपरिसरे स्वतन्त्रतादिनकार्यक्रमे।

Scanned with OKEN Scanner

श्रीरणवीरपरिसरे आचार्येण परमेश्वरनारायणशास्त्रिणा,
जम्मूकश्मीरराज्योपमुख्यमन्त्रिणा डा. निर्मलकुमारसिंहेन च सार्धम्।

[illegible] आचार्यदयानन्दभार्गवेण, आचार्ययुगलकिशोरमिश्रेण, आचार्यपरमेश्वरनारायणशास्त्रिणा,
डा. निर्मलकुमारसिंहेन, आचार्यमनोजकुमारमिश्रेण च साकम्।

प्रो. पी.एन्. शास्त्री
कुलपति
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
मानित विश्वविद्यालय
(मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन)
('ए' ग्रेड के साथ राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं
प्रत्यायन परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त)

Prof. P.N. Shastry
Vice-Chancellor
RASHTRIYA SANSKRIT SANSTHAN
Deemed to be University
(Under MHRD, Govt. of India)
(Accredited by NAAC with 'A' Grade)

श्रीः

नम्रत्वेनोन्नमन्तः परगुणकथनैः स्वान् गुणान् ख्यापयन्तः
स्वार्थान् संपादयन्तो विततपृथुतरारम्भयत्नाः परार्थे।
क्षान्त्यैवाक्षेपरूक्षाक्षरमुखरमुखान् दुर्मुखान् दूषयन्तः
सन्तः साश्चर्यचर्या(च)र्या जगति बहुमताः कस्य नाभ्यर्चनीयाः॥

साश्चर्यवर्याः साश्चर्यचर्याः च सत्पुरुषाः पृथिव्यां सर्वस्यापि अभ्यर्चनीया भवन्ति।

आचार्यः आर् देवनाथमहोदयः अन्यादृशं व्यक्तित्वं भजते स्म। आचार्य देवनाथं स्मारं स्मारं तद्गुणततिषु अद्वैतभावं लभते अयं जनः। मित्रमणेः सान्निध्यं सर्वदा सर्वथा नवनवोन्मेषशालि प्रतिभम् उपस्थापयति स्म। प्रायः त्रिंशद्वर्षेभ्यः पूर्वं तिरुपतिक्षेत्रे कुत्रचित् विद्यालये शिक्षणाभ्यासकाले आवयोः समागमः, विरामकाले सुदीर्घः संवादः स्मर्यते। वैदिकपरम्परायाः प्रतिष्ठा, शास्त्रपरम्परायाः संरक्षणं चेति विषये चिन्तनं मन्थनं च आवयोः मैत्रीबन्धस्य जीवातुरासीत्। तत्प्रभृति यदा यदा सहवासः, संवादश्च भवति स्म, तदा तदा गुरुकुलेषु वेदाध्ययनपरम्परायाः, शास्त्राधिगमोपायानां चिन्तनम् अकरवाव। ततः परं प्रतिवत्सरमावयोः समागमः भवति स्म। राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य परिसरेषु, अन्यान्यावसरेषु शास्त्रसंरक्षणोपायानां क्रियान्वयनं कथमिति विचारः प्रस्फुरति स्म। शिष्यवत्सलाः आचार्याः देवनाथवर्याः पुनः पुनः भर्तृहरेः श्लोकमिमं स्मारयन्ति। यथा-

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः॥

संस्कृतजगत् न कदापि आचार्यान् विस्मर्तुं शक्नोति। संस्कृतकार्ये तत्रापि शास्त्रसंरक्षणसन्दर्भे कीर्तिशेषाणां मित्रमणीनां वचः प्रतिपदं स्मरामि।

इति आचार्यान् स्मरन्

प.ना.शास्त्री
(परमेश्वरनारायणशास्त्री)

56-57, Institutional Area, Janakpuri, New Delhi-110058 Ph.: (O) 28523949 (Fax) 28521948
EPABX : 28524993, 28521994, 28524995 E.Mail : rskspvc@yahoo.com

Scanned with OKEN Scanner

ॐ

सम्पादकीयम्

अथ प्रकाश्यतेऽस्माभिर्विद्यारश्मिरैषमो २०१७-१८ तमस्याध्ययनवर्षस्य षष्ठाङ्कोऽयं **श्रीमदाचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिविशेषाङ्को** भवतां विद्वत्सहृयानां करारविन्देषु समर्प्यमाणेति।।

ननु भोः! सहृदयाः! विद्वन्मणयः! राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य मुम्बईपरिसर-प्राचार्यचराणामकालजीवितविरामभाजां पुण्यस्मृतिरूपा वाक्यपुष्पमालिकेयं चिराय प्रशोभतांतमाम्। ऐषमस्तावद्विशेषाङ्के व्याकरणन्यायसाहित्यवेदान्तज्योतिषशिक्षा-शास्त्राधुनिकविषयादिनैकरचनानामेकत्र संयोगो विद्वत्सहृदयान् मोदयेत्तरामित्यत्र नास्ति काचन संशीतिः।।

आचार्यरामानुजदेवनाथस्मृतिखण्डेन प्रारभ्यमाणोऽयं विशेषाङ्को विशिष्यात्रैषमो न्यायशास्त्रस्यापि च वेदान्तस्यापि रचना बिभर्तीति सामोदं निवेदयामः।।

अपि च सर्व्वा अपि शास्त्रीयरचना निजप्रौढितया सहृदयान् विदुषश्च समाकृष्य समालोचयितुं संशोध्य सम्पादयितुं च प्रेरयिष्यन्तीति सम्पादकमण्डलं विश्वसिति।।

तदित्थम्-

शास्त्रीयरचनाः सर्व्वा निजप्रौढितया स्थिताः।
सहृदयान् विदुषश्चैव चिरं तोषयितुं क्षमाः।। इति।

इत्याचार्यरामानुजदेवनाथानुग्रहपात्रं
सम्पादकमण्डलम्

रचनानुक्रमणिका

स्मरणिकाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	ॐ श्रीमते रामानुजदेवनाथाय नमः	डा. को. वे. सोमयाजुलुः आचार्यः	1
2	पुण्यस्मरणम्	आचार्यः का. ई. देवनाथन्	4
3	स्मृत्युज्जीविका	प्रो. पि. सि. मुरलीमाधवन्	6
4	वियोगिनीकल्लोलिनी	आचार्यः जि.यस्.आर्. कृष्णमूर्तिः	7
5	सखा गुरुश्च मे	आचार्यः राजन्. ई. एम्.	9
6	पुण्य-स्मरण	प्रो. सुदेश कुमार शर्मा	11
7	प्राज्ञपुरुषोत्तमः रामानुजः	आचार्यः अतुलकुमारनन्दः	14
8	चिरं स्मराम्याचार्यरामानुजदेव...	प्रो. सुकान्तकुमारसेनापतिः	20
9	सदाचारिणे आचार्यरामानुजदेवनाथाय	आचार्यललितकुमारसाहुः	22
10	आचार्यदेवनाथस्मरणम्	डा. हरिओम्शास्त्री	25
11	आचार्यदेवो भव	डा. शिवरामभट्टः	26
12	Devanathan – My Best Friend	Dr. S V R Murthy	31
13	Dear Departed	Dr. Sharat C. Sharma	33
14	देशिकप्रणामः	डा. एम्-जयकृष्णन्	41
15	आचार्यो देवनाथः	डॉ. दे. दयानाथः	42
16	लीनोऽसि कुत्र प्रभो ....!	डा. प्रियव्रतमिश्रः	47
17	भजेऽहं भजेऽहं सदा तेऽङ्घ्रिपद्मम्	डा. विनायकरजतः	51
18	ज्ञानमहिममण्डिताः शिक्षाशास्त्रिणः	डा. परमेशकुमारशर्मा	60
19	आचार्यः सः नो महान्	डा. नितिनकुमारजैनः	65
20	आचार्य रामानुज देवनाथनः	डा. शिवदत्त आर्य	68
21	व्यक्तित्व के गुणों के धनी	डा. प्रेमसिंहसिकरवार	69
22	पुण्यश्लोकः आचार्यः रामानुजदेवनाथः	डा. देवदत्तसरोदे	76
23	आदर्श अध्यापक के गुणों से परिपूर्ण	डॉ. श्रीगोविन्द पाण्डेय	80
24	चिरस्स्मरणीयाः वन्दनीयाश्च गुरवः	डा. राधागोविन्दत्रिपाठी	83

Scanned with OKEN Scanner

व्याकरणविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	वैयाकरणमतानुसारं पदशास्त्रीय..	डा. सोमयाजुलुः आचार्यः	88
2	काल एव हि विश्वात्मा	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	104
3	पाणिनीयपद्धत्या ए बी सी डी –	प्रो. बोधकुमारझाः	117
4	समासस्य तत्त्वबोधिनीलघुशब्देन्दु-	डा. सुभाष मीणा	121
5	व्याकरणनये सम्बन्धनिरूपणम्	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	125
6	कर्त्तृकर्मणोः कृति	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	135
7	भाषाविज्ञानदृष्ट्याशब्दार्थसम्बन्धविमर्शः	चेमटे सुरेशः	144
8	सिद्धान्तकौमुदीवैदिकप्रकरणस्थ-	ऋतम्भरापाण्डेयः	154

न्यायविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	विलक्षणं सिद्धान्तलक्षणम्	डा. ना .रा. श्रीधरन्	166

साहित्यविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राजकुमारमिश्रप्रणीतभारतभूषणकाव्यस्य	डॉ. कृपाशङ्करशर्मा	170
2	ध्वन्यालोकलोचनाभ्यां प्रकाशितं	डा. नारायणन्. ई. आर्.	176
3	आलङ्कारिकाभिमता व्यङ्ग्यबोधिनी	डा. एम्. सुदर्शनचिपळूणकरः	182

ज्योतिषविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	राष्ट्र के निर्माण में ज्योतिषशास्त्र	प्रो. भारतभूषण मिश्र	188
2	मिथिला के शाक्त परम्परा में	डा. आशीष कुमार चौधरी	194
3	ज्योतिष-वास्तुशास्त्रयोः दिग्ज्ञान	डा. अनिरुद्ध नारायण शुक्लः	199

Scanned with OKEN Scanner

वेदान्तविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	Vedic Mahavakva	Prof. P. C. Muraleemadhavan	206
2	श्रीसुरेश्वराचार्याणामाभासवादः	डॉ. भगवानसामन्तरायः	212
3	आधुनिककाले भगवद्गीतायाः	डा. ए. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	216
4	संस्कृतवाङ्मये भक्तितत्त्वानि	डॉ. विनोद कुमार शर्मा	221

शिक्षाविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	श्रीमहेन्द्रनाथदत्तानां शैक्षिकं चिन्तनम्	डा. एम्-जयकृष्णन्	227
2	भारोपीयभाषापरिवारः संस्कृतञ्च	डा. आरती शर्मा	232
3	संस्कृतशिक्षणे नवीनता	डॉ. सच्चिदानन्दमूर्त्तिः	238
4	श्रीमद्भागवते विश्वबन्धुत्वपोषकाणि	डा. परमेशकुमारशर्मा	241
5	संस्कृतिसंरक्षणे भाषाप्रयोगशालायाः	डॉ. प्रेमसिंहसिकरवारः	247
6	शिक्षायां मानसिकस्वास्थ्यम्	डा. कौशलेश शर्मा	257
7	उच्च शिक्षा में गुणवत्ताः समस्याएं एवं	डा. शुद्धात्मप्रकाश जैन	261
8	वैदिकशिक्षायाः स्वरूपं तद्वैशिष्ट्यानि	डा. देवदत्त सरोदे	269
9	वर्तमानशिक्षाव्यवस्थायां	डा. वी. एस्. वी. भास्कररेड्डी	282
10	भारतीयसन्दर्भमनुसृत्य	डा. सुनील कुमार शर्मा	290
11	संस्कृतभाषाधिगमे पठनकौशलम्	सचिनकुमारः	296

आधुनिकविभागः

क्र.	रचनानाम	रचयितृनाम	पृष्ठसङ्ख्या
1	मॉरीशस के हिन्दी उपन्यास सम्राटः	डॉ. गीता दूबे	304
2	A Comparative Study of the	Dr. Swargakumar Mishra	310
3	Impact of Globilization on	Dr. Kumar	319
4	Women Education in India	Dr. Pinki Malik	326
5	Culture in Chinua Achebe's	Dr. Shweta Sood	332
6	Gender And Environment	Dr. Suman Singh	338

Scanned with OKEN Scanner

7	शारिरिक तंदुरुस्ती विकास के लिए	डॉ. आंधळे शंकर बाबुराव	347
8	साहित्य प्रकारांचे स्वरुप	डॉ. मीनाक्षी बरहाटे	352
9	Java Applets	Ms. Vaishali Nivadunge	355

Scanned with OKEN Scanner

कर्तृकर्मणोः कृति

डॉ. नवीनकुमारमिश्रः
व्याकरणविभागः ,राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
क. जे .सोमैयासंस्कृविद्यापीठम्मुम्बई।,

इदं सूत्रं पाणिनिकृताष्टाध्याय्याः द्वितीयाध्यायस्य तृतीयपादस्य पञ्चषष्टितमत्वेन पठितम् । कर्तृ च कर्म च कर्तृकर्मणी तयोः कर्तृकर्मणोः सप्तमीद्विवचनरूपम् । षष्ठी शेषे 2/3/50 इत्यस्मात्सूत्रात् षष्ठीपदमात्रस्य अनभिहिते 2/3/1 इति सम्पूर्णसूत्रं प्रस्तुतमनुवृत्तम् । अत्र शेषे न संबध्यते, षष्ठी शेषे इत्यनेन षष्ठीविधानसामर्थ्यात् प्रकृतसूत्रवैयर्थ्यापत्तेः ।

कृद्ग्रहणेन कृदन्तपर्याप्तानुभविकशक्तिग्रहमात्रप्रयोज्यशाब्दबोधविषयक्रियानिरूपितकर्तृकर्मणोः षष्ठी इति सूत्रार्थः ।

षष्ठी शेषे इत्यनेन शास्त्रेण षष्ठीविधाने सुप्सुपा समस्यते । प्रकृतसूत्रेण षष्ठीविधाने प्रतिपदविधाना या षष्ठी सा न समस्यते (वा.) अस्माद्वार्त्तिकात् प्रतिपदविहितषष्ठ्यन्तस्य समासो निषिध्यते । उभयोः शास्त्रयोः वैषम्यात् प्रकृतशास्त्रस्य न वैयर्थ्यमिति । कृद्योगा षष्ठी समस्यते एव (वा.) इति प्रतिषिद्धसमासस्य प्रतिप्रसवेन पुनर्विधानेन प्रवृत्तवार्त्तिकेन प्रकृतसूत्रविहिता या षष्ठी सा समस्यते । अतएव प्रकृतसूत्रेशेषे इति पदस्य अन्वयो न ।

कृद्योगे कर्त्तरि कर्मणि च षष्ठी स्यात् (वा.) इति वार्त्तिकेन तत्र समासस्येष्टत्वात् । अत्र कर्तृसाहचर्यात् कर्मापि धात्वर्थे भेदेनान्वय्येव गृह्यते । तेन क्रियाविशेषाणानां कर्मत्वेऽपि न ततः षष्ठी । अत्र अधीगर्थदयेशां कर्मणि 2/3/52 इति सूत्रात् चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि 2/3/62 इति पर्यन्तमनुवर्तमानस्य कर्त्तरि च कृति इति न्यस्य सन्निहितकर्मणीत्यस्यानुकर्षणसम्भवेऽपि कर्मग्रहणं मन्थरमितिचेन्न ,सन्निहिताधिकरणस्याप्यनुकर्षणापत्तेः ।

धातोःकृत्प्रत्ययेप्रयुज्यमाने सति अनुक्तकर्तृकर्मणोरर्थे षष्ठी विधीयते इति सूत्रार्थलाभः । कर्तुरीप्सिततमं कर्म 1/4/49 इति सूत्रेण कर्मसञ्ज्ञा विहिता । हरिं भजतीत्यत्र कर्मणि द्वितीया 2/3/2 इत्यनेन द्वितीयासिद्धिः कर्मसञ्ज्ञायाः प्रयोजनम्, एवं स्वतन्त्रः कर्त्ता 1/4/54 इति शास्त्रेण

Scanned with OKEN Scanner

कर्तृसञ्ज्ञा विहिता । कर्तृकरणयोस्तृतीया 2/3/18 इति शास्त्रेण तृतीयाविभक्तिःविहिताकर्तृसञ्ज्ञायाः प्रयोजनम् ।यथा रामेण हन्यते । अनयारीत्या कर्मणि प्राप्तां द्वितीयां कर्त्तरि प्राप्तां तृतीयां प्रबाध्य कर्तृकर्मणोः कृति2/3/65 इति सूत्रेण षष्ठीविभक्तिः विधीयते । यथा कृष्णस्य कालिदासस्य वा कृतिः-कृष्णकर्त्तृका सृष्टिः, पुरां भेत्ता ,भवतः शायिका ,अपां स्रष्टा, ग्रन्थस्य प्रणेता ,जगतः कर्त्ता कृष्णः, गामस्य ग्राममजां नयति,नेता अश्वस्य स्रुघ्नंस्रुघ्नस्य वा । इत्यादीन्युदाहरणानि । कृष्णस्य कालिदासस्य वा कृतिः इत्यत्र कर्तृषष्ठ्या उदाहरणम्भावे क्तिन्प्रत्ययः।करणं कृतिरित्यत्र उत्पत्त्यनुकूलव्या-पारःकृञ्धात्वर्थः। तादृशव्यापारस्य जनकः कृष्णः कर्त्ता। तद्वाचकात् षष्ठी। कृष्णपदस्य अनुक्तकर्त्तरि कृष्णप्रातिपदिकात् कृद्योगे षष्ठीविभक्तिः। उक्ते तु प्रथमैव।

जगतः कर्त्ता कृष्णःजगत्कर्मकसृष्ट्यनुकुलव्यापारवान्कृष्णःइत्यत्र कर्मणः उदाहरणमत्र कर्तृपदे कृधातोः तृच्प्रत्ययेन कृष्णरूपकर्तुरभिधानेनतृजा कर्तुरुक्तत्वात् कृष्णात्प्रथमैव।कृञ्धात्वर्थव्यापार-जन्योत्पत्तिरूपफलाश्रयत्वेन जगतः अनुक्तकर्मत्वात् जगत्पदात् षष्ठी। अत्र कृञ्धातोर्यत्न-वाचकत्वं नास्ति।

अनभिहिते इति पदप्रयोजनदर्शकम् - कृद्योगे सति अनुक्तकर्तृकर्मणोरेव षष्ठीविभक्तिः स्यात् । वनास्तव्योऽहमत्राऽहमिति पदेन कर्त्रुक्तत्वात् कृज्जन्यतव्यत् सत्वेऽपि (कृद्योगेऽपि) न षष्ठी किन्तु प्रथमैव।

कर्तृकर्मणोरिति पदप्रयोजनदर्शकम् –शस्त्रेण भेत्ता । प्रकृतसूत्रे कर्तृकर्मणोः पदाभावे करणाद्यर्थेष्वपि षष्ठीप्राप्तिः तद्वारणाय सूत्रे कर्तृकर्मणोरिति पदं न्यस्तम्। गुणकर्मणि वेष्यते (वा.) द्विकर्मकधातुयोगेऽप्रधानकर्मसंज्ञकात् गौणकर्मणि कृद्योगे षष्ठी वेष्यते। पक्षे द्वितीया च। यथा नेताऽश्वस्य स्रुघ्नस्य स्रुघ्नं वा। अत्र अश्वस्य प्रधानकर्मत्वम्। गोपालकः गोःगाम् वा नयति। अत्र अश्वस्य प्रधानकर्मत्वम् कर्तुरीप्सिततमं कर्म 1/4/49 इति सूत्रेण कर्मसञ्ज्ञा विहिता। अकथितञ्चेति कर्मत्वं स्रुघ्नस्य अप्रधानकर्मत्त्वम्।

देवदत्तः ओदनं पचतीत्यत्र **न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्** पा.सू.2.3.69 इति लादेशयोगे षष्ठीनिषेधः,तर्हि तिङ्व्यावृत्यर्थं कृन्नेष्यते । शतेन क्रीतः शत्योऽश्व इत्यादौ तु तद्धितान्तादेवाश्वादेः षष्ठीविभक्तिः निषिद्धा । देवदत्तं हिरुक् इति वाक्ये **न**

Scanned with OKEN Scanner

लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् पा.सू.2.3.69 षष्ठीनिषेधात् । हिरुगाद्यव्ययबोध्यवर्जनादिक्रियां प्रति देवदत्तपदे कर्मत्वादनेन षष्ठीविरहः । शेषत्वविवक्षायां तु षष्ठी इष्यते सा च कृद्योगमात्रम् ।

ननु स्तोकं पाक इत्यत्र पच्धातोः भावे घञ्प्रत्ययः अनुक्तकर्मणि स्तोकक्रियाविशेषण-प्रातिपदिकात् षष्ठी प्राप्ता तां वारणाय धात्वर्थे भेदसम्बन्धेनान्वयिकर्तृवाचकपदात् षष्ठी,तत्साहचर्यात्धात्वर्थे भेदसम्बन्धेनान्वयिकर्मवाचकपदात् षष्ठी स्यात् । स्तोकं पाक इत्यत्र स्तोकादिपदार्थस्य धात्वर्थः फले अभेदेन अन्वयात् क्रियाविशेषणवाचकपाकपदात् न षष्ठी किन्तु प्रथमैव ।

ननु स्तोकं पाचकः इत्यादौ क्रियाविशेषणेन पचति समानाधिकरणसमासः,सुप्सुपेति वा समासः कुतो नेति चेन्न, सुबन्तार्थविशेषणेनानन्वयात् । **द्वितीयाश्रितातीत0**—इत्यत्र तु द्वितीयाविभक्तिप्रकृत्यर्थस्य कृत्प्रत्ययक्तार्थविशेषणीभूतधात्वर्थक्रियान्वयेऽपि अवयवद्वारा सामर्थ्यमादाय समासो भवत्येव ।

क्रियाविशेषणस्तोकदारुणादिभ्यो न षष्ठी कर्तृकर्मणोः इति । नापि समासः। अत एव दारुणम् अध्यापकः इत्यत्र दारुणाध्यापकः इति सिद्ध्यर्थं **मलोपवचनम्** (वा.) इति वार्त्तिकमारब्धम् । अन्यथा कर्तृकर्मणोः इति षष्ठ्या तृजकाभ्यां कर्त्तरि इति निषेधसामर्थ्यादवयवद्वारा सामर्थ्येऽपि प्रवृत्त्या,तत्समासेनैव सिद्धौ मलोपवचनं व्यर्थमेव स्यात् ।

क्रियाविशेषणेन समासाभावः पाकपदे प्रतिपादितः स्तोकं पाचक इत्यत्र तु **विशेषणं विशेष्येण बहुलम्** पा.सू.2.1.57 **उत** सुप्सुपा इत्यादिनान समासः सामर्थ्याभावात् । स्तोकादिपदार्थस्य क्रिययान्वयः सुबन्तार्थविशेष्येण सह (पाकेन) विशेषणसुबन्तार्थस्यान्वयः सामर्थ्यं दर्शयति । पाकविशेष्यकः मृदु पचतीत्यर्थकः ।

निरुक्तसामर्थ्ये एव समासस्वीकारे कष्टं श्रित इत्यादौ न समासः । कष्टं सुबन्तार्थस्य श्रि (श्रितः सुबन्तैकदेश) धात्वर्थक्रियायामन्वयः । यः श्रितःसुबन्तार्थस्यैकदेशः न तु सुबन्तार्थः । इत्यापत्तिः ।

द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः पा.सू 2.1.24 इति सूत्रारम्भसामर्थ्यात्

Scanned with OKEN Scanner

कष्टश्रित इत्यादौ श्रितशब्दार्थैकदेशाश्रयणरूपश्रिधात्वर्थेऽन्वयेऽपि **द्वितीयाश्रितातीतेति** समासो भवति। नीलोत्पलमित्यत्र चारितार्थ्येन अन्वयेन सामर्थ्याश्रयणं स्वीकृत्य विशेषणादीनामप्रवृत्तिरिति स्पष्टः।

वस्तुतस्तु द्वितीयाकारकेऽन्वयवद्द्वारा सामर्थ्याश्रयणम्। शिखीध्वस्त इत्यादिवत् कष्टं श्रित इत्यादावपि श्रिधात्वर्थवृत्तिकष्टनिष्ठकर्मतानिरूपकत्वस्य श्रिशब्दार्थाश्रयणकर्त्तरि आरोप्य निरूकसामर्थ्यं वदेत्।

क्रियाविशेषणेन सह समासविधानं तस्मादेव षष्ठ्यनुत्थापकत्वम् ।अत एवमहाभाष्यकारःआचार्यपतञ्जलिः**पूजनात्पूजितमनुदात्तम्** पा.सू.8.1.67 इति सूत्रेदारुणाध्यापकइति साधयितुं **"मलोपश्च"इति** सूत्रारम्भः । दारुणं यथा स्यात् तथैव अध्यापकरीति दारुणशब्दोऽत्र क्रियाविशेषणम्। अन्यथा (क्रियाविशेषणेन सह समासस्वीकारे) समासोत्तरे क्षणे एव सुपो धातुप्रातिपदिकयोरिति सूत्रेण सुब्लकि कृते दारुणाध्यापकपदसिद्धे मलोपवचनमत्र निष्फलम् । अतोऽत्र क्याविशेषणान्न षष्ठी।

सुबन्तार्थैकदेशधात्वर्थेऽन्वयात्सामर्थ्ये समासाभावे न सन्देहः,**तृजकाभ्यां कर्त्तरि** इत्यादौ निषेधसामर्थ्यात् अवयवसामर्थ्येऽपि षष्ठीसमासप्रवृत्तिर्ज्ञापयति । नो चेत् अपां स्रष्टा इत्यत्र धात्वर्थेऽन्वयेऽपि सामर्थ्याभावे समासाभावः। तथाहि **तृज्काभ्यां कर्त्तरि** इति सूत्रेण समासनिषेधः व्यर्थः । **समासः** वैकल्पिकः,तदभावे विग्रहवाक्यकाले दारुणाध्यापक इति प्रयोगसिद्धये भाष्यकाराणां **मलोपविधानं** युक्तमिति चेन्न यदि भाष्याकाराणामाशयः वाक्येऽपि प्रयोगः इष्टः स्यात्तर्हि वाक्ये मलोपश्चेति वक्तव्यम्। अत एव वाक्ये दारुणाध्यापकः प्रयोगः असाधुरेव।

कैयटाभिप्रायः-दारुणेति क्रियाविशेषणं वैयधिकरण्यात् समासो न स्यात् तस्माद् मलोपविधानं कृतम्। सुप्सुपादिना समासविधानं न सार्वत्रिकम् आदिपदेन मयूरव्यंसकादयश्चेत्यस्य संग्रहः।

न च **समासस्य** वैकल्पिकत्वेन तदभावे वाक्ये मलोपपूर्वकदारुणाध्यापकरुसिद्ध्यर्थं मलोपवचनमिति वाच्यम्, तथा सति **वाक्ये मलोपश्च वक्तव्यः**इति वदेत्।

अत एव कैयटेन क्रियाविशेषणदारुणादयस्तत्र वैयधिकरण्यात्समासाभावात् मलोपो विधीयते इत्युक्तम्। **सुबामन्त्रिते** इत्यतः सुबिति अनुवर्त्तमाने सुपा इति समासस्तु न सार्वत्रिकः। किन्तु अगतिकगतिस्थले एव शिष्टप्रयोगानुरोधेन विधानात् नात्र तत्समासाप्राप्तिः।

यद्यपि विस्पष्टं पटुः इत्यर्थके विस्पष्टपटुःइत्यत्र विस्पष्टं पटुत्वं तदाश्रयः पटुः इत्यत्र विस्पष्टपदार्थस्याश्रयार्थे विशेषणतया भासमाने पटुत्वेऽन्वयेऽपि सुपा इति समासो भाष्ये। तत्र भाष्यप्रामाण्यात् तथा स्वीकारेऽपि अत्र तथा न प्रमाणाभावात्।

कृति किम् –कर्तृसञ्ज्ञा च धात्वर्थव्यापाराश्रयस्य,कर्मसञ्ज्ञा च धात्वर्थव्यापारजन्यफलाश्रयस्य भवतीति पीनत्वस्यान्यथाऽनुपपत्त्या रात्रिभोजनमर्थापत्त्या यथा पीनो देवदत्तः दिवा न भुङ्क्ते इत्यत्र रात्रिभोजनक्रियाक्षिप्यते तथैव प्रकृते कर्तृकर्मभ्यां क्रिया सन्निधाप्यते आक्षिप्यते क्रियावाची धातुरेव। तद्धर्मावच्छिन्नविषयकशाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नं प्रति तद्धर्मावच्छिन्ननिरुपितवृत्तिविशिष्टज्ञानं हेतुः। कारकनिष्ठप्रकारतानिरुपितविशेष्यतासंबन्धेनशाब्दबुद्धित्वावच्छिन्नरूपकार्यम्प्रति, धातुजन्यसाध्यत्व-विशिष्टभावनात्वावच्छिन्नोपस्थितिः कारणम् इति। कारकान्वययोग्यतावच्छेदकरूपेण साध्यत्वेन धातुभिरेव तदुपस्थितेः। शत्योऽश्वः आभ्रिक इत्यादौ न तेन तेन रूपेणोपस्थितिरिति न तत्र कारकाणामन्वयः,एतद्भाष्यप्रामाण्यात्। अतएव हिरुगादियोगे न कर्मादिसंज्ञा। तेन देवदत्तेन शत्योऽश्वः इत्यादौ षष्ठीनिवृत्त्यर्थमपि न कृद्ग्रहणम्। अधिका खारी द्रोणेन इत्यत्र हेतौ तृतीया, तत्र जनकत्वरूपहेतुसत्वात्।

धातोश्च द्वये प्रत्ययास्तिङः कृतश्च। तत्र तिङ्योगे न लोकेति निषेधात् कृदन्ततदादियोगे एव कर्त्तृवाचकात्,कर्मवाचकात् षष्ठी भविष्यति किं कृद्ग्रहणेन। नन्वत्र कृद्ग्रहणाभावे उत्तरत्र तत्संबन्धाभावेन न लोकेति सूत्रे कृदव्ययस्यैव ग्रहणम् इति कथं लभ्यते ? अत्रोच्यते अव्ययार्थस्य ये कर्तृकर्मणी इति व्याख्यानेन तत्सिद्धेः। ननु कृद्ग्रहणाभावे तस्योत्तरत्रानुवृत्त्यभावेन उभयप्राप्तौ इत्रान्यपदार्थे जायमानो बहुव्रीहिरिति तत्रान्यपदार्थज्ञानाभावः। कृद्ग्रहणसत्त्वेतु कृदन्तत-दादिरूपान्यपदार्थस्य स्पष्टतया अवगमः इति चेन्न एकाचो द्वे इत्येव अशाब्दस्यापि अन्यपदार्थस्य यत्रावगमस्तत्रापि इति व्याख्यानाद्भविष्यति। न च भेदिका देवदत्तस्य काष्ठानामोव इत्यादौ गुणभूते

Scanned with OKEN Scanner

णिच्प्रत्ययार्थकर्त्तरि षष्ठ्यर्थकृत्पदं यौगिकमिति करोति कृदिति कर्तृपरं वाच्यम् । तृतीयावत् तत्र षष्ठ्या अपि स्वतस्सिद्धेः ।

कृति किम्-तद्धितान्ततदादिपर्याप्तानुभविकशक्तिग्रहमात्रप्रयोज्य-शाब्दबोधविषयक्रियायाः कर्त्तरि कर्मणि च मा भूदित्यर्थः,कृतपूर्वी कटमिति कृतः कटः पूर्वमनेन इति विग्रहे उत्पत्त्यनुकुलव्यापारवाचककृधातोः सकर्मकत्वेन क्तस्य कटरूप कर्मणि विधानेनक्तप्रत्ययेनैवाभिहितं कर्मेति नात्र द्वितीया प्राप्नोति, अनभिहिताधिकारात्,नापि द्वितीया बाधिकाऽनेन षष्ठी प्राप्नोति,इहाप्यनभिहिताधिकारसत्त्वात् ।

किञ्च कृतः कःइति प्रश्ने सन्निधानात् कट इति, कृत्पदार्थस्यकटपदार्थसापेक्षत्वेन सापेक्षमसमर्थवत् इति एकार्थीभावरूपसामर्थ्याभावात् समासोऽत्र दुर्लभ इति, एवं **सपूर्वाच्च** इति इनिप्रत्ययोऽपि न प्राप्नोति इति कृतपूर्वी कटम् इति वाक्यमेव अशुद्धम् ।

अत्रोच्यते पूर्वं कृतमनेन इति विग्रहं कृत्वा कटरूपकर्मणोऽविवक्षया अविवक्षितकर्मतया अकर्मत्वेन पूर्वं भावेक्तप्रत्ययो विधेयः ।

एवञ्च कृतपदार्थस्य सापेक्षत्वाभावेन समासतद्धितौ भवतः । तथा च कृतपूर्वी इत्ययं पूर्वं कृतवान् इति समासार्थः सम्पद्यते गुणभूतयाऽपि (विशेषणभूतयाऽपि) क्रियया कारकाणां सम्बन्धस्य कटं कृतवान् इत्यादौ दर्शनात् । अत्रापि करोति क्रियापेक्षं कर्मत्वं कटस्य । तच्च कर्मत्वं न केनाप्यभिहितम्,भावे क्तस्य, कर्त्तरि इनिप्रत्ययस्य च विधानात् ।

एवञ्च प्रत्युदाहरणे सकर्मकप्रकृतिकभावक्तान्तस्येदृशवृत्तिमात्रविषयतया भाष्यसम्मतत्वेन तस्य केवलस्य क्वाप्यप्रयोगेण तद्धितान्ततदादिसमुदायशक्त्यैव क्रियोपस्थापकत्वेन तद्योगे कटशब्दान्नानेन षष्ठी किन्तु कर्मणि द्वितीयैव । पूर्वं कर्मणोऽविवक्षासमासतद्धितानन्तरं कर्मणः कटस्य विवक्षा । अत्र भाष्यमेव मानम् ।

तण्डुलानां पाचकतरः इत्यादौ तु तरब्रहितस्य पाचकादेः पृथक्प्रयोगेण तच्छक्तिग्रहस्यापि सत्त्वेन कृदन्ततदादिपर्याप्तशक्तिग्रहप्रयोज्योपस्थितिविषयत्वं क्रियायै अस्त्येवेति भवत्येव षष्ठी । अत एव ग्रन्थे तद्धिते मा भूदिति उक्तम् , न तु तद्धिताधिक्येऽपीति । भाष्येऽपि तद्धितस्य(तद्धितान्ततदाद्युपस्था-प्यक्रियायाः) ये कर्तृकर्मणी तत्र मा भूत्,कृतो ये कर्तृकर्मणी तत्रैव यथा स्यादित्येव उक्तम् **एवमधीती व्याकरणे**इत्यत्रापि बोध्यम् । तदुक्तं भाष्ये –यदा वाक्यं न तदा

Scanned with OKEN Scanner

प्रत्ययः(भावे) यदा प्रत्ययः सामान्येन (भावे) तदा वृत्तिः। अनेन भाष्येण [illegible]
प्रयोग इति स्पष्टमुक्तम्।

ओदनस्य पाचकतमइत्यादौ वृत्त्यन्तर्भूतकृद्योगः तर्हि ओदनस्य इत्यत्र षष्ठ्यभावे द्वितीयैव स्यात् इष्टापत्तेश्च। एवञ्च ओदनस्य पाचकतमेत्यत्र षष्ठ्यसाधुत्वे इष्टापत्तिरेव। अत एव मतुबधिकारे **प्रज्ञाश्रद्धाऽर्चाभ्यो णः** पा.सू. 5.2.101 प्राज्ञो व्याकरणम् श्राद्धः,आर्चः इत्याद्युदाहृतम्।

क्रियते घटःइत्यत्र कर्मणःविवक्षाभावमाश्रित्य भावलकारे सति अनन्तरं घटस्य कर्मत्वेन अन्वयात् अनभिहिते द्वितीया न तु प्रथमा वैषम्याच्च। कृतपूर्वीत्यत्र अलौकिकविग्रहे कटपदस्य असन्निधानात् कर्मणोऽविवक्षायां कृत्पदे भावे क्तप्रत्यययुतः।

क्रियते घटःइत्यत्र कर्मविवक्षायां तु द्वितीयैव कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपवृत्तिपञ्चकान्तरभूतत्वेन वृत्तिशून्यतया विग्रहाभावात् वृत्तिविषये एवायं व्युत्पत्तिप्रकार इति प्राञ्चः।

इयमेव कर्मणोऽविवक्षा नाम। न च नपुंसके भावे क्त इति भावे क्तप्रत्ययेन कृत इत्ययस्य सिद्धिः,तत्र अकर्मकेभ्यःइत्यनुवृत्तिसत्त्वात्। अकर्मकानुवृत्तौ चेदं भाष्यमेव मानम्।धार्यैरामोदमुत्तमम् इत्र उत्तमम् आमोदं गृहीत्वा इत्याध्याहृत्य तत्र द्वितीया,न षष्ठी। तदर्हम् इति निर्देशादस्य सूत्रस्य अनित्यत्वमिति। अनित्यत्वमन्तराऽपि पूर्वोक्तप्रयोगस्य सिद्धेः। कृतपूर्वी इत्यत्र सुप्सुपेति समासो बोध्यः।

ननु कृतः कटः पूर्वमनेन विग्रहे कृतशब्दस्य पूर्वशब्देन समासो न भवति। कृतशब्दस्य कटशब्दसापेक्षत्वेन सामर्थ्याभावात्। अत एव तद्धित इनिप्रत्ययस्याप्यभावः। किञ्च कृत इति क्तप्रत्ययेन कटस्य कर्मणोऽभिहितत्वेन ततः षष्ठ्याः प्राप्तिरेव नास्तीति किं तन्निवृत्त्यर्थेन कृद्ग्रहणेन। क्तप्रत्ययेन कृता अभिहितत्वादेव कटशब्दात् द्वितीयापि दुर्लभेति चेन्न .कृत अम् पूर्व अम् इत्यलौकिकविग्रहवाक्ये कटस्यासंनिहिततया कर्मत्वेनान्वयासंभवेन कृञ्धातोस्तदानीमकर्मकतया कर्मणि क्तप्रत्ययस्यासंभवे सति **नपुंसके भावे क्तः** पा.सू 3.3.114 इति भावे क्तप्रत्यये कृते सति कृतशब्दस्य कटशब्दसापेक्षत्वाभावात् समासतद्धितौ निर्बाधौ। ततश्च कृतपूर्वी तद्धितान्तस्य पूर्वं कृतवानित्यर्थः पर्यवस्यति। किं कृतवान् कर्मजिज्ञासायां कटमित्यन्वेति, गुणभूतयापि क्रियाकारकसंबन्धस्य कटं कृतवानित्यादौ दर्शनात्। तच्च कर्मत्वं न क्तप्रत्ययेनाभिहितम्, तस्य भावे विधानसामर्थ्यात्। नैवेनिप्रत्ययेन तस्य कर्त्तरि विधानात्। तथा च असति कृद्ग्रहणे षष्ठी स्यात्।

[illegible] प्राप्तषष्ठीवारणाय प्रकृतसूत्रे कृद्ग्रहणमिति।

नव्यास्तु कृतिग्रहणाभावे कर्तृकर्मणोः क्रियाक्षेपात् उभावपि कारकत्त्वव्याप्यधर्मः तेनैव क्रियानिरूपिता तस्मात् क्रियावाचकः धातुरेव। कारकान्वययोग्यतावच्छेदसाध्यत्वरूपेण धातुनैव क्रियोपस्थितत्वात्। धातुभिरेवात्र एवपदस्य व्यावृत्तिः कथ्यते शत्योऽश्वः,अभ्रिकः इत्यादयः [illegible] कारकान्वयितावच्छेदकसाध्यत्वरूपेण क्रियाया अनुपस्थितिः अतः तद्धिते उपस्थितक्रियायां न कारकाणामन्वयः। कृतपूर्वी कटमित्यत्र भाष्यप्रमाणं दर्शयति-देवदत्तेन शत्योऽश्वः,अभ्रिकः भूमिम् आदि अपप्रयोगाः,शत्यः-शतेन क्रीतः,अभ्रिकः अभ्रया खनति। अत एव धातुनैव साध्यत्वक्रियाया उपस्थितिः। तत्र कारकान्वये हिरुगादियोगे न कर्मसंज्ञा।

क्रियायाः उपस्थितिः सिद्धत्वरूपेण भवति। शत्यः,अभ्रिक इति तद्धितप्रयोगे साध्यत्वक्रियायाः नोपस्थितिः,तत्रैव कारकान्वयः। देवदत्तेन शत्योऽश्व इत्र देवदत्तपदे प्राप्तषष्ठीवारणाय सूत्रे कृद्ग्रहणमिति प्राञ्चः। देवदत्तपदस्य कर्तृत्वेन अन्वयाभावात् कृद्ग्रहणाभावे देवदत्तपदे षष्ठ्या अप्राप्तिः तर्हि षष्ठीवारणप्रसङ्गनिष्फलमिति नव्याः।

ननु भट्टिकाव्येददैर्दुःखस्यमादृग्भ्ये धायैरामोदमुत्तमम्। **लिम्पैरिव तनोर्वातैः चेतयः स्याज्ज्वलो न कः?॥** श्लोकेऽस्मिन् श्रीरामस्य विरहार्त्तस्य वाक्यमेतत्। अत्र दुःखस्येति तनोरिति च कर्मणि षष्ठीविभक्तिः दुःखं ददैः ददद्भ्यः,पुष्पादीनाम् आमोदं परिमलं धायैः पोषकैः,तनोः तनुं शरीरं लिम्पैः लिम्पद्भिः कः चेतयः प्राणी ज्वलः ज्वलन्निव न स्यादित्यर्थः। अत्रामोदस्योत्तमस्येति कर्मणि षष्ठ्या भाव्यम्। धायशब्दस्य पोषणार्थकधाञ्धातोः **ददातिदधात्योर्विभाषा पा.सू 1.1.140** इति णप्रत्ययात्मककृदन्तत्वादिति चेन्न उत्तममामोदं पुष्पादीनां गृहीत्वा दुःखस्य पोषकैरित्येवं गृहीत्वेत्यध्याहृत्य तद्योगे द्वितीयापत्तेः। अत्राहुः **कर्तृकर्मणोःकृति** इदमनित्यम् मत्वा षष्ठीविभक्तिः**तदर्हम्** इति निर्देशात्। स्त्रीप्रत्यययोरिति कथं तर्हि **सुट्तिथोः** इति सूत्रे सुटा सूयुटो बाधे नेति। करणत्वविवक्षाया तृतीयेति गृहाण।

दाधातोःपोषणार्थकाद्धाञ्च **ददातिदधात्योर्विभाषेति** शाणौ लिम्पेः ज्वलेर्णः **अनुपसर्गालिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसातिसहिभ्यश्च** पा.सू 3.1.138 इति शप्रत्ययः। **श्याऽद्व्यधास्रुसंस्वतीणवसाऽवहलिहश्लिषश्वसश्च** पा.सू. 3.1.141 इति णप्रत्ययः इति

जयमङ्गलाश्लोकव्याख्याप्येतज्जातीयैव। धायैरामोदमुत्तममित्यत्रगृहीत्वेत्यध्याहृत्य तद्योगे द्वितीया बोध्या।

उभयप्राप्ताविव्यंशस्य उभयोः कर्तृकर्मणोः प्राप्तिर्यस्मिन्निति विग्रहः। यत्र एकस्याः क्रियायाः

कर्तृकर्मणोः षष्ठीप्राप्तिः तत्र कर्मण्येवेति नियमः। यथा ओदनस्य पाकः ब्राह्मणानाञ्च प्रादुर्भावः।

अस्मिन्नुदाहरणे नियमस्याप्रवृत्तिःप्रादुर्भावक्रियायाः कर्त्ता ब्राह्मणः पाकक्रियायाः कर्म ओदनमत उभयत्र षष्ठी। प्रतिपदोपादानेन ज्ञायते यत् कर्तृकर्मणोः प्रयोगे एव अस्य नियमस्य प्रवृत्तिः।

स्त्रीप्रत्यययोरकाराकारयोर्नायं नियमः(भा.वा.)

स्त्रियां क्तिन् पा.सू.3.3.94 इति सूत्राधिकारे अक-अकारयोः प्रत्यययोः प्रयोगे कर्मण्येव षष्ठीति नायं नियमः। अत कर्तृकर्मणोः षष्ठी भेदिका बिभित्सा वा सद्रस्य जगतः।

शेषे वा(भा.वा.)

इदं वार्त्तिकम्उभयप्राप्तौ कर्तृकर्मणोः इति सूत्रस्य पक्षान्तरं मतान्तरं वा। शेषपदेन क्तिन्प्रत्ययस्य ग्रहणम् एवं कर्त्तरि वा षष्ठी न तु कर्मणि। द्वयोः उभयप्राप्तस्त्रीप्रत्यययोः पूर्वपाठात्।

यथा विचित्रा जगतः

कृतिर्हरेर्हरिणा वा इत्येके। दीक्षितस्तु शेषपदात् अकाराभ्यां प्रत्ययाभ्यां भिन्नयोः सामान्येन कृन्मात्रग्रहणम्।

शब्दानुशासनम् आचार्येण आचार्यस्य वा(भा.वा.)

असाधुशब्दान् अपहाय साधुशब्दान् बोधयति यच्छास्त्रं तच्छास्त्रं शब्दानुशासनशास्त्रं गीयते।

प्रकृतवार्त्तिके शब्दकर्म एवम् आचार्यः कर्ताऽस्ति। अत एव षष्ठी तृतीया वा स्यात्।

क्तस्य च वर्त्तमाने (पा.सू.2.3.65)

राज्ञां मतः बुद्धः पूजितो वा अत्र मतः बुद्धः इत्यादौ **मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च** इत्यनेन वर्त्तमाने क्तप्रत्ययः स्यात्।

अधिकरणवाचिनश्च(पा.सू. 2.3.68) अधिकरणवाचके क्तप्रत्यययोगे अनुक्ते कर्तृकर्मणी षष्ठी

Scanned with OKEN Scanner

आस्यते अस्मिन् आसितम्-इदमेषामासितमित्युदाहरणम् अकर्मकधातोः इयं कर्तृषष्ठी,सकर्मकेभ्यः धातुभ्यः कर्तृकर्मणोःषष्ठी इदमेषां भुक्तमोदनस्य । **दण्डी तु** उक्ते तु कर्ममात्रे षष्ठी अधिकरणवाचिनश्च

इत्यस्योत्सर्गशास्त्रस्य उभयप्राप्तौ कर्मणि अपवादसूत्रत्वात् । अत्र उक्ते कर्त्तरि तृतीया न षष्ठी ।

मध्येऽपवादाः पूर्वान् विधीन् बाधन्ते नोत्तरान् इति न्यायेन कर्तृकर्मणोः इति तु उभयप्राप्ताविव्यस्य बाधकः न त्वधिकरणवाचिनश्चेति ।

सन्दर्भग्रन्थसूची-

1.पाणिन्यष्टाध्यायी
2.काशिका
3.वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी
4. बालमनोरमाटीका
5.तत्त्वबोधिनीटीका
6.लक्ष्मीटीका
7.लघुशब्देन्दुशेखरः
8. लघुशब्देन्दुशेखरः षट्टीकः
9. लघुशब्देन्दुशेखरस्य दीपिकाटीका
10. लघुशब्देन्दुशेखरस्य भैरवीटीका
11.वैयाकरणसिद्धान्तदिग्दर्शनम्
12. वैयाकरणभूषणसारः
13.परमलघुमञ्जूषा
14. व्याकरणमहाभाष्यम्

Scanned with OKEN Scanner

ख्यातं राष्ट्रियसंस्कृतं सुमहितं संस्थानमद्याखिलं
वाणीवैभवमातनोति नितरां राष्ट्रे चतुर्दिग्भवम्।
तत्रासौ निजगौरवेण महता सारस्वतं भासयन्
सोमैयाभुवि भासते परिसरो मुम्बापुरे संस्थितः॥

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

NAAC द्वारा A श्रेण्यां प्रमाणितम्

(भारतशासनस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-400077

Scanned with OKEN Scanner

मासिकी

ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

वर्षम् : १४, अङ्क : ०३-०४, मार्च-अप्रैल २०१७

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता मासिकी शोधपत्रिका

An International Refereed Monthly Research Journal

हरियाणा स्वर्ण-जयन्तीमुपलक्ष्य

हरियाणा स्वर्ण उत्सव

हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य॥
(ऋक्० १०/११२/३)

हरियाणा संस्कृत अकादमी, पंचकूला

Scanned with OKEN Scanner

हरियाणा साहित्य संगम
17 – 19 मार्च, 2017

षाण्मासिकी शोध-पत्रिका
ISSN 2278-0416

हरिप्रभा

वर्षम् १४, अङ्कः ३-४, २०१७

प्रधान संरक्षकः अध्यक्षश्च
माननीय श्री मनोहरलालः
मुख्यमन्त्री, हरियाणा

वरिष्ठ उपाध्यक्षा
श्रीमती कविता जैन
मंत्री, सूचना, जनसम्पर्क एवं सांस्कृतिक
कार्य विभाग, हरियाणा।

प्रधानसम्पादकः
श्री राजेश कुमार खुल्लरः, भा.प्र.से.
अतिरिक्त मुख्यसचिवः।
सूचना-जनसम्पर्क, भाषा एवं कार्यकारी उपाध्यक्षश्च,
अकादमी

प्रबन्धसम्पादकः
श्री डी.एल. सत्यप्रकाशः, भा.प्र.से.
महानिदेशकः,
सूचना-जनसम्पर्क एवं सांस्कृतिक-कार्यविभागः,
अकादमी

मुख्यसम्पादकः
डॉ. सोमेश्वरदत्तः
निदेशकः,
हरियाणा संस्कृत अकादमी

उपसम्पादिका
डॉ. प्रतिभा वर्मा

परामर्शकाः
प्रो. देवप्रकाशः उपाध्यायः, (सेवानिवृत्त आचार्य) पञ्जाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

डॉ. मथुरादत्त पाण्डेयः, (सेवानिवृत्त प्राचार्य) सैक्टर-15, पञ्चकूला।

प्रो. रणवीरः सिंहः, (सेवानिवृत्त आचार्य) कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

प्रो. जगदीश प्रसाद सेमवालः, (सेवानिवृत्त आचार्य) विश्वेश्वरानन्द वैदिक-शोध अनुसंधान-केन्द्र, होशियारपुर।

प्रो. सुरेन्द्र मोहनः मिश्रः, (आचार्य) कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

आचार्य महावीर प्रसादः, 317, सैक्टर- 7, यू.ई., करनाल।

डॉ. श्रेयांशः द्विवेदी, उपाध्यक्षः, हरियाणा संस्कृत अकादमी, पञ्चकूला।

सम्पर्कः
निदेशकः,
हरियाणा संस्कृत अकादमी
अकादमी भवनम्, पी-१५, सैक्टर- १४,
पञ्चकूला (हरियाणा)
दूरभाषः- ०१७२-२५७०१७९
अणुसङ्केतः- *hariprabhaskt@gmail.com*

ग्राहकतायाः कृते
प्रत्यङ्क मूल्यम् - दशरूप्यकाणि
वार्षिकशुल्कम् - विंशत्युत्तरशतं रूप्यकाणि

Scanned with OKEN Scanner

प्राक्कथनम्

स्वाध्यायशीलान् निजकर्मदक्षान्, ज्ञानेऽनुरक्तान्मुनिवृन्दसिद्धान्।
वेदादिशास्त्रेषु कृतप्रयत्नान्, साधारणे श्रेष्ठजनान् नमामः॥१॥

आचार्यवृन्दान् ननु याजकाँश्च, देवानृषींश्चापि समर्थभक्तान्।
सदार्चने पूजनकर्मदक्षान्, साधारणे सर्वजनान् नमामः॥२॥

योगासनं ह्याचरिताऽजनाँश्च, क्रीडारताक्रीडकबालयूनः।
सर्वाऽजनान् भावयुताँश्चदिव्यान्, साधारणे कर्मरतान् नमामः॥३॥

नित्यं कृषेः कर्मणि सम्प्रवृत्तान्, गोसेवकान्धर्मपरायणाँश्च।
धान्यप्रदाने सततं विलग्नान्, साधारणे धर्मरतान् नमामः॥४॥

भृङ्गान्बकाँश्चातकलावगृधान्, कीराँस्तथाकुक्कुटकौशिकाँश्च।
चाषाँस्तथा सारससारिकाश्च, साधारणे जीवगणान् नमामः॥५॥

अश्वानजाँश्चैवतरक्षुगाश्च, शाखामृगाँश्चाथ वराहमेषान्।
गोमायुगोधागजगण्डकाँश्च, साधारणे जीवगणान् नमामः॥६॥

श्यामाकधान्यद्विदलान् यवाँश्च, गोधूमब्रीहीः चणकाँश्तिलाँश्च।
अन्नाढकीकोदवसर्षपाँश्च, साधारणे शस्यबलं नमामः॥७॥

अश्वत्थनीपार्कपलाशबिल्वान्, एरण्डजम्बूपनसान् रसालान्।
धत्तूरतालान् खदिराँस्तथैव, साधारणे वृक्षबलं नमामः॥८॥

करप्रदातृन् ननु कर्मवीरान्, ज्ञानप्रदातृन् ननु शिक्षकाँश्च
देशस्य रक्षाव्रतिनो जनाँश्च, साधारणे सर्वजनान् नमामः॥९॥

राज्यस्थितान् वै ननु राज्यपालान्, मुख्याँस्तथामात्यपदेधिरूढान्।
प्रजाहितं चिन्तनमस्ति येषाम्, साधारणे श्रेष्ठजनान् नमामः॥१०॥

राष्ट्रस्य रक्षार्थपरायणाय, सुभारते राष्ट्रपति प्रियाय।
प्रधानमन्त्रिप्रवराय नूनं, साधारणो नम्रतरा नमामः॥११॥

सन्दर्भाः

५. भृङ्ग-भौंरा, बकः-बगुली, लावः-बटेर, कीरः-तोता, कौशिकः-उल्लू, चाषः-नीलकण्ठः, सारिका-मैना
६. तरक्षुः-तेंदुआ, गोमायुः-गीदड़
७. आढकी-अरहर
८. नीपः-कदम्बः

डॉ. श्रेयांश द्विवेदी,
उपाध्यक्षः
हरियाणा संस्कृत अकादमी
पञ्चकूला।

अनुक्रमणिका

		पृष्ठसंख्या
प्राक्कथनम्		२
सम्पादकीयम्		६
वेदार्थप्रतिपादने आचार्ययास्कस्य पृष्ठभूमिः	डॉ. द्वारिका नाथ त्रिपाठी	८
अद्वैतवेदान्तदर्शने बन्धनं मोक्षश्च	ऋचा	१५
सांख्ययोगशास्त्रे मोक्षविमर्शः	श्री गौतम कुमार	१९
पुराणेषु वास्तुशास्त्रस्य स्वरूपम्	श्री अनूपमैठानी	२७
पुराणेषु सृष्टिविज्ञानम्	श्री गोपी शर्मा	३१
वाल्मीकिरामायणे आख्यातपदानाम् आवृत्तिः	श्री राजीव कुमार बेरा	३८
महाभारतस्य मौसलपर्व	मञ्जू कुमारी	४६
महाभारते वनसंरक्षणम्	श्री सुभाष चन्द्रः	५२
कर्मणि एवाधिकारस्ते इत्यत्र श्रीमद्भगवद्गीता	डॉ. अक्षय कुमार मिश्र,	५६
शैक्षिकदृष्ट्याविविधप्रकारात्मकमाधुनिकीकरणम्	श्री सुनील कुमार	६१
भारतीयलोकतन्त्रराज्यम् ऐतिहासिककाव्यस्य भाषावैशिष्ट्यम्	श्री धर्मेन्द्रः	६६
व्याकरणस्य दर्शनशास्त्रत्वम्	डॉ. कपिलदेव हरेकृष्ण शास्त्री	७०
पूर्वत्रासिद्धम् इत्यत्रासिद्धत्वविचारः	श्री लेखराम दन्नाना	७४
समर्थः पदविधिरिति शास्त्रविमर्शः	श्रीमन्त-चटर्जी	८२
ध्रुवमपायेऽपादानम्	डॉ. जगदीशभट्टः	८७

Scanned with OKEN Scanner

सञ्ज्ञोभयगतिः	डॉ. नवीनकुमार मिश्रः	९०
नैषधमहाकाव्ये आश्रम-व्यवस्थायाः निरूपणम्	श्री सन्दीप कुमार	९७
क्षेमेन्द्रस्य साहित्यिकं योगदानम्	प्रो. राम सुमेर यादव	१००
मौर्यराज्यविवेचनम्	श्री शीतलाप्रसादशुक्लः	१०८
नारायणीयकाव्यगतानां वस्त्वलङ्कारसादीनामनुमेयत्वम्	डॉ. नारायणन् ई.आर्	११३
एको रसःकरूण एव	डॉ. शान्तिलालः सालवी	१२१
श्रीमहागणपतिसहस्रनामनिर्वचन-कारिका	डॉ. जगदीश प्रसाद सेमवाल	१२५
रामराज्यादर्शनिदर्शनम्	आचार्य डॉ. रामेश्वरप्रसाद गुप्तः	१३०
आधुनिकपरिप्रेक्ष्ये संस्कृतभाषायाः वैशिष्ट्यम्	श्री भूपेन्द्रः	१३४
स्वातन्त्र्यवीरसावरकरशतकम्	आचार्य महावीरप्रसाद शर्मा	१३७
राजर्षि गुरु गोविन्द- सिंहः	डॉ. जगदीश प्रसाद शर्मा	१४०
संस्कृतसाहित्ये वृक्षारोपणस्य महत्वम्	डॉ. मंजुनाथ एस. जी	१४४
गुणमन्दारमञ्जरीगद्यकाव्य रसतत्त्वविवेचनम्	डॉ. प्रेम सिंहसिकरवारः	१४७
प्रज्ञापरमिताया गौडपादकारिकायां च निरूपितः अजातिवादः	शिक्षा सेमवालः	१५२
होलिकासप्तकम्	डॉ. श्रेयांश द्विवेदी	१५९

सञ्ज्ञोभयगतिः

*डॉ. नवीनकुमारमिश्रः

तत्र नामकरण-सञ्ज्ञा उताहो कस्यापि वस्तुनः व्यक्तेर्वा नामकरणं लिङ्गं चिह्नं मानं परिचायकं वा यत्पदं तत्पदं सञ्ज्ञात्वेन परिभाष्यते। लोके तावत् नानाविधानि वस्तूनि द्रव्याणि च सन्ति। तेषां तेषां वस्तूनां द्रव्याणां वा लिङ्गपरिचायकानि पदानि तानि तानि सञ्ज्ञानि स्युरिति। **कृत्रिमाऽकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्ययः।** **इति** स्वीकारे पाणिनिप्रोक्त संख्यासंज्ञाग्रहणवेलायां कृत्रिमबह्वादीनां गणपठितानामेव शब्दानां संख्यात्वे लोकप्रसिद्धानां एकद्वयादीनामग्रहणे **संख्याया अतिशदन्तायाः कन् इति** शास्त्रं कृत्रिमेषु त्यन्तशदन्तयोरलाभे निषेधोऽस्य व्यर्थः।

नन्विह व्याकरणशास्त्रे वृद्धिपदेन वृद्धयर्थस्य वृद्धपदेन वयोवाचवृद्धजनस्य गुणपदेन सत्वादीनां निष्ठापदेन तद्गतनिष्ठादीनां सखीपदेन सख्यर्थालाभः, नदीपदेन जलप्रवाहगङ्गादीनामग्रहणात् संख्यापदेन एकद्वयादीनामलाभः अभ्यासपदेन अभ्यासार्थालाभः अधिकरणपदेन सप्तम्यधिकरणार्थविरहः धातुपदेन अयादीनामर्थालाभः गुरुपदेन गुरुपदार्थाविरहत्वात् सन्देहो जायते। कथमस्य सन्देहस्य परिहारः? **सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे (म.भा.वा.१)** अतो उच्यते सञ्ज्ञा द्विधा लौकिक्यलौकिकी च। यथा लोके गौः, अश्वः, हस्ती, मृगः, बालकः, घटः, पटः इत्यादीनां पदार्थलाभाय सङ्केतजन्या प्रत्येकपदार्थानां तत्पदेन सह सञ्ज्ञा सङ्केतिता भवती। तद्वदेव शास्त्रप्रवृत्यर्थमिह व्याकरणशास्त्रेऽपि वृद्ध्यादीनां पदानां लोकोत्तर-सञ्ज्ञार्थलाभरिति ज्ञेयम्। तर्हि शास्त्रेऽपि कानिचनसूत्रेषु लौकिकानामेव अर्थभानम्। तद्यथा- **नदीभिश्चेति सूत्रे** जलप्रवाहगङ्गादीनां ग्रहणं **कारकेति शास्त्रे** अन्वर्थसञ्ज्ञालाभः, **अदर्शनं लोप** अत्र लोपपदेन लोपपदार्थलाभः। किन्तु नायं सार्वत्रिकः **यूस्त्रयाख्यौ नदीति सूत्रे** नित्यस्त्रीलिङ्घटितोरीदूतोर्ग्रहणे किं तत्र मानम्?

उभयगतिरिह भवति। परि.भा. शे.-०९

इह व्याकरणशास्त्रे संख्यासञ्ज्ञा उभयोः कृत्रिमाऽकृत्रिमयोः द्वयोः गतिः ज्ञानं बोधः भवति। आदौ संख्यापदेन **बहुगणवतुडति संख्या (पा.सू.१.१.२३)** बह्वादीनां तदनन्तरं लोकप्रसिद्धानामेकद्वयादीनां सामान्या अकृत्रिमा सञ्ज्ञा। बह्वादीनां तु कृत्रिमा सञ्ज्ञा विधीयते। किन्तु नानार्थस्थले शङ्का तदवस्थापन्ना एव कथं परिहर्तव्येयं? नानार्थेषु कथं लक्ष्यानुसारिशास्त्रप्रवृत्तिरिति चेदाह हरिः स्वग्रन्थे वाक्यपदीये। तर्हि-

संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता।
अर्थः प्रकरणं लिङ्गं शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः॥
सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः।

---

* संविदाध्यापकः, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मा.वि.) के.जे.सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम् मुम्बईपरिसरः, विद्याविहारः, मुम्बई।

शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः॥ वा. प. २/३१७-१८

यश्च निम्बं परशुना यश्चैनं मधुसर्पिषा।
यश्चैनं गन्धमाल्याद्यैः सर्वस्य कटुरेव सः॥

तत्र संयोगो नाम प्रसिद्धः सम्बन्धः कथमित्युदाहरणे प्रस्फुटति। विप्रयोगस्यार्थः तस्य प्रसिद्धसम्बन्धस्य विच्छेदः, साहचर्यं सादृश्यम्, भाष्यानवगत्या सहचरणार्थे क्षतिरिति। अपरे काव्यप्रकाशकारः श्रीमम्मटमहोदयः अवीवचत् साहचर्यं सहचरणम् एकत्र कार्ये प्रसिद्धं परस्परं सापेक्षत्वम्। तच्च भाष्यविरोधादयुक्तमेव। सहचरस्य भावः साहचर्यम्, सहचरणञ्च प्रायेण सदृशयोः सदृशानामेव वा दृष्टमिति साहचर्यपदेन साहचर्यमुच्यते। प्रकरणादिना बोधेऽपि तात्पर्यग्राहकमुक्तम्। विरोध एव विरोधिता। अर्थः पदार्थावगतिः अत्रार्थपदेन नान्यथा साध्यं प्रयोजनमपि बोध्यम्। **प्रकरणं** नाम वक्तृश्रोतृबुद्धिः। संयोगातिरिक्तसम्बन्धेनेतरव्यावर्त्तको धर्मविशेषः **लिङ्गं**शब्दः। एकशक्यगतः साक्षाच्छब्दवेद्योदर्मविशेषरिति यावत्। नानर्थकपदस्येकार्थमात्रवाचकपदसमभिव्यहारः सन्निधिः। सामर्थ्यं कारणत्वम् तच्च द्विविधं शब्दार्थगतञ्च। औचिती नाम परस्परान्वयप्रयोजकधर्मवती योग्यता। यथा- पयसा सिञ्चतीति योग्यम् न तु वह्निना सिञ्चति। ग्रामो देशः। सर्वाधारः कालः क्षणप्रभृतिः संवत्सरपर्यन्तम्। व्यक्तिः स्त्रीपुंक्लीवत्वानि। स्वरः उदात्तादिभेदेन त्रिधा अभिगम्यते। आदिपदेन षत्वसत्वणत्वनत्वादीनि बोध्यानि।

संयोगादयः नानार्थकानां शब्दानां अनवच्छेदे सन्देहे अर्थग्रहणे निर्णायकाः भवन्ति। तद्यथा- इह संयोगविप्रयोगयोरुदाहरणं **सवत्सा धेनुः** अत्र धेनुशब्दस्य नवप्रसूतामात्रवाचकत्वेनोक्तम्। यदाऽयं धेनुशब्दो नवप्रसूतगवीमात्रवाचकं **अवत्साधेनु**पदेन निषेधस्यप्राप्तिपूर्वकत्वात् प्राप्तेश्च गव्येव सम्भवात् अवत्सापदेनापि गौरेवोच्यते न तु पुंगौः, सशङ्खचक्रो हरिः असशङ्खचक्रो हरिरित्युदाहरणान्तरम्। साहचर्य-**रामलक्ष्मणाविति** सदृशयोरेव सहचरणस्य दृष्टत्वात् लक्षणादिना साहचर्यशब्दस्य सादृश्यार्थकत्वम्। इह दशरथापत्यत्वरूपसादृश्म्। विरोधः-**रामार्जुनगतिस्तयोरि**त्यत्र परस्परं विरोधेनोभयोर्नियमनं तेन परशुरामकार्तवीर्ययोर्बोधः। **अञ्जलिनाजुहोति**तत्पदानामर्थवशातञ्जलिशब्दो विभिन्नकारकाञ्जलीन् बोधयति। **ज्ञानरूपप्रकरणम्**। यथा- **सैन्धवमानय**, इति वाक्ये अशनप्रकरणे निहिते सति लवणप्रसक्तिः यात्राप्रकरणे चाश्वप्रसक्तिः **संख्याया अतिशदन्तायाः कन्** इति विहिते बह्वादीषु त्यन्तशदन्तयोरलाभे तदितरेषु अकृत्रिमेषु तल्लाभे बह्वादिशास्त्रज्ञानरूपप्रकरणे बह्वादीनां संख्यासंज्ञा कन्शास्त्रज्ञानप्रकरणे लोकप्रसिद्धानामेकद्व्यादीनां ग्रहणम्। प्रकरणम् प्रति तात्पर्यनियमनं कारणम्। **अक्ताः शर्कराः** यद्यपि अक्ताः शब्देनाञ्जनविशिष्टा इति सामान्यार्थ एव ज्ञायते तेन तैल-घृतोभयाञ्जनपरकत्वं तथापि **तेजो वै घृतम्** इत्यनेन घृतस्तुतिरूपप्रमाणेन अक्ता इत्यस्य घृतसाधनकाञ्जनापरकत्वं बोध्यते। **रामः जामदग्न्यः**-अत्र भृगुपुत्रार्थकसमानाधिकरणजामदग्न्यपदसन्निधानात् **रामशब्दः** परशुरामरूपार्थं बोधयति। **अभिरूपतरा कन्या**-कन्या तु सुन्दरायैव वराय

प्रदीयतेऽतः अभिरूपाय कन्या देया अभिरूपशब्दसामर्थ्यात् अभिरूपतर इति बोधः। **परशुना निम्बं छिनत्ति, मधुसर्पिषा सिञ्चति, गन्धमाल्याद्यैः पूजयति-** छेदनसेचनपूजनक्रियान्वयित्वेषु त्रिष्वपिस्थलेषु कारणकारकत्वेन योग्यतावशादेव तत्तदर्थाः प्रतीयन्ते। **परमेश्वरः शोभते-** अत्र शब्दो राजधा- नीरूपदेशार्थे प्रयुक्तस्तेन परमेश्वरशब्दो राज्ञो बोधकम् न तु ईश्वरपर्यायः। **चित्रभानुर्भातीति** वाक्ये रात्रौ तु अग्निरूपार्थबोधः, दिवसे सूर्यरूपार्थप्रतीतिः। **मित्रो मित्रं वा भाति-**पुंसि सूर्यरूपार्थः क्लीबे तु सुहृदिति। **स्थूलपृषतीमनड्वाहीमालभेत**-यदि स्थूलपृषतीशब्द अन्तोदात्तः- स्थूला चासौ पृषती च तत्पुरुषसमासः, यदि स्थूलपदमात्रम् अन्तोदात्तः तर्हि स्थूलानि पृषनिति यस्याः सेति बहुव्रीहिरिति बोधः।

संयोगः विप्रयोगसाहचर्यादिवत् प्रकरणमपि शब्दस्यानेकार्थकस्यार्थविशेषे तात्पर्य-ग्राहकमङ्गीकृतम्। तथा च बहुगुणवतुडति संख्या १/१/२३ बहु गण वतु इत्येते संख्यासंज्ञा भवन्ति। संख्यायतेऽनया अत्र बहुगणशब्दौ प्रातिपदिके, वतुडती प्रत्ययौ संख्यासंज्ञा विहिता। **संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्** बहुकृत्वः, **संख्याया विधार्थे धा** बहुधा, **संख्यायाः अतिशदन्तायाः कन्** बहुकः, गणकृत्वः गणधा, गणकः, गणशः **यत्तदेभ्यः परिमाणे वतुप्** तावत्, तावत्कृत्वः, तावतद्धा,- तावत्कः, तावच्छः, कतिकृत्वः, कतिधा, कतिकः, कतिशः। बहुगणशब्दयोः वैपुल्ये सङ्घे च प्रकृतौ तु संख्यावाचकस्यैव ग्रहणं दरिदृश्यते अस्यान्वर्थसंज्ञावि-धानात्। यद्यपि संज्ञाविधौ प्रत्ययग्रहणे तदन्तग्रहणं नास्ति तथापि वत्वन्तस्य डत्यन्तस्य च फलाभावे तदन्तयोरेव संज्ञा। तदन्तानामेव अर्थात् भूर्यादीनां व्यावत्यर्थम् नियम्यते। अर्धपूर्वपदश्च पूरणप्रत्ययान्तस्य संख्यासंज्ञा भवति। यथा अर्धपञ्चशूर्पः अर्धं पञ्चमं येशाम् इति बहुव्रीहौ अर्धपञ्चमैः शूर्पैः क्रीतः **तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे चेत्यादिना** समासः नान्येन शास्त्रेणेति बह्वादीनां संख्या संज्ञा कृतेति ज्ञानरूपस्य प्रकरणस्येह विद्यमानत्वात् संख्यापदेन बह्वादीनामेव ग्रहणं स्यान्नतु एकद्वयादीनाम्, प्रकरणस्यार्थविशेषे तात्पर्यग्राहकत्वनियमजन्यः कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्यय इति न्यायोऽप्यत्रानुकूल इति चेन्न 'उभयगतिरिह भवति' इति परिभाषास्वीकारात्।

संयोगादयः नानार्थकेषु शब्देषु शब्दार्थस्यानवच्छेदे सन्देहे अनिश्चये, अत्र कतमोऽर्थः स्वीकार्यः? तत्र तात्पर्यनिर्णये अभिधानियामके च विशेषस्मृतिरेव कारणम्। किं तत्तात्पर्यम्- एतद्वाक्यं पदं वा एतदर्थबोधायोच्चारणीयमितीश्वरेच्छा तात्पर्यम्। वैयाकरणनये सति तात्पर्ये सर्वे सर्वार्थ वाचकाः सत्वेऽपि घटशब्दोच्चारण न हि पटप्रत्ययः। भाष्यसिद्धान्तस्तु योगीनां मते इति भूषणे कौण्डभट्टः अकथयत्। अर्थद्वयस्थले तात्पर्यम् एतत्पदं वाक्यं वा एतदर्थप्रत्ययाय मयोच्चार्यते इति प्रयोक्तुरिच्छारूपम्। तात्पर्यनियामकञ्च लोके प्रकरणादिकमेव। अत एव पयो आनय, सैन्धव-मानय इत्यादिस्थले प्रकरणज्ञानं बोधे हेतुः। श्रुतौ ईश्वरेच्छातात्पर्यादर्थबोधः। एवञ्च सामान्यतया संख्याप्रदेशेषु बह्वादीनां लोकप्रसिद्धैकद्वयादीनां बोधेऽपि शास्त्रे बह्वादीनां संख्यासंज्ञा समाश्रिता इति

ज्ञानरूप-प्रक[illegible]स्वाकृततात्पर्यनिर्णये तद्विषयताबोधेऽप्रामाण्यबुद्ध्युदयेन तस्यानुपयोगाद्बह्वादीनामेवेति नियमोपपत्तिरिति ज्ञेयम्। प्रकरणमेव तात्पर्यनिर्णयजनकं, तच्च ज्ञानरूपमेव। लोके सैन्धवमानयेत्यादौ भोजनादिविषयकं ज्ञानं तत्। प्रकृतशास्त्रे तु सङ्केतविषयकं ज्ञानं तत्। अत एव संख्यासूत्रभाष्ये जानाति त्वसौ बह्वादीनां संख्यासंज्ञेति। अत एव अस्मादर्थद्वयाविषयकबोधे जायते। तात्पर्यं क्वेति तु न जानीम इति लोकानुभवः।

संख्याया अतिशदन्तायाः कन् ५.१.२२ इति शास्त्रेण त्यन्तशदन्तभिनसंख्यावाचकशब्देभ्यः कन् प्रत्ययो विधीयते। पञ्चकं, षट्कं, सप्तकमित्यादीन्युदाहरणानि। त्यन्तशदन्तसंख्यावाचकाच्छब्दात् कन्प्रत्ययवारणायात्र सूत्रे अतिशदन्ताया इति निषेधः कृतः। कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्यय इति न्याययात् यदि तत्र संख्यापदेन कृत्रिमस्यैव संख्यावाचकस्य ग्रहणम्, तदा कृत्रिमेषु संख्यावाचकशब्देषु त्यन्तशदन्तसंख्यावाचकयोरेवाभावेन ततः कन्प्रत्ययस्यैवाप्राप्तौ कृत्रिमसंख्यावाचकेभ्यो बहुगणवतुडत्यादिप्रत्ययान्तेभ्यः कन्प्त्ययवारणाय कृतः अतिशदन्ताया इति निषेधो व्यर्थः।

स च व्यर्थीभूय **उभयगतिरिह भवति** इति परिभाषाया आवश्यकतां ज्ञापयति। ज्ञापिते संख्याया अतिशदन्तायाः कन् इति सूत्रे संख्यापदेन कृत्रिमाऽकृत्रिमयोरुभयोः ग्रहणात् अकृत्रिमसंख्यावाचकाभ्यां विशति-पञ्चाशतच्छब्दाभ्यां तेन सूत्रेण कन् प्रत्ययस्य प्राप्तौ निषेधाय प्रकृतसूत्रे अतिशदन्तायाः कन् इति निषेधः स्वांशे चरितार्थः।

कृत्रिमाकृत्रिमयोः ग्रहणे सन्देहे कृत्रिमन्यायप्रभावात् संख्यापदेन बह्वादीनामेव ग्रहणं स्यादिति प्रथमपक्षे संख्यासंज्ञायां ज्ञानरूपं प्रकरणमेव कृत्रिमन्यायप्रवृत्तौ बीजम्। एवम्प्रकारेण सर्वे सर्वार्थवाचकाः इत्यभियुक्तव्यहारात् सर्वेषां शब्दानां सर्वेष्वप्यर्थेषु शक्तिः। तथापि यथा हर्यादिपदानां नानार्थकत्वेऽपि तात्पर्यवशात् तत्तदर्थविषयकबोधजनकत्वमेव, न तु सर्वार्थबोधविषयकजनकत्वम्। एवञ्च बह्वादिष्वपि संख्यादिपदानां बोधकतारूपायाश्शक्तेस्सत्वेन शब्दशास्त्रे अनेन शब्देनेते गृह्यन्ते इति नियमार्थत्वमेव कृत्रिमाऽकृत्रिमन्यायप्रवृत्तौ बीजम्, न तु प्रकरणमिति कैयटोक्तिः।

वस्तुतः सर्वे सर्वार्थवाचकाः परावाक्साक्षात्कारकारवतां योगीमहर्षीणामेव सर्वेषां शब्दानां सर्वेष्वप्यर्थेषु शक्तेः भानं भवति। सामान्यव्युत्पन्नानामस्मदादीनां तादृशसर्वशब्दतदर्थविषयकज्ञानस्याभावात् सर्वे सर्वार्थवाचका इति प्रवादमाश्रित्य व्याकरणशास्त्रेऽनेन शब्देन लोकप्रसिद्धानां एकद्वयादीनां संख्यावाचकानामपि ग्रहणे कृत्रिमन्यायप्रवृत्तौ बीजम् कैयटोक्तिः नोचिता।

ननु विशिष्य सर्वशब्दार्थज्ञानायास्मदादीनामशक्यत्वेऽपि सामान्यतः पदार्थत्वादीनां तत्तज्ज्ञानमस्मदादीनामपि वर्त्तते इति कृत्वा तादृशसामान्यज्ञानद्वारा शास्त्रेऽनेन शब्देन एते एव गृह्यन्ते इति कैयटोक्तिः युक्ता एव इति चेन्न। विशिष्य सर्वशब्दार्थज्ञानायास्मदादीनामशक्यत्वात् सामान्यज्ञानस्यार्थबोधानुपयुक्त्वादयुक्ता कैयटोक्तिः।

किञ्च संख्याया अतिशदन्ताया शास्त्रे यथावसरं यथाकार्यं व्याख्यानात् कृत्रिमाकृत्रिमयोरुभयो-

ग्रहणं भवति। एषा परिभाषा लौकिकालौकिकोभयतात्पर्यं शास्त्रेऽस्तीति बोधयति। तेन संख्यापदेन एकद्वित्रिप्रभृतीनां लौकिकसंख्यावाचकपदानां बहुगणादीनाञ्च शास्त्रीयसंख्यावाचकपदानां ग्रहणं सिद्ध्यति। अतः संख्याया विधार्थे धा ५/३/४२ इत्यादिना उभयविधिभ्यो धाप्रत्यये एकधा द्विधा बहुधेत्यादि सिद्धम्। अत्र ज्ञापकः संख्याया अतिशदन्तायाः कन् ५/१/२२ इति सूत्रे तिशदन्तपर्युदासः। अन्यथा कृत्रिमायाः संख्याया त्यन्तशदन्तत्वाभावात्पर्युदासो व्यर्थः स्यात्। परिभाषायां स्वीकृतायां सप्ततिचत्वारिंशदित्यादेरपि संख्यापदेन ग्रहणात् साप्ततिकः चात्वारिंशत्कः इत्यादौ पञ्चकः इत्यादाविव प्राप्तस्य कनो वारणाय पर्युदासः सार्थकः। तेन 'कर्त्तरि कर्मव्यतिहारे' १/३/१४ इत्यत्र कर्मपदेन क्रियायाः ग्रहणम् न तु कृत्रिमस्य कर्तुरीप्सिततमं कर्म १/४/७९ इति विहितस्य, परन्तु कर्मणि द्वितीया २/३/२ इत्यादौ च कृत्रिमायाः कर्मसंज्ञायाःग्रहणम्।

'शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे' ३/१/१७ इत्यत्र करणपदेन क्रिया गृह्यते 'कर्तृकरणयोस्तृतीया' २/३/१८ इत्यत्र तु साधकतमस्य ग्रहणम्, विप्रतिषिद्धं चानधिकरणवाचि २/४/१३ इत्यत्राधिकरणपदं द्रव्याथकं सप्तम्यधिकरणे च २/३/३७ इत्यत्र तु कृत्रिमस्याधिकरणस्याधारोऽधिकरणम् १/४/४५ इति विहितस्य ग्रहणम्। पूरणगुणसुहितार्थसदव्यतव्य० २/२/११ इत्यत्र गुणपदेन सत्वे निविशतेऽपैति इति।

लक्षणलक्षितोऽकृत्रिमो गुणो गृह्यते अथवा उपैत्यन्यज्जहात्यन्यद्दृष्टो द्रव्यान्तरेष्वपि वाचकः सर्वलिङ्गानां द्रव्यादन्यो गुणः स्मृतः। (महाभाष्यम् ४/१/४४) इति गुणलक्षणलक्षितोऽकृत्रिमो गुणो गृह्यते। नत्वदेङ्गुणः इति कृत्रिमः, अर्थग्रहणात्, नापि संख्या, क्रोशशतयोजनशतयोरुपसंख्यानम् (५/१/७४ वा. १) इति वार्त्तिके क्रोशशतेत्यादि निर्देशात्। नदीभिश्च २/१/२० इत्यत्र नदीपदेन स्वरूपस्य न ग्रहणम् शब्दसंज्ञात्वात्, नदीसंज्ञकानां गौर्यादिशब्दनाञ्च न ग्रहणम्, बहुवचननिर्देशात्। किन्त्वर्थस्य ग्रहणम्। नवार्थस्य समासः सम्भवति। अतस्तद्वाचिनामयं समासः। तत्रापि न केवलं नदीविशेषवाचका गोदावर्यादिशब्दा एव गृह्यन्ते किन्तु नदीसामान्यवाचका अपि, तेन सप्तगोदावरम् पञ्चनदं सप्तसरितमित्यादि सिद्धम्। नदीपौर्णमासी० ५/४/११० इत्यत्र स्वरूपस्यैव ग्रहणं न संज्ञायाः, पौर्णमास्यादीनां पृथग्ग्रहणात्। मिदेर्गुणः ७/३/८२ इत्यादौ च कृत्रिमस्यैव ग्रहणमिति न्यायात्। इत्थं कुत्रोभयगतिः, कुत्र चाकृत्रिमस्य ग्रहणं क्व च कृत्रिमस्यैवेत्यत्र लक्ष्यानुसारि व्याख्यानमेव शरणम्। अत एवाम्रेडितशब्देन कृत्रिमस्य 'तस्य परमाम्रेडितम्' ७/१/२ इति विहितस्यैव ग्रहणम्, न तु आम्रेडितं द्विस्त्रिर्चुष्टमिति कोशोक्तस्य लौकिकस्याकृत्रिमस्य।

बहुगुणवतुडति संख्या १/१/२३ इति संख्यासंज्ञासूत्रस्य भाष्ये परिभाषेयं स्पष्टा। तथाहि- अक्रियमाणे हि संख्याग्रहणे एकादिकायाः संख्यायाः संख्येत्येष संप्रत्ययो न स्यात्। किं कारणम् कृत्रिमत्वात् बह्वादीनां कृत्रिमा संज्ञा। कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसंप्रत्ययो भवति। यथैव तर्ह्यर्थात् प्रकरणाद्वा लोके कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्ययो भवत्येवमिहापि प्राप्नोति। जानात्यसौ

बह्वादीनामियं संज्ञा करोति। न यथा लोके तथा व्याकरणे। उभयगतिः पुनरिह भवति। 'कर्मणि द्वितीया' इति कृत्रिमस्य ग्रहणं कर्त्तरि कर्मण्यव्यतिहारे इत्यकृत्रिमस्य।

अथवाचार्यप्रवृत्तिर्ज्ञापयति भवत्येकादिकायाः संख्यायाः संख्याप्रदेशेषु संख्यासंप्रत्यय इतियदयं संख्याया अतिशदन्तायाः कन् (५/१/२२) इति तिशदन्तायाः प्रतिषेधं शास्ति। अथवा महतीया संज्ञा क्रियते। संज्ञा नाम यतो न लघीयः। कुत एतत्? लघ्वर्थं हि संज्ञाकरणम्। तत्र महत्याः संज्ञायाः करणम् एतत्प्रयोजनम्। अन्वर्थसंज्ञा यथा विज्ञायेत। संख्यायतेऽनया संख्येति। एकादिकया चापि संख्यायते। इति भाष्ये एतस्याः परिभाषायाः स्पष्टमुल्लेखः प्राप्यते।

शास्त्रे संज्ञाशास्त्राणां शब्देनैत एवेति नियमार्थत्वं कृत्रिमाऽकृत्रि-मन्यायबीजमिति, तन्न। तेषामगृहीतशक्तिग्राहकत्वेन विधित्वे सम्भवति नियमत्वाऽयोगात्। सर्वथाभिधानयुक्तः शब्दो यदा विशिष्टेऽर्थे संव्यवहाराय नियम्यते तदा तथैव प्रतीतिं जनयति नान्यत्र। तस्यायं भावः सर्व-सर्वार्थवाचका इति सिद्धान्तानुसारेण गुणादिपदस्यादेङ्वाचकत्वस्यापि सम्भवात् वृद्धिरादैच् १/१/१, अदेङ्गुण इत्यादि संज्ञाशास्त्राणि नियमर्थानि, मच्छास्त्रे गुणादिशब्देन अदेङादय एव बोधनीयः, न रूपरसादय इति एतन्नियमफलितार्थकथनमेव कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्यय इति न्याय इति। तन्न संज्ञाशास्त्राणामग्रहीतशक्तिज्ञापकत्वे नियमार्थत्वासम्भवात्। न च सर्वे सर्वार्थवाचका इति न्यायेन तेषामदेङादिवाचकत्वस्य सिद्धतया अगृहीतज्ञापकत्वं नास्तीति वाच्यम् सर्वार्थवाचका इति न्यायेन तेषामदेङादिवाचकत्वस्य सिद्धतया अगृहीतज्ञापकत्वं नास्तीति वाच्यम् सर्वार्थवाचकसिद्धान्तस्य स्वीकारो योगिभिरेव कर्त्तुं शक्यते नास्माभिश्चर्मचक्षुभिरिति अस्मद्दृष्ट्या अगृहीतज्ञापकत्वे बाधका-भावात्। विशिष्य सर्वशब्दार्थज्ञानं नास्माभिः कर्त्तुं शक्यते। सामान्यज्ञानं तु न बोधाय कल्पते।

कृत्रिमाकृत्रिमयोः कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्यय इति न्यायस्वीकारे बहुगणवतुडति संख्या १/१/२३ इति सूत्रपठितानामेव संख्यासञ्ज्ञा स्युः तदितरेषां न तु लोकप्रसिद्धैकद्वयादीनाम्। तत्रापि न केवलं नदीविशेषवाचका गोदावर्यादिशब्दा एव गृह्यन्ते किन्तु नदीसामान्यवाचका अपि, तेन सप्तगोदावरम् पञ्चनदं सप्तसरितमित्यादि सिद्धम्। नदीपौर्णमासी० ५/४/११० इत्यत्र स्वरूपस्यैव ग्रहणं न संज्ञायाः, पौर्णमास्यादीनां पृथग्ग्रहणात्। मिदेर्गुणः ७/३/८२ इत्यादौ च कृत्रिमस्यैव ग्रहणमिति न्यायात्। इत्थं कुत्रोभयगतिः, कुत्र चाकृत्रिमस्य ग्रहणं क्व च कृत्रिमस्यैवेत्यत्र लक्ष्यानुसारि व्याख्यानमेव शरणम्। ततः उभयगतिविचारे टीकाकारः वक्ति यत्-

शक्तिग्रहं व्याकरणोपमान-कोशाप्तवाक्याद्व्यवहारतश्च।
वाक्यस्य शेषाद्विवृतेर्वदन्ति, सानिध्यतः सिद्धपदस्य वृद्धाः॥ प.ल.मञ्जू.

एतानि शक्तिग्राहकाणि भवन्ति। न च सर्वे सर्वार्थवाचका इति न्यायेन तेषामदेङादिवाचकत्वस्य सिद्धतया अगृहीतज्ञापकत्वं नास्तीति वाच्यम् सर्वार्थवाचकसिद्धान्तस्य स्वीकारो योगिभिरेव कर्त्तुं शक्यते नास्माभिश्चर्मचक्षुभिरिति अस्मद्दृष्ट्या अगृहीतज्ञापकत्वे बाधकाभावात्। इदं शास्त्रे यथावसरं

यथाकार्यं व्याख्यानात् कृत्रिमाकृत्रिमयोरुभयोर्ग्रहणं भवति। एषा परिभाषा लौकिकालौकिकोभयसाधारणतात्पर्यं शास्त्रेऽस्तीति बोधयति।

सारांश :- संख्यासंज्ञाग्रहणे बह्वादीनामेव स्यान्नत्वेकद्वयादीनां लोकप्रसिद्धानाम्, कृत्रिमाऽकृत्रिमयोः **कृत्रिमे कार्यसम्प्रत्ययः** इति परिभाषापाठात्। व्याकरणशास्त्रेण कृत्रिमस्य संज्ञाविषये एवञ्च अकृत्रिमस्यापि लोकप्रसिद्धस्यापि ग्रहणं सम्भवति। शास्त्रविहितेषु सख्यायासञ्ज्ञासु त्यन्तशदन्तयोरभाव-कन्विधायकंशास्त्रं व्यर्थां प्रतिगच्छन् प्रकृतपरिभाषाया आवश्यकताऽस्तीति शिक्षयति। कर्मणि द्वितीयेत्यत्र कृत्रिमस्य कर्मणः ग्रहणम्, कर्त्तरि कर्मव्यतीहारे अकृत्रिमस्य क्रियायाः ग्रहणम्। संख्यादिषु त्यन्तनिषेधे उभयोर्ग्रहणम्। अतः शास्त्रे शङ्कोत्थापनकाले इदं समाहितम् सर्वत्रशास्त्रे लोके वा लक्ष्यानुसारिव्यवस्थेत्यलम्।

सन्दर्भाः-

१. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी (सञ्ज्ञापरिभाषाप्रकरणम्)
२. कर्त्तरि कर्मव्यतिहारे इति सूत्रभाष्यम्
३. वैयाकरणसिद्धान्तादिग्दर्शनम् परिभाषापटलम्
४. अष्टाध्यायी (प्रथमोऽध्यायः)
५. परिभाषेन्दुशेखरः (गदाटीका)
६. लघुशब्देन्दुशेखरः (सञ्ज्ञापरिभाषाप्रकरणम्)
७. वाक्यपदीयम् पदकाण्डम्
८. नागेशगूढार्थदीपिका पृ.सं. ४३-५२
९. काशिकावृत्तिः १/३/३-१/३/९
१०. परिभाषेन्दुशेखरः (दुर्गाटीकासहितः)
११. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, लक्ष्मीटीकासहितः
१२. अद्भुतधातुरूपावली पृ.सं. १२३-१४३
१३. प्रौढमनोरमा शब्दरत्नसहितम्
१४. परिभाषापाठः
१५. ज्ञापकसङ्ग्रहः
१६. नारायणमिश्रकृतपरिभाषाप्रकाशः
१७. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी (मूलम्) पृष्ठ सं. १३
१८. लौकिकन्यायकोषः पर्जन्यवन्न्यायः
१९. किरणावली अनुमानखण्डः
२०. परमलघुमञ्जूषा
२१. बहुगणवतुडतिसूत्रभाष्यम्

*****

पंजीयन संख्या–एच.ए.आर., एस.ए.एन 17577/2005

अन्ताराष्ट्रिया मूल्याङ्किता मासिकी शोधपत्रिका

संस्कृतजगतो विशेषतश्च उत्तरभारतस्य तत्रापि हरियाणाप्रदेशस्य
प्रसिद्धानां विदुषां सर्जनशीलानां साधकानां नवोदितानां
प्रतिभायुतानां कवीनाञ्च विचितोत्कृष्टलेखानां प्रस्तुतिः।

हरिप्रभा

देववाण्यां संस्कृतभाषायाः सत्साहित्यस्य च समभ्युदयार्थं समुन्नयनार्थं
प्रयासरता मासिकी शोधपत्रिकेयं हरियाणा–संस्कृत–अकादम्या नैरन्तर्येण प्रकाश्य-
या मानव–संवेदनानां शोध–निबन्धानाम् उदात्तजीवनमूल्यानाञ्च
संगमस्वरूपे प्रतिवर्गस्य पाठकानां मनोरञ्जनार्थं तेषां
ज्ञानविवर्धनाय च पठनीया संग्रहणीया च विद्यते।

प्रत्यङ्कं मूल्यम् (१०) दशरुप्यकाणि
वार्षिकं शुल्कम् (१२०) विंशत्युत्तरशतम् रुप्यकाणि

सविनयं सादरमनुरोधोऽस्ति यत् हरिप्रभायाः पत्रिकायाः वार्षिक–सदस्या भवेयुः।
सम्यग् बोधाय सम्पर्कं साधयेयुः।

निदेशकः

हरियाणा संस्कृत अकादमी
अकादमी भवन, पी–16, सैक्टर–14
पंचकूला (हरियाणा) 134112
दूरभाष एवं फैक्स संख्या - 0172.2570979
अणुसङ्केतः - hariprabhaskt@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

विक्रमाब्दः 2074 खीस्ताब्दः 2017 ISSN No. 2457-0729

[illegible]

वाग्वै ब्रह्म

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च वार्षिकी राष्ट्रियशोधपत्रिका)

सृष्टौ या सर्गरूपा जगदवनविधौ पालिनी या च रौद्री,
संहारे चापि यस्या जगदिदमखिलं क्रीडनं या पराख्या।
पश्यन्ती मध्यमाऽथो तदनु भगवती वैखरीवर्णरूपा-
साऽस्मद्वाचं प्रसन्ना विधिहरिगिरिशाराधिता लङ्करोतु॥

व्याकरणविभागः

राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)

(मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयभारतसर्वकाराधीनम्)

क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्

विद्याविहारः, मुम्बई-77

विक्रमाब्दः 2074 खीस्ताब्दः 2017 ISSN No. 2457-0729
प्रथमोऽङ्कः

वाग्वै ब्रह्म

(सन्दर्भिता मूल्याङ्किता च वार्षिकी राष्ट्रियशोधपत्रिका)

सृष्टौ या सर्गरूपा जगदवनविधौ पालिनी या च रौद्री,
संहारे चापि यस्या जगदिदमखिलं क्रीडनं या पराख्या।
पश्यन्ती मध्यमाऽथो तदनु भगवती वैखरीवर्णरूपा-
साऽस्मद्वाचं प्रसन्ना विधिहरिगिरिशाराधिताऽलङ्करोतु।।

व्याकरणविभागः
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालयः)
(मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयभारतसर्वकाराधीनम्)
क. जे. सोमैयासंस्कृतविद्यापीठम्
विद्याविहारः, मुम्बई-77

Scanned with OKEN Scanner

RNI No.	MAHSAN/2017/73496
ISSN No.	2457-0729
मुद्रक:	प्रो. प्रकाशचन्द्र:
प्रकाशक:	प्रो. प्रकाशचन्द्र:
स्वामिन: नाम	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालय:) (भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्) क. जे. सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, विद्याविहार: (पूर्व:), मुम्बई, महाराष्ट्रम् - 400 077
मुद्रणम्	वन्दना आर्टस्, बी-56, भूमितलम् स्टेशन प्लाझा, स्टेशन रोड, भाण्डुपम् (पश्चिमम्), मुम्बई - 400 078, महाराष्ट्रम्, भारतम् ।
प्रकाशनम्	राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम् (मानितविश्वविद्यालय:) (भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनम्) क. जे. सोमैया संस्कृतविद्यापीठम्, विद्याविहार: (पूर्व:), मुम्बई, महाराष्ट्रम् - 400 077
अङ्क:	प्रथम:
अनुवृत्तय:	100
प्रकाशनसमय:	दिसम्बर, 2017
संपादक :	**प्रो. प्रकाशचन्द्र:**
सम्पादकमण्डलम्	**प्रो. प्रकाशचन्द्र:**, विभागाध्यक्ष:, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।
	प्रो. बोधकुमारझा:, आचार्य्य:, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।
	श्रीसुभाषचन्द्रमीणा, सहायकाचार्य्य, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।
	डॉ. माधवदत्तपाण्डेय:, संविदाध्यापक:, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।
	डॉ. नवीनकुमारमिश्र:, संविदाध्यापक:, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।
	सुश्रीविदुषीबोल्ला, शोधप्रज्ञा, राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई ।

पुनर्वीक्षकमण्डलम्

- **प्रो. (श्रीमती) अर्चना दूबे,**
  श्रीसोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालय:, गुजरातम् ।
- **डॉ. दिलीपकुमारझा:,**
  कामेश्वरसिंहदरभंगासंस्कृतविश्वविद्यालय:,
  दरभंगा, विहार:, ।
- **डॉ. अशोकचन्द्रगौड:,**
  राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, गरलीपरिसर:, हिमाचलप्रदेश: ।
- **डॉ. प्रियव्रतमिश्र:,**
  श्रीरामसुन्दरविश्वविद्याप्रतिष्ठानम्,
  रमौली, दरभंगा, विहार: ।

मूल्याङ्कनकर्तृमण्डलम्

- **प्रो. मदनमोहनझा:**, आचार्य्य:, शिक्षाशास्त्रविभाग:,
  राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई, महाराष्ट्रम् ।
- **डॉ. देवदत्तसरोदे**, सहायकाचार्य्य:, शिक्षाशास्त्रविभाग:,
  राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मुम्बई, महाराष्ट्रम् ।
- **डॉ. रा. गा. मुरलीकृष्ण:**, सहायकाचार्य्य:,
  राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली ।
- **डॉ. मधुकेश्वरभट्ट:**, सहायकाचार्य्य:,
  राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, नवदेहली ।

Printed by Prof. Prakash Chandra, Published by Prof. Prakash Chandra on behalf of Rashtriya Sanskrit Sansthan (Deemed University), Under MHRD, Govt. of India, K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeetham, Vidyavihar (E), Mumbai, Mahrashtra - 400 077 and Printed at Vandana Arts B-56, Ground Floor, Station Plaza, Station Road, Bhandup (West), Mumbai - 400 078, Maharashtra, India and Published at Rashtriya Sanskrit Sansthan (Deemed University), Under MHRD, Govt. of India, K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeetham, Vidyavihar (E), Mumbai, Maharashtra - 400 077, Editor Prof. Prakash Chandra.

Scanned with OKEN Scanner

प्रो. सुदेश कुमार शर्मा
प्राचार्य,
राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
(मानित विश्वविद्यालय)
(मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन)
क. जे. सोमैया संस्कृत विद्यापीठ,
विद्याविहार, मुम्बई - ४०००७७

Prof. Sudesh Kumar Sharma
Principal
RASHTRIYA SANSKRIT SANSTHAN
Deemed to be University
(Under MHRD, Govt. of India)
K. J. Somaiya Sanskrit Vidyapeeth
Vidyavihar, Mumbai - 400 077

RSKS/Mum./2017-18/

Date - 22.12.2017

शिवसङ्कल्पमस्तु

'महाभाष्यान्तं व्याकरणमि'ति शाब्दिकप्रेक्षावतां काचन धारणा । तयैव धारणया धीरधिषणेन विद्यापीठस्यास्य व्याकरणविभागेन दिवसद्वयव्यापिनीं राष्ट्रियसङ्गोष्ठीं समायोज्य तत्र कानिचन पाणिनीयसूत्राणि पातञ्जलमहाभाष्यात्मकेन मन्थानेन निर्मथ्य तदुत्थशब्दतत्त्वं कतिपयेषु शोधनिबन्धेषु समावेश्य 'वाग्वै ब्रह्म' इत्याख्यायां मूल्याङ्किकतराष्ट्रियशोधपत्रिकायामुपनिबध्य प्राकाश्यमानीयत इति महान् सन्तोषस्य विषयः । विशेषतः शब्दशास्त्रसौरभलोलुपानां शाब्दिक-मधुपानां कृते कस्मैचिदुत्सवाय स्ववसरं कल्पते वृत्तमेतत् ।

पत्रिकैषा शाब्दिकेभ्यः शिवाय भूयात् । शोधार्थिभ्यश्च मङ्गलाय वर्तिषीष्ट । कृतश्रमेभ्यः सम्पादकेभ्यः, प्रदत्तशोधलेखेभ्यो लेखकेभ्यश्च यशो वर्धिषीष्टेति सदाशिवं परमेश्वरं प्रार्थये ।

(प्रो. सुदेशकुमारशर्म्मा)
प्राचार्य्यः

Scanned with OKEN Scanner

सम्पादकीयम्

कौमुदी यदि ह्यायाति वृथा भाष्ये परिश्रमः ।
कौमुदी यदि नायाति वृथा भाष्ये परिश्रमः ॥

इत्याभाणकेन शाब्दिकानां मध्ये व्याकरणमहाभाष्यस्य दुर्बोधं महत्त्वं पञ्चमाह्निकपरीकृता राष्ट्रियां शोधसङ्गोष्ठीं विधाय, संस्थेयं वैयाकरणविद्वत्संग्राहकम्, शोधनिबन्धेषु सामवताख्य 'चार्वी प्रज्ञा' इत्यभिधेयया पुस्तकरूपाविष्कृतशोधपत्रिकया शब्दशास्त्रे समुपस्थापयतामस्माकं बुद्धिरियमेव ते पूर्वाचार्याः व्याख्यानमवलोकयन्त्विति । महाभाष्यं नाम गभीरं रत्नाकरत्वं धत्ते यत्र भर्तृहरिकैयटनागेशादयो धीवराः व्याख्यासामर्थ्यानुगुणं रत्नानि बहूनि यद्यपि समुद्दध्रुः, तथापि वर्तते इदानीमपि महानवकाशः शोधार्थिनामिति नो दृढोऽयं विश्वासः।

अत्र सोमनाथसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य कुलपतीनामाचार्यप्रवराणामर्कनाथचौधरीवर्याणां शोधलेखः सौभाग्यादुपलब्धोऽपि प्रकाशित इति पत्रिकाया अस्या महते गौरवाय । अथ च सङ्गोष्ठ्यां समुपस्थापितशोधलेखानामाचार्याणां, शोधार्थिनां, व्याकरणशास्त्रारण्यविहरणनिपुणानां शाब्दिकानां शोधनिबन्धा अपि शब्दशास्त्रशेमुषीं रोचयितुं सामर्थ्यं दधतीति भावयामः ।

आशास्महे, शोधपत्रिकेयं महाभाष्यस्यातिसाधारणमहत्त्वमद्यापि शतशः समुपलब्धेषु व्याख्यानग्रन्थेषु सत्स्वपि ख्यापयितुम्, गवेषणादुर्गमार्गगमनसामर्थ्यं निधापयितुम्, व्याकरण-शास्त्रीयपरिशीलनबुद्धिं विशदीकर्तुञ्च किमपि गुणमुपकुर्यादिति ।

सम्पादकपक्षतः

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषयः	लेखकः	पृष्ठाङ्कः
1.	शब्देषु, शब्दौ वा ? अथवा उभयम् ?	प्रो. अर्कनाथचौधरी	01
2.	'वृद्धिरादैच्' इतिसूत्रविमर्शः	प्रो. प्रकाशचन्द्रः	04
3.	'क्ङिति चे' ति सूत्रभाष्यविमर्शः	प्रो. बोधकुमारझाः	13
4.	कृदन्तविमर्शः	डॉ. दयासागरदासः	24
5.	व्याकरणमहाभाष्यदृष्ट्या 'वृद्धिरादैच्' सूत्रविमर्शः	डॉ.अशोकचन्द्रगौडशास्त्री	38
6.	महाभाष्यस्थः हलोऽनन्तराः संयोगः, इति सूत्रविचारः	प. सुभाषचन्द्रमीणा	43
7.	प्रगृह्यसंज्ञासूत्रविमर्शः	डॉ. माधवदत्तपाण्डेयः	46
8.	भाष्योक्तदिशा दाधा घ्वदाप्सूत्रविचारः	डॉ. नवीनकुमारमिश्रः	56
9.	भाष्यानुसारी 'वृद्धिरादैच्' सूत्रविमर्शः	सुश्रीविदुषीबोल्ला	65
10.	भाषाविज्ञानदृष्ट्या प्रयत्नविमर्शः	श्रीचेमटेसुरेशः	74
11.	'इको गुणवृद्धी' इत्यत्र इग्ग्रहणविचारः	श्रीमतीऋतम्भरापाण्डेयः	88
12.	महाभाष्यदृशा 'इको गुणवृद्धी' सूत्रविमर्शः	श्रीसत्यराजरेग्मी	95
13.	'तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्' इत्यस्मिन् सूत्रे सावर्ण्यविचारः	आ. पद्मराजरेग्मी	101
14.	महाभाष्ये शाबरभाष्ये च कृतः संज्ञाविचारः	श्रीधर अवधूतलोहोकरे	106
15.	बाह्यप्रयत्नविवेकः	कु. मुग्धा चन्द्रकान्तदाते	110
16.	महाभाष्यदृशा 'इको गुणवृद्धी 'इति सूत्रविमर्श	श्रीसर्वेशकुमारतिवारी	113
17.	'न धातुलोप आर्धधातुके' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	सुश्रीबिन्दुहासिनीमिश्रः	117
18.	'ईदूदेद्द्विवचनं प्रगृह्यम्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	सुश्रीआशा छेडा	119
19.	'ष्णान्ता षट्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीश्यामकिशोरपाण्डेयः	123
20.	'बहुगणवतुडति संख्या' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीचन्द्रमापौड्यालः	126
21.	'निपात एकाजनाङ्' इति सूत्रभाष्यविमर्शः	श्रीउमेशत्रिवेदी	130

Scanned with OKEN Scanner

भाष्योक्तदिशा 'दाधा घ्वदाप्' सूत्रविचारः

डॉ. नवीनकुमारमिश्रः

आसन्नं ब्रह्मणस्तस्य तपसामुत्तमं तपः।
प्रथमं छन्दसामङ्गं प्राहुर्व्याकरणं बुधाः॥ वा.प.-११
तद्द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम् ।
पवित्रं सर्वविद्यानामधिविद्यं प्रकाशते ॥ वा.प.-१४

समस्तमुनिमनुजवृन्दवृन्दारकवन्दनीयपादारविन्दस्य भगवतः शिवस्य विश्वकर्मान्वयावर-वश्याद् संसारचक्रे अवतीर्णस्य क्रतुक्रियाकाण्डशौण्डस्य शलङ्कनाम्नः महर्षेः वंशे उपवर्षाचार्य-नाम्नः विद्यावंशे चोत्पन्नः वाणीसूनुः विद्वन्मण्डललब्धप्रतिष्ठः धीमान् अनूचानः शुचिः सुकृती सत्यवादी विरञ्चिवर्चस्वानर्चनीयचरः ब्रह्मविद्ब्राह्मणः आचार्यपाणिनिः स्वाष्टाध्याय्यां प्रथमाध्यायस्य प्रथमपादे विंशतिसंख्यात्वेन दाधाघ्वदाविति सूत्रम् अपाठीत् । दाधा प्रथमाबहुवचनम्, घु इति प्रथमैकवचनम्, अदाप् प्रथमैकवचनमिति च्छेदः। दाश्च धाश्च इति दाधाः इतरेतरद्वन्द्वः, न दाप् (दाप् दैप् च) अदाप् नञ्तत्पुरुषः । दारूपाश्चत्वारः डुदाञ् दाने, दाण् दाने, दोऽवखण्डने, देङ् रक्षणे धारूपाश्च डुधाञ् धारणपोषणयोः, धेट् पाने धातवः दाप्दैपौ वर्जयित्वा घुसञ्ज्ञकाः भवन्ति यथा डुदाञ् दाने प्रणिददाति, दाण् दाने प्रणियच्छति, दोऽवखण्डने प्रणिद्यति, देङ् रक्षणे प्रणिदयते, डुधाञ् धारणपोषणयोः प्रणिदधाति, धेट् पाने प्रणिधयते इति । अदापिति किम् ? घुसंज्ञा अभावे दोदद्घोरित्यनेन ददादेशो न । घुसंज्ञाराहित्ये अच उपसर्गात्तरित्यनेन दाधातोः आकारस्य स्थाने तादेशो न । दाप् लवने दातं बर्हिः लूनमित्यर्थः, दैप् शोधने अवदातं मुखं ? शुद्धमित्यर्थः । अथेदानीं दाधासूत्रे प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् ।

घुसंज्ञायां प्रकृतिग्रहणं शिदर्थम्

घुसंज्ञासूत्रे प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । दाधाप्रकृतयोः (दाश्च धौ च प्रकृतयः द्वन्द्वसमासः) घुसंज्ञा भवन्तीति वक्तव्यम् । संज्ञेयम् स्वतः आत्वभूतानामेव न तु अनात्वभूतानाम् । भूयिष्ठानि घुसंज्ञाकार्याणि आर्धधातुके परे तत्र एते आत्वभूताः धातवः दृश्यन्ते । तद्यथा डुदाञ् दाने, दाण् दाने, डुधाञ् धारणपोषणयोः । शिदर्थं प्रकृतसूत्रे प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । शिति आदेच उपदेशेऽशिति 6.1.45 इति सूत्रेण शिति आत्वं प्रतिषिद्ध्यते । तत्र लटि भ्वादौ शप्, दिवादौ श्यन्

प्रत्ययविहिते । प्रणिदयते प्रणिद्यति प्रणिधायतीति । तर्ह्यत्र शिति परे नात्वम्, अनात्वे आत्वरहिते दोदेङ्धोटां दाधारूपहीने घुसंज्ञाविरहात् नेर्गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तियातिवातिद्रातिप्साति-वपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च 8.4.17 इत्यनेन लक्षणेन उपसर्गनस्य णत्वप्रवृत्तिरभावः। तर्हीदं भारद्वाजशिष्याः पठन्ति – **घुसंज्ञायां प्रकृतिग्रहणं शिद्विकृतार्थम्**

दाधासूत्रे घुसंज्ञायां प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । शिदर्थं विकृतार्थञ्च । पूर्वस्मिन्वार्त्तिके शिदर्थमुदाहृतम् । अधुना विकृतार्थ दोदेङ्धोटां तृचि आदेच उपदेशेऽशिति इति सूत्रेण कृतात्वे प्रणिदाता प्रणिधाता । इह कृतात्वरूपविकृतार्थं प्रकृतसूत्रे प्रकृतिग्रहणप्रयोजनम् । तदभावे दोदेङ्धोटां न घुसंज्ञा नैव नेर्गदनद. इति सूत्रेण नीत्यस्य णत्वं भवति ।

किञ्च लक्षणेन ये आत्वभूतास्तेषां घुसंज्ञाप्रतिषिध्यते । तत्कथम् ? लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् । परि.114

लक्षणं लाक्षणिकप्रयोगे, तत्तद्विभक्तिविशेषाद्यनुवादेन विहित समासादि प्रतिपदोक्तः सूत्रकृतः लाक्षणिकः तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् । न तु दोदेङ्धोटां आत्वभूतानाम् । लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् इति परिभाषास्वीकारे दाधासूत्रे प्रकृतिग्रहणेन द्वयोः शिदर्थविक्ततार्थयोः कथं घुत्वं भवेत् ?

यदि ज्ञायते दाधाः प्रकृतयः कर्मधारयसमासे स्वतः आत्वभूताः दाण् दाने, डुदाञ् दाने, डुधाञ् धारणपोषणयोः एतेषामेव धातूनां घुसंज्ञा स्युरिति । इदानीमपि सा शङ्का तदवस्थापन्ना एव । तर्हि दाधां प्रकृतयः षष्ठीतत्पुरुषसमासे अनात्वभूतानामेव घुसंज्ञा स्युः । स्वतः आत्वभूतानां धातूनां दाण् दाने, डुदाञ् दान, डुधाञ् धारणपोषणयोः न । एवम्तर्हि नैवं विज्ञायते दाधाः प्रकृतयः, नापि दाधां प्रकृतय इति । द्वयोः आत्वानात्वभूतयो कथं घुत्वमिति चेत् दाधा घुसंज्ञा भवन्ति प्रकृतयश्चौषामिति । तत्तर्हि सामान्येन उभयोः घुसंज्ञाविधानार्थं प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । न कर्त्तव्यम् । प्रकृतिग्रहणरहितेऽपि घुसंज्ञा भवति । तत्कथमिति चेदुच्यते ईदूतौ च सप्तम्यर्थे (सप्तम्यर्थे पर्यवसन्नमीदूदन्तं प्रगृह्यं स्यात् । सोमो गौरी अधिश्रितः, अध्यस्यां मामकी तनू (मामक्यम्, तन्वाम् इत्यादौ सुपां सुलगितिशास्त्रेण लोंप))। इत्यस्माच्छुत्रत् दाधाघ्वदाप्सूत्रे अर्थग्रहणमनुवर्त्तते । ततः दाधा घ्वदाप् अर्थे इति । प्रकृतसूत्रे अर्थग्रहणात् वाक्यद्वयलाभः- दाधाघुसंज्ञकौस्तः, दाधार्थे दोदेङ्धोटां घूसंज्ञा स्यात् । एवं कर्त्तुमशक्यम् । दाधार्थग्रहणे राति, साति रासति दासति महति प्रीणातिप्रभृतीनां ददातिना समानार्थकत्वात् एतेष्वपि घुसंज्ञापत्तिः नेर्गदनदपतपदघुमास्यति. सूत्रे प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । प्रकृतिग्रहणापत्तेश्च । अस्तु तावत् मार्थं नेर्गदनदपतपदघुमास्यति. सूत्रे प्रकृतिग्रहणं कर्त्तव्यम् । घुमा अमू अन्तरा प्रकृतिग्रहणम् प्रणिमयते प्रण्यमयतेत्येवमर्थम् इत्यादौ नस्य णत्वविधातुम् ।

Scanned with OKEN Scanner

उभयान्वयी स्यात् । यथा मे प्रणिदाने इति स्थाने माधतोर्ग्रहणं स्यात् । प्रकृतिग्रहणफलेन उभयोः आत्वानात्वयोः घुसंज्ञा स्यात् । एवमकृतेपि प्रनिमीनोति प्रनिमीनाति (मिञ् मीञ्) इत्यादौ मिनोतिदीङां ल्यपि च इति सूत्रेण आत्वे कृते नेर्गदनदपतपद. इत्यादिना णत्वप्राप्तिः । नेर्गदनदपतपदेति सूत्रे प्रकृति ग्रहणाभावेऽपि प्रनिमाता प्रनिमातुम् प्रनिमातव्यम् इत्यादौ नेर्णत्वं कुता न ? माङः ङित्वात् । प्रनिमाता प्रनिमातुम् प्रनिमातव्यम् इत्यादौ माङः मादेशो न, मिञ् मीञ् धातुपरत्वात् णत्वमपि न भवति । प्रनिमिनोति प्रनिमीनाति इत्यादावपि मेङ् प्रणिदाने कृतात्वे माङनिष्पन्ने माङ्धातुभिन्नत्वात् णत्वप्रतिषेधः । विकृतार्थमपि प्रकृतिग्रहणं न कर्त्तव्यम् । प्रणिदाता प्रणिधाता इत्यादौ लक्षणप्रतिपदोक्तपरिभाषाया अप्रवृत्तौ । गामादाग्रहणेष्वविशेषः परि.115 यत्र गामादाधातूनां ग्रहणं विद्यते तत्र लक्षणप्रतिपदोक्तयोः कस्यपि सामान्यरूपेण ग्रहणं भवति । अदाप् प्रतिषेधार्थं दैपः पित्वमत्र ज्ञापकम् । इति अविशेषात् ।

विशेषः कृ अनुदात्तौ सुप्पितौ 3.1.4 सुपः पितश्च प्रत्ययाः अनुदात्ताः । दृपदोषौ इति । इह पित्प्रत्ययस्यानुदात्तस्वरविधानम् करोति । न तु दैपः पित्करणप्रयोजनम् । प्रकृतौ अदाबित्यनेन दैपः प्रतिषिध्यते घुसंज्ञामपि न प्राप्यते । दादैपोः नास्ति घुसंज्ञा । पित्करणं व्यर्थम् । गामादाग्रहणेष्वविशेषः परि.115 यत्र गामादाधातूनां ग्रहणं विद्यते तत्र लक्षणप्रतिपदोक्तयोः कस्यपि सामान्यरूपेण ग्रहणं भवति । अदाप् प्रतिषेधार्थं दैपः पित्वमत्र ज्ञापकम् । पित्वज्ञापनादत्र दाधाघ्वदाप्सूत्रप्रसङ्गे घुसंज्ञायां लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् परि.114 लक्षणं लाक्षणिकप्रयोगे, तत्तद्विभक्तिविशेषाद्यनुवादेन विहित समासादि प्रतिपदोक्तः सूत्रकृतः लाक्षणिकः तयोः प्तिपदोक्तस्यैव ग्रहणम् । निरनुबन्धकग्रहणे न सानुबन्धकस्य ग्रहणम् परि. 82 इति उभे द्वे परिभाषे नानुष्ठीयेते । तेन धोट्धा सानुबन्धकानां ग्रहणम् आहोस्विद् दोदद्घोरिति सूत्रे 7.4.46 दः इत्यस्यग्रहणं धोटः घुसंज्ञायाः ज्ञापको भवति । यतोहि दाधेत्यत्र दामात्रस्य घुसंज्ञा न तु धा इत्यस्य।

समानशब्दप्रतिषेधाः –

प्रनिदारयति प्रनिधारयतीत्यादौ दृङधृङ आदरेऽवस्थाने च । दृङ् णिच्वृद्धौ रपरत्वे दारि धारि दाधारूपावितौ अर्थवन्तौ, समानशब्दानां प्रतिषेधो वक्तव्यः । अतः प्राप्तघुसंज्ञायाः प्रतिषेधः । **समानशब्दप्रतिषेधोऽर्थवद्ग्रहणात्**

न च समानशब्दानामप्रतिषेधः अर्थवत्वात् प्रनिदारयति प्रनिधारयतीत्यादौ घुसंज्ञावक्तव्यम् । अर्थवद्ग्रहणे नानर्थकस्य ग्रहणम् परि.14 – अर्थवच्छब्दस्वरूपस्य ग्रहणसंभवे अनर्थकशब्दस्य ग्रहणं नोचितम् । इति परिभाषाज्ञापनात् । उरण् रपरः पा.अ.1.1.51 अण्विषये सूत्रमिदं विधीयमान

एव रपरत्वे कृते वृद्धौ (दृङधृङ) दारि धारि समुदास्यार्थवत्त्वं नत्वेकदेशावयवदाधामात्रस्य । दाधारूपावर्थवत्त्वाभावेन घुसंज्ञायां नास्ति विनिगमकत्वम् । अतः वार्त्तिकमिदं व्यर्थम् ।

अनुपसर्गाद्वा

उपायान्तरम् उपसर्गरहिते घुसंज्ञाणत्वमुभयमपि न भवति । प्र परा इत्यादि सोपसर्गक्रियावचकाद्धातुना सह ये ते उपसर्गसंज्ञकाः भवन्ति । प्रनिदारयति प्रनिधारयतीत्यादौ प्र नि धा धातुना क्रियावाचकेन सह अयोगात् नेर्गदनदपत्पद इत्यादिना न णत्वं नैव घुसंज्ञाविधानम् । दारि दापि धारि धापि इत्यत्र णिचि अर्त्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ पा.अ.7.3.36 इत्यनेन पुकि उपसर्गरहिते समुदायस्यार्थवत्त्वे दामात्रस्य अनर्थवत्त्वे दाधाघ्वदाविति सूत्रेण न घुसंज्ञा स्यात्।

न वार्थतो ह्यागमस्तद्गुणीभूतस्तद्ग्रहणेन गृह्यते

अर्थवत आगमस्तद्गुणीभतोऽर्थवद्ग्रहणेन गृह्यते । यथान्यत्र दारि, धारि इत्यादौ यदागमस्तद्गुणीभूतास्तद्ग्रहणेन गृह्यन्ते परि.।। यमुद्दिश्यागमो विहितः तद्गुणीभूतः शास्त्रेण तद-वयवत्वेन बोधितोऽतद्ग्रहणेन ग्राहकेन बोधकेन गृह्यते बोध्यते आगमविशिष्टः । तेन दारि धारि दापि धापीत्यादौ रफेपकारविशिष्टानां ग्रहणे न दोषः।

लविता चिकीर्पितेत्यादौ (लू इ तृच्) आर्धधातुकस्येड्वलादेः 7.2.35 इतीडागमे इह तृचः इडावयवे तृजा इड्ग्रहणं न तस्य बाधकम् । एवमेव प्रणिदारयति, प्रणिदापयति, प्रणिधारयति, प्रणिधापयति । फलतः दाप् धाप् दारि धारि धातूनां दाधरूपं मत्वा घुसंज्ञा स्यात् । युक्तं पुनर्यन्नित्येषु नाम शब्देष्वागमशासनंस्यात्? तन्न । नित्येषु नाम नित्यशब्देषुवागमविधानं नोचितम्, शब्दानां नित्यत्वे वर्णानां कूटस्थाविचाल्पायोपजन तथा विकाररहितः स्यात् । किंतु आगमस्तु अपूर्वः (उपजन वृद्धिभूतः) शब्दोपजनः। नित्येषु शब्देषु आदेशः युक्तः स्यात् । आदेशे तु एकस्य स्थाने अपरस्य ज्ञानमुचितमेव । आदेशास्तर्हीमे भविष्यन्ति अनागमकानां स्थाने सागमकाः स्युः । इह उच्यते-

> सर्वे सर्वपदादेशा दाक्षीपुत्रस्य पाणिनेः।
> एकदेशविकारे हि नित्यत्वं नोपपद्यते ॥

अत्र विशेषः-

> नित्याशब्दार्थ सम्बन्धास्तत्रम्नाता महर्षिभिः ।
> सूत्राणां सानुतन्त्राणां भाष्याणाञ्च प्रणेतृभिः ॥ वा.प.२३
> पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च ।
> वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन ॥ वा.प.७३

Scanned with OKEN Scanner

अध्याहितकलां यस्य कालशक्तिमुपाश्रिताः ।
जन्मादयो विकाराः षड् भावभेदस्य योनयः ॥ वा.प.३

वैय्याकरणमते शब्दो नित्यः नित्यत्वञ्च -

कूटस्थमविचाल्यनपायोपजनविकार्यनुत्पत्त्यवृद्धयव्यययोगि यत्तन्नित्यम्। भाववोधिनीटीका अपायश्च उपजनश्च इति अपायोपजनौ तौ च विकारौ इति अपायोपजनविकारौ कर्मधारयसमासे तौ अस्य नित्यस्य स्तः मत्वर्थे इनिः अनपायोपजनविकारि तद्भिन्नम् नित्यम् । वृद्धिविकार - अपि अनुत्पत्ति, जन्म सत्ता विकार उपचयविकार परिणामरूपविकार अपचयविकार अव्यययोगिविकारः। यदि एकेन सह अपरस्य वर्णागमः मनुते तर्हि नित्यत्वं न भवति । अतः शब्दरूपस्य वृद्धिकृतं परिवर्तनं प्रकृति प्रत्ययकल्पना शास्त्रप्रक्रियानिर्वहणमात्रमेव दास्थाने दाब्बुद्धिः । सर्वपदादेशकार्यवत्तया प्रतीयमानं प्रकृत्यादिः अनेन सर्वेषां नित्यत्वम् ।

दीङः प्रतिषेधो स्थाघ्वोरित्वे-

स्थाघ्वोरिच्च 1.217 इति सूत्रेण स्थाघ्वोः इत्वे दीङः प्रतिषेधो कर्त्तव्यः । उपं आं दीं सिच् मीनातिमिनोतिदीङा ल्यपि च 6.1.50 इति सूत्रण दीङः इकारस्यात्वे दारूपप्राप्ते दाधाघ्वदाबित्यनेन घुसंज्ञा पुनः स्थाघ्वोरिच्च इत्यनेन आकारस्य इत्वे घुसंज्ञायाः प्रतिषेधः वक्तव्यः ।

उपादास्त उपा दी स् त इति दशायां सिचः अकित्वे मीनातिमिनोतिदीङ ल्यपि च 6.1.50 इति सूत्रेण दीत्यस्यात्वे दा कृते । यदि तत्र घुसंज्ञा भवति तर्हि पुनः आकारस्य इत्वे कित्वं स्यात् । किञ्च सन्निपातविरोधान्न कर्त्तव्यं सूत्रे प्रकृतिग्रहणम् सन्निपातलक्षणो विधिरनिमित्तं तद्विघातस्य परि. 86

सन्निपातो नाम द्वयोः सम्बन्धः। लक्षणं निमित्तम् । परस्परं सम्बन्धं निमित्तं मत्वा विहितं कर्म, तस्य सम्बन्धस्य विघातस्य निमित्तं न भवति अर्थात् विघातकः न । स्वोत्पत्तौ निमित्तरूपसम्बन्धिनः स्वोत्पत्यूत्तरं यः नैमित्तिकः उत्पन्नः निमित्तरूपसम्बन्धिनः विघातको न भवतीत्यर्थः । तत्र इत्वविधाने कथं दोषापत्तिः? तत्र समाधानम् कृदाधारूपौ इत्यादौ रूपग्रहणात् घुसंज्ञा इत्वप्राप्तिश्च ।

किञ्च उपदिदीषते इत्यत्र प्रकृतिगहणात् घुसंज्ञाप्राप्तिरूपदोषः । तत्र दीङः दाप्रकृतिरूपे सनिमीमाधुरमलभः 7.4.54 इत्यने अभ्यासलोपः आ इत्यस्य इसादेशः, सनि इको झल् इत्यनेन कित्वात् गुणो न दीङ्मात्रमेव नतु एज्विषयः । तदा दाप्रकृतिः दी इत्यस्य घुसंज्ञकत्वे सनिमीमा इत्यादिना अभ्यालोपे इसादेशप्राप्तिः । नास्ति दोषोऽयं दारूपप्रकृते घुसंज्ञा भवति । दीङ्स्तु दा प्रकृतिर्न । येषां धातूनाम् आत्वं विहितं तेषां दाप्रकृतिर्नास्ति किंतु ते एजन्तधातवः। एवम्हि प्रकृते

प्रकृति तस्य प्रकृतिग्रहणात् ग्रहणं नेष्यते । उपादिदीपतीत्यादौ दीङ् मन्, दी दी इत्यस्य प्रकृतिर्नास्ति किंतु दीङ् दे दाक्रमेण प्रकृतिरेजन्तस्य । अतः दीङः नास्ति घुसंज्ञा । सन्निपात-विरोधान्न दीङः घुसंज्ञा स्यादिति निषेधोऽत्र व्यर्थः।

दाप्प्रतिषेधो न दैपनेजन्तत्वात्

सूत्रे अदाबिति ग्रहणेन दैपः इत्यस्य प्रतिषेधो न । तेन दैप् शोधने इत्यस्यै घुसंज्ञा न तु दाप् लवने इत्यस्य । कृप्रत्यये परे अवदातं मुखमित्यत्र दैपः आत्वे दापि कृते घुसंज्ञा किन्तु अनात्वस्य दैप्धातोः नास्ति ।

आदेच उपदेशेऽशिति 6.1.45 इत्यनेन दैपः कृतात्वे प्राप्तघुसंज्ञायाः प्रतिषेधो आवश्यकः । अनेजन्तत्वात् दैप आत्वन्न । अतः दैपः दाप्त्वन्न स्यात् । अतएव अदाबिति प्रतेधा दाप् धातुमात्रस्यैव । तेन दैपः घुसंज्ञा अच उपसर्गात्तः 7.4.47 इत्यनेन त प्रत्ययः ।

सिद्धमनुबन्धस्याऽनेकान्तत्वात्

अनुबन्धस्यानेकान्तत्वात् । अनेकान्ता अनुबन्धाः परि. 4 अनेकान्ताः अनवयवाः इत्संज्ञा-योग्या, अनुबन्धाः बोधकानवयवो न भवन्ति । ततः दैपः अनेकान्तत्वात् अनवयवत्वात् आदेच उपदेशेऽशिति इति सूत्रेण कृतात्वे दाबरूपे घुसंज्ञासत्रे अदाबिति प्रतिषेधः चरितार्थः ।

पित्प्रतिषेधाद्वा-

प्रकारान्तरेण पित्प्रतिषेधेन दैपोऽपि प्रतिषिद्धः स्यात् । तर्हि दाधा घ्वपित् एवं ब्रूयात् । अदाबित्यनेन प्रणिदापयतीत्यादावपि घुसंज्ञाप्रतिषेधः प्रसक्तः । तदभावे नेर्गदनदपतपद इत्यादिना णत्वन्न । शक्यम हि अदाप् स्थाने बान्त अदाब् इति । तेन प्रणिदापयतीत्यत्र घुसंज्ञाप्रतिषेधाभावे णत्वं स्यात् । दाधाघ्वदाब आद्यन्तवदेकस्मिन् एवं सूत्रपाठः स्यात् । तथा कृते सूत्ररूपभेदात् अदाप् इत्येव साधुः । अदाप् प्रतिषेधे दैपः न प्रतिषेधः । न तथा -

अनेकान्ता अनुबन्धाः परि ४

अनेकान्ताः अनवयवाः इत्संज्ञायोग्या, अनुबन्धाः बोधकानवयवो न भवन्ति । एजन्तत्वात् आदेच उपदेशेऽशिति इति सूत्रेण कृते आत्वे दाप् रूपे न घुसंज्ञा । दैप् इत्यत्र पकारस्य न अवयवत्त्वम् । एकान्ताः परि.5

एकान्ताः अनवयवाः, अनुबन्धाः बोधकावयवाः भवन्ति । एकान्तपक्षे तु दैप् इत्यत्र पकारस्यावयवे अनेजन्तत्वात् आदेच उपदेशेऽशिति आत्वस्य प्राप्तिरेव नास्ति । पलोपे एजन्तत्वस्य आत्वे दामात्ररूपे भूतपूर्वगत्या दाबितिस्वीकारे अदाबित्यनेन प्रतिषेधाः चरितार्थः । ततः दैपः कृतात्वे न घुसंज्ञा ।

ननु सानुबन्धकग्रहणे भूतपूर्वगतिर्जायते अनुबन्धालोपस्तु निमित्ताभावे इत्संज्ञा अनुबन्धलोपश्च । अनुबन्धविषये सर्वत्र भूतपूर्वगतित्वात् इहापि दैप इत्यत्र पित्त्वं भवति ।

नानुबन्धाकृतमनेजन्तत्वम् परि.७

अनुबन्धकारणेन एजन्तत्वस्य न त्यागः । यथा अवदात्तमित्यत्र दैप् शोधने दैप् अत्र पकारानुबन्धासत्वेऽनेजन्तत्वात् आदेच: उपदेशेऽशिति इत्यनेन ऐकारस्य आत्वम् पानुबन्ध लोपोत्तरम् आत्वं भवति । एवमेव अवदत्तमित्यत्र अदाप् प्रतिषेधेन पलोपानन्तरमेव दाप् रूपत्वेऽपि घुसंज्ञालाभे अत्र उपसर्गात्तः 7.4.47 अजन्दुपसर्गात्परस्य दा इत्यस्य घोरचस्तः स्यात्तादौ किति । प्रत्तः - इति तादेशः । अतएव उदीचां माङो व्यतीहारे 3.4.19 इत्यत्र कारानुबन्धसहित कृतात्वदेशस्य माङ्धातोर्ग्रहणं विहितम् । प्रकारान्तरेणाप्याह-

अथवा दैपोऽपि दाबेव तत्कथम् अवदायतीत्यत्र एचोऽयवायावः इति सूत्रेण आयादेशे कृते सिद्धम् । यदि दैप् इत्येव स्यात्तर्हि आत्वे अवदातीति अनिष्टरूपापत्तिः । दैप् शोधने दाप् लवणे इति उभयमपि दिवादिगणे पठित्वा दिवादिभ्यः श्यन् इति श्यनि अवदाय्य अवदायति इति; जुमार्गः ।

विमर्शः

मेङ् प्रणिदाने इत्यत्रनुबन्धसत्वेऽपि न तस्य एजन्तत्त्वस्य बाधकम् । नानुबन्धाकृतमनेजन्तत्वम् परि.7 उदीचां माङो व्यतीहारे 3.4.19 सूत्रेऽस्मिन् मेङः स्थाने आत्वभूत माङः पाणिना पठितः । इदमेव नानुबन्धमनेझन्तपरिभाषायाः ज्ञापकम् । नोचेत् ङिदनबन्धसत्वे कथं तत्र मेङः आत्वं सम्भवति । तद्वदेव दैप् शोधने इत्यत्रपि पित्वेऽपि एजन्तत्वात् आदेच उपदेशेऽशिति इत्यनेन आत्वे कृते दापि अदाप् विधानात् घुसंज्ञायाः प्रतिषेधः । सूत्रे अदाप् कथनेन दाप्दैपो उभयोः घुसंज्ञा नास्ति ।

घुसंज्ञाफलम् -

1. घुमास्थासागापाजहातिसां हलि 6.4.66 एषामात इत्स्यात्त्रलादौ क्ङित्यार्धधातुके । दीयते धीयते ।
2. घ्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च 6.4.119 घोरस्तेश्च एत्वं स्याद्धौ परे अभ्यासलोपश्च । देहि धेहि ।
3. एर्लिङि 6.4.67 घुसंज्ञाकानां मास्थादीनाञ्च एत्वं स्यादार्धधातुके किति लिङि - देयात् धेयात् ।
4. गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु 2.4.77 एभ्यः सिचोर्लुक्स्यात् । अदात् अधात्

5. नेर्गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तीयातिवातिद्रातिप्सातिवपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च 8.4.17 उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य णोपदेशस्य धातोर्नस्य णत्वंस्यात् समासेऽसमासेऽपि । प्रणिददाति । प्रणिदधाति
6. स्थाघ्वोरिच्च 1.2.17 अनयोरिदादेशः स्यात् सिच्च कित्स्यात्तङि । अदात, अदित, अधात, अधित ।
7. ई हल्यघोः 6.4.113 श्नाभ्यस्तयोरात इत्स्यात्सार्वधातुके क्ङिति हलि न तु घुसंज्ञकस्य जहीतः अघोः किम् । दत्तः, धत्तः (घुसंज्ञायाम् इत्वन्न भवतीत्यर्थः)

सन्दर्भाः

1. वैयाकरणसिद्धान्तलघुमञ्जूषायाः भूमिकातः ।
2. वैयाकरणसिद्धान्तदिग्दर्शनम्, पं.वोधकुमारझाः ।
3. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी (मूलम्) ।
4. प्रौढनिबन्धसौरभम् पृष्ठ सं. ।
5. अष्टाध्यायी 1.1.20 ।
6. विद्यारश्मिः पत्रिका ।
7. सद्विद्या पत्रिका ।
8. हरिप्रभा पत्रिका ।
9. सांख्यकारिका ।
10. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी (दशगणीप्रकरणम्) ।
11. वाक्यपदीयम् पदकाण्डम् ।
12. नागेशगूढार्थदीपिका ।
13. काशिकावृत्तिः ।
14. परिभाषेन्दुशेखरः (दुर्गाटीकासहितः) ।
15. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, लक्ष्मीटीकासहितः ।
16. अद्भूतधातुरूपावली (पं.बोधाकुमारझाः) ।
17. परिभाषाचन्द्रिका ।
18. ज्ञापकसङ्ग्रहः ।
19. पं.श्रीनारायणमिश्रकृतपरिभाषाप्रकाशः ।

Scanned with OKEN Scanner

Scanned with OKEN Scanner